तिब्बत - एक बफर राज्य की विडम्बना
(दलाई लामा निर्वासन से वर्तमान तक)
१६५६ से वर्तमान तक

वर्ष - २००३

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की डॉक्टर आफ फिलॉसफी (राजनीति विज्ञान) की उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध प्रबन्ध
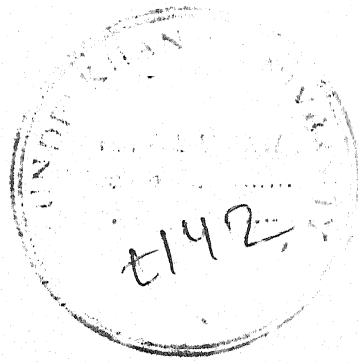
निर्देशक :-

डॉ० राजेन्द्र कुमार पुरवार
रीडर, राजनीति विज्ञान विभाग
दयानन्द वैदिक महाविद्यालय, उरई

प्रस्तुति

ऐश्वर्य रत्नम् पाण्डेय

प्राक्कथन :

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय में वर्ष–2003 में प्रस्तुत शोध प्रबंध "तिब्बत–एक बफर राज्य की विडम्बना" (दलाई लामा–निर्वासन से वर्तमान तक) एक मौलिक कार्य है । तिब्बती समस्या पर लिखित यह अनुसंधान कार्य विषय ज्ञान की ऐतिहासिक, वर्तमान एवं भविष्यगत स्थिति को स्वयं में समाहित किये हुए है। आशा है इस शोध कार्य के माध्यम से तिब्बती समस्या को नए आयामों मे देखने का प्रयत्न सफल होगा ।

इस कार्य को सम्पन्न करने मे मेरे गुरूजी एवं निर्देशक श्री (डॉ.) राजेन्द्र कुमार पुरवार जी एवं मैडम श्रीमती जयश्री पुरवार जी के प्रति मै ह्रदय से आभारी हूँ जिन्होंने अपने व्यस्ततम समय मे से आवश्यकतानुसार इस अनुसंधान कार्य के लिए समय उपलब्ध करवाया ।

इस कार्य को सम्पन्न करने में योगदान के सन्दर्भ मे सर्वोच्च स्थान मैं स्वर्गीय माता–पिता की आत्माओं का मानती हूँ जिनकी प्रेरणा से मैं, अकिन्चन इतना बड़ा दायित्व निभा सकी । इस सन्दर्भ मे मैं अपने परिवारी जनों के योगदान को अमूल्य मानती हूँ जिन्होंने मुझे समय व सहयोग देकर कार्य सम्पादित करने के लिए प्रोत्साहित किया ।

इस सन्दर्भ में उन समस्त तिब्बती जनों की मैं, आभारी हूँ जिन्होंने भारत में शरणार्थी का जीवन व्यतीत करते हुए भी इसे अपना देश समझा जिनकी परिस्थितियों से प्रेरणा पाकर मैं यह अनुसंधान कार्य सम्पन्न करने में सफल हुई ।

अन्त में श्री राजेश गुप्ता जी एवं दीपक धाकड़ जी (गुप्ता फोटो स्टेट एवं टायपिंग)के प्रति आभारी हूँ जिन्होंने समयानुसार टंकण हेतु अपना सहयोग प्रदान किया ।

प्रस्तुत अनुसंधान कार्य सुधी पाठकों के लिए समर्पित है। उनके द्वारा की गई आलोचना का स्वागत है ।

भवदीया

ऐश्वर्य
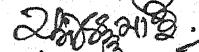
ऐश्वर्य रत्नम् पाण्डेय

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि प्रस्तुत शोध कार्य, "तिब्बत एक बफर राज्य की विडम्बना (दलाई लामा-निर्वासन (सन् 1959) से वर्तमान तक)" बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय से संबद्ध दयानन्द वैदिक महाविद्यालय, उरई में पंजीकृत है । यह शोधकार्य मौलिक है तथा शोधार्थी ने समय-समय पर दो सौ दिन तक व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होकर निष्ठा के साथ इस अनुसंधान कार्य को सम्पन्न किया है ।

दिनांक : 12/12/03

निर्देशक
[signature]
डॉ. राजेन्द्र कुमार पुरवार
रीडर राजनीति विज्ञान विभाग
दयानंद वैदिक महाविद्यालय, उरई
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय

प्रमाण-पत्र

यह स्वप्रमाणित किया जाता है कि प्रस्तुत शोधकार्य "तिब्बत एक बफर राज्य की विडम्बना (दलाई लामा-निर्वासन (सन् 1959)से वर्तमान तक)" मेरे संज्ञानानुसार मौलिक है यद्यपि यत्र-तत्र संदर्भ ग्रन्थों का आश्रय लिया गया है ।

दिनांक : 9/12/03

भवदीया

ऐश्वर्य

ऐश्वर्य रत्नम् पाण्डेय

तिब्बत – एक बफर राज्य की विडम्बना
(दलाई लामा निर्वासन से वर्तमान तक)
1959 से वर्तमान तक

अनुक्रमणिका

भूमिका

भूमिका

तिब्बत की भौगोलिक अवस्थिति

संसार की छत, रहस्यात्मक भूमि एवं पवित्र धरा के नाम से अभिहित वर्तमान तिब्बत २७ डिग्री उत्तरी अक्षांश तथा ३७ डिग्री उत्तरी अक्षांश तथा ७९ डिग्री पूर्वी देशांतर तथा ९९ डिग्री पूर्वी देशांतर के मध्य अवस्थित एक प्राचीन राज्य है । प्राचीन काल में "Bod-Yul" नाम से विख्यात यह राज्य कालान्तर में "Bo-th," "To-both," "Tu-both," "Ti-both," "Tabet" के तद्भव रुपों में परिवर्तित होता हुआ वर्तमान "Tibet" के नाम से जाना जाता है।[1] तिब्बत शब्द का आरम्भिक उल्लेख अरबी, Istakhri लेखन (लगभग ५९० A.D.) में "Tobbat" के रुप में मिलता है ।[2]

तिब्बत राज्य का मध्य भाग समुद्र तट से १२ हजार से १६ हजार फीट की उंचाई पर स्थित है । इसकी पूर्वी सीमा पर चीनी प्रांत Szchewan अवस्थित है । दक्षिण में इसकी हिमालयी सरहदें लम्बाई में लगभग १५०० मील की है जो भारत, भूटान, नेपाल को स्पर्श करती है ।एक ओर जहाँ यह भूमि संसार की अनेक विख्यात नदियों जैसे Yangtze, Brahamputra, (Sang-Po) Salween, Mekong, Karmali, Kali, Gandak, Dihang, Sabansire, Irawati का उद्गम एवं प्रवाह क्षेत्र है वहीं इसकी दक्षिणी सीमा समुद्र तट से कई हजार फीट की ऊंचाई पर स्थित पर्वतीय दर्रों से युक्त है ।

---

१. चौपड़ा, पी. एन. - "सोशल, कल्चरल एण्ड पालीटिकल हिस्ट्री आफ टिबेट"। पृ.१ से ७, क्रायटेरियन पब्लिकेशन, नई दिल्ली १९८९

२. सर बैल चार्ल्स - "टिबेट पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट" । पृ. १२ बुक फेथ इंडिया दिल्ली वर्ष - १९९८

तिब्बत की पश्चिमी सीमा पर भारतीय क्षेत्र के कश्मीर, अक्साई चिन, लद्दाख इत्यादि क्षेत्र स्थित है तो उत्तर में कराकोरम, कुएन–लुन, तांग–ला, अल्त्यू–टांग इत्यादि का फैलाव है । इसकी उत्तरी सीमा श्रेणियों के माध्यम से सिक्यांग का स्पर्श करती है । उत्तरी पूर्वी सीमा चीनी प्रांत कान्सु से जुड़ती है । तिब्बत के सीमा निर्धारण के संदर्भ में रोचक तथ्य यह है कि सीमा निर्धारण में वे प्राय प्रचलित पर्वतों व नदियों की सीमाओं को महत्व न देकर वनों को महत्व देते है । तिब्बत, भूटान तथा सिक्किम के परस्पर सीमावर्ती क्षेत्र में 'उच्च – भूमि वृक्ष – निम्न भूमि वृक्ष' के नाम से जाना जाता है । पाइन के वन तिब्बतियों के याक व भेड़ों के लिए उत्तम चारागाह है जबकि बांस वन भूटानियों की सामान्य आवश्यकताओं को पूरा करते है । ध्यातव्य है कि इस प्रकार का सीमा निर्धारण, सीमा निर्धारण के पश्चिमी तरीके से पूर्णतया भिन्न है जिसमें उच्च पर्वत श्रृंखलाओं को सीमा मानकर मानचित्र में स्पष्टतया अंकित किया जाता है । तिब्बत और उत्तरी सीमा के मध्य इस प्रकार का अस्पष्ट सीमा निर्धारण भारत में ब्रिटिश राज्य के दौरान तत्कालीन तिब्बत व ब्रिटिश राज्य के मध्य विवाद का प्रारंभिक कारण बना था । इस विवाद ने कालान्तर में तिब्बतियों के 'लिंग्टू' पर दावे को प्रभावित किया जो अंततः 1888 के 'सिक्किम अभियान' तक अग्रसर हुआ ।

तिब्बत का बर्फीला, दुर्गम और एक तरह से कटा हुआ स्वरूप उसे शेष विश्व के लिए अबूझ रूप प्रदान करता है । उत्तरी तिब्बत की भौगोलिक स्थिति उसे निर्जन, एकांत स्वरूप प्रदान करती है । हिन्दू किंवदन्तियों में भगवान शिव का निवास स्थल कैलाश पर्वत तिब्बती राजधानी ल्हासा के दक्षिण पश्चिम में लगभग 800 मील की दूरी पर समुद्र तल से लगभग 22028 फीट की ऊंचाई पर स्थित है । विश्व की प्रथम झील मान सरोवर इसके निकट ही स्थित है । 13000 से 15000 फीट की ऊंचाई पर उबलते पानी के चश्मे तिब्बत की अपनी खासियत है ।

तिब्बत के समूचे क्षेत्र को तीन प्रांतों में विभाजित किया गया है – उत्तर–पूर्वी–आम्डो, मध्यवर्ती उल–ट्सांग तथा पश्चिमी तिब्बत । उत्तर – पश्चिम में तिब्बत तथा सिक्यांग या चीनी पूर्वी तुर्किस्तान के मध्य सीमाएं 'कुएनलन श्रृखंला में लेक लाइटेन के करीब 35 डिग्री से 30 डिग्री उत्तरी आक्षांश व 80 डिग्री से 30 डिग्री पूर्वी देशांतर के मध्य से आरंभ होकर पूर्वी दिशा के जल प्रपात तक लगभग 90 डिग्री से 30 डिग्री पूर्व तक आती है जहॉ यह कुएनलन श्रृखंला को छोड़कर उत्तर की तरफ अनियमित रेखा बनाती हुई Tsai-dam बेसिन के पश्चिम तक आती है, यहॉ से यह Altyn-tagh के बेसिन तक जाती है । यहॉ से पुनः पूर्व की ओर Nan-shan

पर्वतों की भूल भूलैया में लगभग 101 डिग्री पूर्व की ओर घूमती हुई Dankyr (Tangar) के पश्चिम तक कोको–नोर लेक तथा साइनिंग के मध्य तक आती है । सीमा के उत्तरी किनारे के निकट किसी स्थान पर (94 डिग्री – 30 डिग्री पूर्व) की ओर कोकोनोर डिस्ट्रिक्ट तुर्किस्तान के साथ सीमा बनाता है । कान्सु के निकट सीमा रेखा पुनः अपरिभाषित हो जाती है । Tsai-dam तथा कोकोनोर इलाके चीन तथा तिब्बत के मध्य विवादास्पद क्षेत्र है ।

Donkyr के निकट से सीमा रेखा सामान्यतः दक्षिण और दक्षिण पूर्वी दिशा में लगभग 28वें समानान्तर तक जाती हुई तिब्बत को कान्सु, सेचुआन तथा युन्नान से पृथक करती है । (Der-ge, Cham-do, Tra-ya, Mangkam इत्यादि पूर्णतया तिब्बती नियंत्रण में तथा Amdo, Go-Lok, Nya-rong, Ba-tang , Li-tang इत्यादि विवादास्पद क्षेत्र है।

पश्चिम की ओर सालवीन नदी को पार करते हुए 28 डिग्री से 20 डिग्री उत्तर में तिब्बत व बर्मा के मध्य प्रथम बार परिभाषित सीमा निर्धारित की गई । दूरस्थ पश्चिम में तिब्बत की असम के साथ सीमाएं ब्रम्हपुत्र नदी के साथ निर्धारित होती है । तत्पश्चात सीमा हिमालय पर्वत श्रृखंला द्वारा निर्धारित होती चलती है । भारत में ब्रिटिश राज्य के दौरान असम अपनी उत्तरी सीमा पर जंगली जनजातियों जैसे – मिशमिस, अबोर्स इत्यादित से घिरा था ये जनजातियाँ ब्रिटिश नियंत्रण के बाहर स्वायत्ता की स्थिति में थी । पश्चिम की तरफ भारतीय मैदान व हिमालय श्रृखंला के मध्य विस्तृत भूटान है जिसके साथ साथ तिब्बती सीमाएं आगे बढ़ जाती है । तिब्बत व सिक्किम के मध्य तीस्ता जल विभाजक सीमा रेखा है । दूरस्थ पश्चिम में तिब्बत व नेपाल के मध्य पुनः हिमालयी श्रृंखलाएं सीमाएं विनिर्मित करती है । तिब्बत की पश्चिमी सीमाएं भारत के कुमॉऊ क्षेत्र के साथ लगी हुई है । अल्मोड़ा तथा गढ़वाल से होते हुए ये सीमा रेखा सामान्यतया उत्तर पश्चिम सीमा से होती हुई जास्कर रिज तक पहुंचती है । टिहरी के पर्वतीय इलाके तक पहुँचकर ये सीमा रेखा उत्तरी झुकाव लेती हुई सतलज को शिप–की पर काटती हुई तिब्बत में Dankar तथा कश्मीर में Karak व Hanle को छोड़ती हुई अनियमित उत्तरी दिशा में आगे बढ़ जाती है। यह सीमा रेखा सिंधु को Demchok (33 डिग्री उत्तर) के नीचे लगभग 25 मील पर पार करती है तथा झीलों की पेगोंग श्रृखंला को लगभग 79 डिग्री पूर्व पर काटती है तथा पश्चिमी नदियों के बेसिनों के किनारे – किनारे होती हुई उत्तर पूर्वी दिशा से होकर तुर्किस्तान की सीमाओं से मिल जाती है ।

1792 ई. में नेपाल पर हुए चीनी आक्रमण तक सिक्किम (अलग राज्य के रूप में) चुम्बी घाटी पर अपने कब्जें का दावा करता रहा परंतु इतिहास साक्षी है कि सिक्किम सदैव कुछ न कुछ खोता रहा । चार्ल्स वेल के मत में कश्मीरी लद्दाख भूटान का राज्य मूलतः तिब्बती है । इसी तरह दार्जिलिंग का ब्रिटिश क्षेत्र मूलतः तत्कालीन सिक्किम और भूटानी परिक्षेत्र में था । और इस प्रकार मूल रूप से तिब्बत का ही वैध हिस्सा था परन्तु अनेक वर्षो के ब्रिटिश प्रशासन ने इसे ऐसा परिवर्तित किया कि इसकी अधिसंख्य जनसंख्या नेपालियों की हो गयी और यह ब्रिटिश तथा भारतीय हितों का संपूरक बन गया । चार्ल्स वेल का मत है कि मूल रूप से तिब्बत का क्षेत्र 7 से 8 सौ हजार वर्ग मील का है जो इंग्लैण्ड, स्कॉटलैण्ड, तथा आयरलैण्ड के संयुक्त परिक्षेत्र से सात गुना है तथा यदि बर्मा तथा ब्रिटिश राजकालीन भारत से उसकी रियासतों का क्षेत्र अलग कर दिया जाये तो 'तिब्बत' भारतीय परिक्षेत्र की तुलना में अधिक विस्तृत है ।[1]

तिब्बत की भौगोलिक स्थिति उसे अन्य पड़ोसी राज्यों से पृथक करती है जो उसकी तटस्थता को मजबूत बनाती है परंतु साथ ही वर्तमान भू–मण्डलीकरण के युग में शेष विश्व से उसका अलगाव उसे कूटनीतिक मंच पर कमजोर बना देता है । यह भी एक तथ्य है कि इसके लिये महज तिब्बत की भौगोलिक स्थिति ही उत्तरदायी नहीं है अपितु तिब्बतियों की मानसिक विचारधारा उनका जीवन दर्शन (जिसमें धर्म को अतिशय महत्व दिया जाता है) भी इसके लिए बहुत हद तक जिम्मेंदार है । तिब्बत के भौगोलिक विस्तार के मद्दे नज़र उत्तरी मध्य तथा पूर्वी दक्षिणी भागों की जलवायु में विविधता पायी जाती है । उत्तरी तिब्बत अधिक ठण्डा व कठोर तथा पूर्वी व दक्षिणी क्षेत्र अपेक्षाकृत सामान्य जलवायु क्षेत्र हैं । औसत वार्षिक वर्षा 10'' से 18'' हुआ करती है । शीतकाल नवम्बर से फरवरी तक रहता है । जलवायु की विविधता का हाल यह है कि 1200 फीट की ऊंचाई पर सर्दी व गर्मी के तापमान में क्रमशः 50 डिग्री फारेन हाईट व 80 डिग्री फारेन हाईट का अंतर पाया जाता है ।

तिब्बती वनस्पतियों में जंगली फल–फूल, मशरूम, औषधीय पौधे, ओक, बिलो, साइप्रस, पाइन, फर, मैपल, वालनट इत्यादि है । प्रमुख तिब्बती पशु पाण्डा, यॉक, ड्री, चीता, भालू, गुरहल, बारहसिंगा, मस्कडीयर, इत्यादि है । यद्यपि सिंह तिब्बत का राष्ट्रीय प्रतीक है तथापि यह तिब्बत में नहीं पाया जाता ।

---

1. सर वेल चार्ल्स – ''टिवेट पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट', पृ0 –8, 'बुक पेथ इंडिया दिल्ली'', 1998

तिब्बत में पाये जाने वाले प्रमुख खनिज पदार्थ सोना, वोरेक्स, लीथियम, क्रोमियम, तेल तथा यूरेनियम है । आम तिब्बती खनन कार्य को अच्छा नहीं मानते । उनकी अवधारणा है कि जमीन का खनन करना तिब्बत और दलाईलामा के अस्तित्व के लिए दुर्भाग्यपूर्ण होगा। परन्तु यह तिब्बत की विडम्बना ही कही जायेगी कि यूरेनियम सरीखे खनिज से संपन्न होने के बावजूद आज विश्व मानचित्र पर स्वतंत्र तिब्बत का कहीं अस्तित्व नहीं है । उल्टे यूरेनियम की चाहत लालची चीन को उसकी धरा के दिन–प्रतिदिन दोहन के लिए उकसाती है जो अन्ततः पर्यावरण वादियों की विश्व के भौगोलिक असंतुलन की चेतावनी के रूप में सामने आती है ।[1]

प्रस्तुत शोध प्रबंध का उद्देश्य राजनीतिक होने के कारण तिब्बत के भूगोल पर सांकेतिक प्रकाश डाला गया है इसकी प्राचीनता सिद्व करने का उद्देश्य सिर्फ इतना है कि परम्परागत रूप से एक महान राष्ट्र होने के बावजूद तिब्बत आज तक शोधार्थियों एवं आम जनता के लिए पहुँच से दूर का क्षेत्र बना हुआ है । इतिहास में मंगोल आक्रमणकारी भी तिब्बत की ठण्डी जलवायु के कारण उसे पराजित नहीं कर सके । भारत पर आक्रमण के दौरान भी उन्होंने तिब्बत को अफगानिस्तान के अपेक्षाकृत सहजगम्य पर्वत मार्गो से पार किया । अस्तु तिब्बत शेष विश्व के लिए अबूझ बना रहा है – कुछ तो अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण और कुछ शांत तटस्थ देश के रूप में शक्तिशाली पड़ौसी राज्यों के मध्य एक बफर स्टेट की अपनी भूमिका के कारण ।

2. तिब्बत विषयक जानकारी के स्रोत –

भारत में ब्रिटिश राज के समय तिब्बत एक शांत बफर स्टेट के रूप में स्थित था। आज भी तिब्बत अपने रहस्यात्मक, शांत प्राकृतिक परिवेश के कारण आकर्षण का पात्र बना हुआ है । मानवाधिकारों तथा पर्यावरण संरक्षण के लिए नारेबाजी करने वाले पश्चिमी देशों के राजनय ने कभी चीन के तिब्बत में अनधिकृत प्रवेश तथा वर्तमान में चीन द्वारा तिब्बती जनता के मानवाधिकार हनन पर गंभीर संचेतना नहीं दिखायी । अस्तु लगभग 30 वर्षो के लम्बे अंतराल के बाद 27 सितम्बर 1987 को तिब्बती लामाओं के ल्हासा में किये गये प्रदर्शन ने विश्व का ध्यान एशिया के तिब्बती रंगमंच की ओर आकृष्ट हुआ । इस प्रदर्शन के बाद घटित लगभग 30

---

1. चौपड़ा पी.एन – 'सोशल कल्चरल एण्ड पालीटिकल हिस्ट्री आफ टिवेट' क्रायटेरियन पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1989

घटनाओं ने अन्ततः मार्च 1989 में ल्हासा पर चीनी मार्शल लॉ का मार्ग प्रशस्त किया । यह प्रथम अवसर था जब चीनी जनवादी गणराज्य की सरकार ने अपने नियंत्रण के किसी इलाके पर मार्शल लॉ लागू किया । इसके साथ ही "शांत तिब्बत की विस्फोटक स्थिति" विश्व के सम्मुख आयी ।

इसी कालान्तर में अप्रैल 1990 में, "तिब्बत–चीनी–हलचल" के संदर्भ में लन्दन में एक सम्मेलन आयोजित किया गया । "40 Years on Tibet 1950-90" नामक यह सम्मेलन लन्दन यूनिवर्सिटी के पूर्वी व अफ्रीकन अध्ययन प्रभाग 'के तत्वावधान में आहूत किया गया था। इसका उद्देश्य पिछले चार दशकों के दौरान तिब्बत के घटनाक्रमों के विकास पर दृष्टि निक्षेप करना था । इस कान्फ्रेंस ने आधुनिक तिब्बत के अध्ययन को एक विषय के रूप में स्थापित करने का भी काम किया । इस कान्फ्रेंस में तिब्बत की तत्कालीन परिस्थितियों तथा परिवर्तनों पर हुए शैक्षिक विश्लेषण ने 'तिब्बती अध्ययन के विकास' में महत्त्वपूर्ण आरम्भिक भूमिका निभाई । तिब्बती अध्ययन के आरम्भिक कार्यो में तिब्बत के विकासमान स्वरूप को निरूपित करने का प्रयास नहीं किया गया ।

तिब्बत उन्नीसवीं सदी से ही पश्चिमी रूचि का विषय रहा है परन्तु तिब्बत के शैक्षिक अध्ययन का पश्चिम विश्वविद्यालयों में आरंभ 1959 से हुआ । 1959 में दलाईलामा सहित उनके 80,000 अनुयायियों के भारत में शरण लेने के तुरंत बाद ही 'रॉकफेलर फाउण्डेशन' ने तिब्बती अध्ययन के लिए विश्वविद्यालयी कोर्स संचालित करने हेतु फण्ड उपलब्ध कराये । इसके साथ ही अनेक पश्चिमी विश्वविद्यालयों ने तिब्बती भाषा तथा संस्कृति पर अनेक पाठयक्रम शुरू किये । इसके बावजूद तिब्बती समाज व उसकी राजनीतिक अस्मिता के समसामयिक गंभीर अध्ययन का अभाव सदैव दृष्टिगोचर होता रहा ।

तिब्बती अध्ययन के विकास को व्यवस्थित ढंग से स्पष्ट करने के लिए लेखक Tsering Shakya ने अपने लेख 'The Development of Modern Tibetan Studies' में समग्र विश्लेषण को 5 बिन्दुओं में स्पष्ट किया है । इस संदर्भ में उन्होंने एक अन्य लेखक John Fair Bank की पुस्तक "Cambridge History of Chaina" में चीन के अध्ययन के लिये प्रयुक्त पश्चिमी दृष्टिकोण के पॉच बिन्दुओं का आश्रय लिया है ।[1]

---

1. फेयर बैंक जॉन – 'द कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ चाईना' वाल्युम–14,पार्ट–1, पृ0 1 "कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1987

तिब्बत विषयक जानकारी के लिये तिब्बती अध्ययन के निम्नलिखित पॉच दृष्टिकोण महत्वपूर्ण अध्ययन सामग्री उपलब्ध कराते है ।

1. तिब्बती अध्ययन के मिशनरी दृष्टिकोण से प्राप्त जानकारी
2. तिब्बती अध्ययन के यात्री–पर्यटक दृष्टिकोण से प्राप्त जानकारी
3. तिब्बती अध्ययन के राजनयिक दृष्टिकोण से प्राप्त जानकारी
4. तिब्बती अध्ययन के पत्रकारिता दृष्टिकोण से प्राप्त जानकारी
5. तिब्बती अध्ययन के समाज वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्राप्त जानकारी

1. <u>तिब्बती अध्ययन के मिशनरी दृष्टिकोण से प्राप्त जानकारी</u> – तिब्बती अध्ययन का मिशनरी दृष्टिकोण तिब्बत की धार्मिक व्यवस्था तथा संस्थाओं पर केन्द्रित है जो ईसाई धार्मिक विचारों के अनुकूल तिब्बती समाज के रूपान्तरण के लिये तिब्बती धर्म के इतस्ततः मात्र इसलिए घूमती है जिससे उपयुक्त शब्द संरचना खोजी जा सके । इसके बावजूद ऐतिहासिक परिदृश्य के साथ तिब्बती अध्ययन के संदर्भ में मिशनरी दृष्टिकोण अपने प्रारंभिक महत्व के साथ आज भी प्रतिष्ठित है । सर्वप्रथम 1624 में भारत की ओर से तिब्बत में प्रवेश करने वाले पश्चिमी मूल के जेसुइट थे जो Tsaparang (तत्कालीन तिब्बती संस्कृति केन्द्र) में अपना मिशन स्थापित करने के उद्देश्य से तिब्बत पहुँचे । 1707 में ल्हासा पहुँचे मिशनरीज ने 18वीं सदी तक तिब्बत को मिशनरी गतिविधियों का प्रमुख केन्द्र बना दिया । जेसुइट मिशनरियों द्वारा एकत्रित सामग्री से चीन तथा ब्रिटिश भारत दोनों को ही लाभ मिला । 1774 ई0 में जब ब्रिटेन ने जार्ज बोगले को शिगास्ते भेजा तो उस समय उसकी जानकारी का स्रोत मिशनरी D'Anvill द्वारा बनाया गया वह मानचित्र था जो उसने अपने सहधर्मावलंबियों द्वारा प्रदत्त जानकारी के अभाव में बनाया । तिब्बती लिपि से पश्चिम को परिचित कराने का महत्वपूर्ण कार्य Augustin Friar Antonio Giorgi द्वारा रोम में प्रकाशित "Alphabetum Thibetanum" नामक पुस्तक ने किया । इसकी सामग्री भी मिशनरीयों द्वारा जुटायी गई थी । Desideri ने तिब्बती भाषा व संस्कृति का गहन अध्ययन किया ताकि वह गहराई में जाकर तिब्बती धार्मिक विचारों व विश्वासों का खण्डन कर सकें और अपने मिशनरी विचारों के प्रचार और प्रसार के लिए जमीन तैयार कर सकें । मोरेवियन मिशनरी समूह ने ईसाइयत के प्रचार प्रसार के लिए साहित्य का सृजन किया । 1881 में प्रकाशित

'Tibetan English Dictionary' के संपादक Jaeschke ने स्पष्ट किया कि उनका मुख्य उद्देश्य केन्द्रीय एशिया के उन करोड़ों बौद्व अनुयायियों के मध्य ईसाई धर्म और ईसाई सभ्यता का प्रचार प्रसार करना है जो तिब्बती भाषा में बात करते है और उसे ही पढ़ते समझते भी है । तत्कालीन तिब्बत के विषय में जानकारी हमें 1891 से 1931 के मध्य A.H. Francke तथा K.Marx द्वारा लद्दाख के ऐतिहासिक व सांस्कृतिक अध्ययनों की श्रृखंला द्वारा प्राप्त होती है । वस्तुतः तिब्बत के अध्ययन का मिशनरी दृष्टिकोण ईसाई एवं तिब्बती धर्म और संस्कृति के विषय में अधिक जानकारी प्रदान करता है ।

2. <u>तिब्बती अध्ययन के यात्री–पर्यटक दृष्टिकोण से प्राप्त जानकारी</u> – तिब्बत के विषय में जानकारी प्राप्त करने का दूसरा स्रोत उन पर्यटकों द्वारा प्रस्तुत यात्रा वृतान्त है जो मिशनरियों के तिब्बती अभियान विषयक साहित्य से प्रेरित होकर तिब्बत की ओर उन्मुख हुए थे । अलकजेन्डर डेविड नील ने इन यात्रियों द्वारा तिब्बत यात्रा के दौरान की गई खोजों को क्रमबद्व समयानुसार अध्ययन में निरूपित किया । स्पेन्सर चैपमैन, हेन्रिक हैरर तथा कैटरिना बॉस ने तिब्बत के लोगों के सामान्य दैनिक जनजीवन व व्यवहार के विषय में वर्णनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किये । Walter Savage Landor से लेकर पश्चिमी विद्वानों की बहुसंख्या में तिब्बत यात्रा के दौरान आयी परेशानियों तथा तिब्बत के सामाजिक प्राकृतिक वातावरण से सामंजस्य करने में आयी बाधाओं का उल्लेख करने के साथ अपनी सहनशक्ति तथा अनुभवों की एकान्तिकता भी स्पष्ट की ।

यह पर्यटक यात्री तिब्बती वातावरण की अति कठोरता तथा ऊंची पर्वत मालाओं की उज्ज्वल सुषमा से हार्दिकतः प्रभावित हुए । इटली के खोजी लेखक Fasco Mariani ने स्पष्ट किया "Up-here we are a realm of ice & clarity, of ultimate and primordial purity" तिब्बत की रहस्यात्मकता की दार्शनिक अभिव्यक्ति लेखक Marco Pallis के यात्रा वृतान्त "Of peaks and lamas" में बड़ी सुन्दरता के साथ हुई ।

1980 में तिब्बत को पश्चिम पर्यटकों के लिये खोले जाने पर अनेकानेक यात्रा वृतान्त अस्तित्व में आये जिनसे तिब्बत के सामान्य दैनिक जनजीवन के विषय में जानकारी प्राप्त होती है

3. <u>तिब्बती अध्ययन के राजनयिक दृष्टिकोण से प्राप्त जानकारी</u> – इस दृष्टिकोण को लेकर लिखे गये साहित्य द्वारा हमें तिब्बत के अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों के विषय में जानकारी प्राप्त होती है । तिब्बत के साथ ब्रिटेन के संबंध मूल रूप से केन्द्रीय एशिया में अपने राजनीतिक तथा व्यापारिक हितों का विस्तार करने के लिये स्थापित किये गये । Bogle तथा Samuel Turner के तिब्बती मिशनों के साथ तिब्बत के साथ राजनयिक पश्चिमी सम्पर्क का सूत्रपात हुआ । सन् 1800 में प्रकाशित सेमूल टर्नर की पुस्तक 'An Account of an Embassy to the court of the Teshoo Lama in Tibet' अंग्रेजी भाषा में तिब्बत पर प्रकाशित प्रथम पुस्तक थी । इस क्षेत्र में ब्रिटेन ने सर्वप्रथम तिब्बत की क्षेत्रीय सीमाओं को परिभाषित करने, इसके शासकों की राजनीतिक अधिकारिता को प्राथमिक सूची में रखा साथ ही तिब्बत के पड़ौसी राज्यों के साथ संबंधों को भी विचार हेतु रखा गया । इस संदर्भ ने ब्रिटिश सरकार ने श्री शरत चन्द दास को सम्यक जानकारी एकत्रित करने के लिए सरकारी सहायता से तिब्बत भेजा । हंगरी के महान् अन्वेषक व भाषाविद Csoma de Koros को बंगाली सरकार द्वारा सन् 1830 में तिब्बती शब्द कोष तैयार करने के लिए अधिकृत किया गया । सन् 1903 में ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रेषित Young husband Misson के आक्रमण के समय ब्रिटिश सामरिक हितों से प्रेरित लेखन कार्य अपनी चरम सीमा पर पहुॅच चुका था । इस अभियान में तिब्बत को उसके शेष विश्व से 'दूरस्थ' 'प्रथक' एवं 'कटे हुए' स्वरूप से अलग महत्वपूर्ण स्थिति प्रदान की । इस समय तिब्बत ब्रिटेन के लिए सामरिक महत्व का क्षेत्र था जिसके नेताओं के साथ युरोपियन अधिकारी औपचारिक संबंधों के युग में पर्दापण कर रहे थे इन अधिकारियों के सम्मुख तिब्बत राज्य का स्तर तथा सीमाओं का निर्धारण प्रमुखतम मुददा था । जिसके लिए तिब्बत की अर्थव्यवस्था, भूगोल तथा राजनीतिक व्यवस्था के विषय में जानकारी प्राप्त करना प्रमुख प्राथमिकता थी । इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए ब्रिटिश सरकार ने F.M.Bailey को बड़ी नदियों के उद्गम स्थल जानने का भार सौंपा, William Moorcroft को भारतीय सेना के लिए घोड़ें खरीदने का कार्य सौंपा गया । Hodgson ने दक्षिणी हिमालय की 'यूरोपियन नव–उपनिवेश' की उपयुक्तता को विश्लेषित किया । Bell, O'conor, Young husband, Macdonald, Gould प्रभृति विद्वानों ने तिब्बती इतिहास को बड़ी क्षेत्रीय शक्तियों जैसे – ब्रिटेन, चीन, तथा कुछ सीमा तक रूस के मध्य क्षेत्रीय प्रतिद्वन्द्विता के मद्देनजर विश्लेषित वर्णित किया । 19वीं – 20वीं सदीं के तिब्बत विषयक अध्ययन (Lamb,

Kaur Singh, Addy & Mehra प्रभृति विद्वानों के अध्ययन) तिब्बत की भू–क्षेत्रीय परिधियों के निरूपण से संबंधित रहे । तिब्बत अध्ययन का यह दृष्टिकोण 1950 में तिब्बत पर चीनी कब्जें के बाद से अधिक मजबूत हुआ । 'तिब्बत चीन का ही एक हिस्सा था' इस प्रकार के चीनी दावे की वैधानिकता के अनुसंधान में तिब्बत संबंधी अनेक लेखन कार्यो को प्रोत्साहित किया । 1962 में सीमा विवाद को लेकर भारत – चीन के मध्य हुए युद्व के बाद तिब्बत के स्तर को निरूपित करने वाले लेखन कार्य बड़ी संख्या में सामने आये जिनके द्वारा ना सिर्फ तिब्बत के विषय में बल्कि भारत–चीन संबंधों के विषय में भी जानकारी प्राप्त होती है । यह अवश्य है कि यह समस्त अध्ययन कार्य अंग्रेजी भाषा में है जो भारत जैसे विकासशील देशों में 'तिब्बती मसले से जन सामान्य की दूरी तथा उदासीनता' को कम करने में असमर्थ रहें हैं ।

4. <u>तिब्बती अध्ययन के पत्रकारिता दृष्टिकोण से प्राप्त जानकारी</u> – तिब्बत पर हुए पत्रकारिता अध्ययन महत्वपूर्ण ब्रिटिश अभियानों के दौरान सवांददाताओं द्वारा तिब्बत से प्रेषित डिस्पेचों पर आधारित है। Perceval Landon तथा Edmund Candler द्वारा प्रेषित युद्व डिस्पेचों से भयावह युद्व के दुष्परिणाम विश्व के सामने आये । 1950 में चीन के तिब्बत पर कब्जें के दौरान जारी कोरिया युद्व के चलते पश्चिमी खेमें में चीन विरोधी भावनायें एक तरह से कम्युनिज्म विरोधी भावनाओं के साथ एकाकार होने लगी तथा तिब्बत पर चीनी कब्जें को पूँजीवाद – साम्यवाद के संघर्ष के तहत कम्युनिज्म द्वारा शेष विश्व को शासित करने की अंकाक्षा के रूप में प्रचारित किया गया । सन 1959 में दलाईनामा सहित 80,000 अन्य तिब्बतियों के भारत में शरण लेने के साथ तिब्बती विप्लव व उसके परिणाम विषयक अनेक लेखन कृत्य Barbar, Patterson, Moraes व Peissel प्रभृति विद्वानों द्वारा अस्तित्व में लाये गये । इस दौरान लेखन कार्यो में दो प्रकार के दृष्टिकोण सामने आये । प्रथम दृष्टिकोण के अनुयायी लेखकों में Felix Greene, Gelder, Han Suyin व Israel Epstein इत्यादि है जो तिब्बती समाज के आर्थिक विकास पर ध्यान देते हुए चीन के तिब्बत पर कब्जे को तिब्बत के आधुनिकीकरण का नाम देते है और इस प्रकार चीनी पक्ष के दृष्टिकोण का समर्थन करते है । दूसरे दृष्टिकोण के अनुयायी John F. Avedon सरीख `लेखक है जो चीनी शासन के तहत तिब्बती जनता के दमन की करूण कथा विश्व के सामने रखते है। 1987 के तिब्बती प्रदर्शनों के दौरान चीन द्वारा तिब्बतियों पर किये गये

अमानुषिक अत्याचारों की वास्तविकता, पत्रकारों द्वारा भेजी गयी रिपोर्टो से सामने आती है । सनसनी खेज खबरों के प्रकाशनों बावजूद तिब्बती अध्ययन का यह दृष्टिकोण सामाजिक परिवर्तन के प्रश्न या तिब्बत में राजनीतिक हित समूहों की विभिन्नता से कोई सरोकार नहीं रखता ।

5. तिब्बती अध्ययन के समाज वैज्ञानिक दृष्टिकोण से प्राप्त जानकारी – वर्तमान समय में तिब्बत विषयक जानकारी उपलब्ध कराने वाले साहित्य की दो धारायें प्रचलित है प्रथम धारा पुस्तकीय विश्लेषण की पारम्परिक पद्वति का ही निरंतर रूप है, 19वीं सदी के अन्त तक मिशनरी विद्वानों द्वारा एकत्रित ज्ञान को आधार मानकर संस्कृत भाषा के विद्वानों ने अपने लेखकीय कार्यो द्वारा तिब्बती बौद्व वाद के अनुशीलन का कार्य किया और इस प्रकार तिब्बती पुस्तकों के ऐतिहासिक उद्‌भव और उनके संस्कृत की परम्परा से संबंध को स्पष्ट करने का प्रयास किया । आधुनिक तिब्बती अध्ययन की द्वितीय धारा तिब्बती संस्कृति व समाज के पाश्चात्य समाज वैज्ञानिक प्रविधियों से किये गये अध्ययन की धारा है । तिब्बती अध्ययन की इस धारा में 'तिब्बती जन' तथा 'तिब्बती समाज को आधार बनाया गया है । 1950 के करीब इस धारा का प्रादुर्भाव हुआ, यद्यपि उस समय तिब्बत पर चीनी कब्जे के दौरान तिब्बत शेष विश्व के लिए बंद था और इस विषय पर प्रथम दृष्ट्‌या अनुसंधान की संभावनाऐं पूर्णतया क्षीण थी । यह स्थिति 1980 के दशक के मध्य तक जारी रही । सन् 1959 में दलाईलामा के साथ भारत पहुँचे शरणार्थियों की सामाजिक स्थिति पर Aziz, Franz Michael, Eva Dargyay, Goldstein प्रभृति विद्वानों ने लेखन कार्य संपन्न किया । इस परिप्रेक्ष्य में चीनी विद्वानों द्वारा जो भी अनुसंधान किये गये वे चीनी जनवादी गणराज्य से बाहर के लोगों के लिए अबूझे ही रहे ।

तिब्बत के पाश्चात्य समाज वैज्ञानिक अध्ययन के इस प्रक्रम में 'पुर्नसंरचना' तथा 'सामान्तरता' की दोनों ही धाराओं के पीछे पारंपरिक तिब्बती समाज के विषय में जानकारी एकत्रित करने का मूल विचार क्रियाशील था । Novak, Saklani, Palakshappa प्रभृति विद्वानों द्वारा किये गये लेखन कार्य में निर्वासन के अनुभवों से युक्त नवीन विचारधाराओं और अस्मिताओं का स्वाभाविक उदय सामने आया । तिब्बत के समसायिक विकास में साहित्यिक रूचि का अभाव दृष्टिगोचर हुआ । पश्चिमी जगत तिब्बत पर चीनी लौहशाही के आवरण के कारण इसकी वास्तविक परिस्थितियों से अनभिज्ञ था । 1950 में चीन द्वारा तिब्बती जनजीवन का अध्ययन करने के लिए भेजे गये दल द्वारा प्रेषित रिपोर्टे चीन से बाहर नहीं आ सकी । उदारवाद

की प्रक्रिया के चलते 1985 में तिब्बती विश्वविद्यालय, 1986 बीजिंग में Chinese Institute of Tibetology स्थापित किया गया । इस संदर्भ में सबसे महत्वपूर्ण प्रयत्न तिब्बत तथा बीजिंग ने स्वायत्त क्षेत्रों से बाहर के तिब्बती इलाकों में तिब्बती भाषा के प्रकाशन केन्द्र खोले जाने का रहा। 1984 में तिब्बती–चीनी शब्द कोष "the Bod-rGya Tsig-mDzod chen mo" प्रकाशित किया गया । इस संदर्भ में पाश्चात्य विद्वानों द्वारा तिब्बत में अपनायी गयी प्रविधियां चीनी राज्य की सैद्वांतिक व राजनीतिक इच्छाओं से प्रभावित रही । अप्रैल 1990 में लंदन में तिब्बत पर आयोजित सम्मेलन का उद्देश्य पिछले 40 सालों में तिब्बती समाज के विकास को विश्व के सामने रखना था । इस सम्मेलन में तिब्बत में सामाजिक परिवर्तनों का परीक्षण तो हुआ ही इस दिशा में गंभीर अध्ययनों का नवीन आयाम भी खुला । सम्मेलन के सभी शोध पत्रों में 'तिब्बत के सवाल' पर विस्तृत राजनीतिक वाद–विवाद हुआ । वारेन स्मिथ द्वारा अपने शोध पत्र में चीन द्वारा तिब्बत के प्रश्न को बहु राष्ट्रीय राज्य में एक अल्प संख्य समूह के प्रश्न के रूप में व्याख्यायित करने तथा इस संदर्भ में मार्क्स के राष्ट्रीयता के सिद्वांत को तिब्बती संदर्भ में लागू करने के प्रयासों को स्थान दिया गया । ऐडी द्वारा प्रस्तुत शोध पत्र में ब्रिटिश व रशियन साम्राज्यों के मध्य स्थित तिब्बत के स्तर की अनिश्चितता को स्पष्ट किया गया और यह भी स्पष्ट किया गया कि तिब्बत का वर्तमान मुददा अतीत के क्षेत्रीय शक्तियों के संघर्ष के परिणामस्वरूप अस्तित्व में आया है ।

सिंथिया व्हील तथा मेल्वीन गोल्ड स्टीन के संयुक्त अध्ययन के द्वारा तिब्बती यायावर कबीलों पर चीन द्वारा जारी आर्थिक सुधारों एवं उदारवादी प्रकिया के प्रभावों को स्पष्ट किया गया है । Samten Karmay द्वारा किये गये अध्ययन में स्पष्ट किया गया है कि 'पर्वत पूजा' जो आज तिब्बतियों के लिये राष्ट्रीय एकता का पर्याय है, इसने अपने आंरभिक काल में राष्ट्रीय एकता के भाव को नष्ट ही किया था । Heather Stoddard द्वारा किये गये अध्ययन में वर्तमान परिस्थितियों में तिब्बती अस्मिता के विकास व जीवन के लिए उपयुक्त धराभूमि की खोज पर ध्यान केन्द्रित किया गया । इस बात की खोज की गयी कि तिब्बतियों का विकास तिब्बत में होगा या निर्वासित तिब्बती समुदायों के रूप में । 1950 में तिब्बत पर चीनी कब्जें की प्रतिक्रिया के दो रूप सम्मुख आये – प्रथम राजनय, द्वितीय प्रतिरोध का । विद्वान Tsering wangyal ने तिब्बत की निर्वासित सरकार द्वारा इस दिशा में 1972 सें जारी राजनय व्यवहार का विवरण प्रस्तुत

किया। इसके विपरीत विद्वान Janyang Norbu ने अपने अध्ययन में चीनी आक्रमण व अधिग्रहण के विरूद्व तिब्बतियों द्वारा किये गये सशस्त्र विरोध को विचार का मुददा बनाया और तथाकथित तिब्बती अहिंसक राजनीतिक व्यवहार की वास्तविकता को प्रश्नचिन्ह के दायरे में लाकर खड़ा कर दिया । तिब्बत की वर्तमान परिस्थितियों के समाज वैज्ञानिक अध्ययनों में Elliot Sperling, Robert Barnett, Ronald Schwartz, Hanna Havnevik के अध्ययन विशेष महत्वपूर्ण है Elliot Sperling ने तिब्बत में स्वतंत्रता पूर्व आंदोलनों में प्रचारित समकालीन राजनीतिक प्रमाण प्रलेखों को अपनेअध्ययन के केन्द्र में रखते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि इन दस्तावेजों में समाहित राष्ट्रीय अस्मिता का वृद्विशील संज्ञान 'मार्क्सवादी –लेनिनवादी' विचारधारा के सुप्त फीनिक्स का ही पुनर्जीवित स्वरूप है । उनके विचार से उपर्युक्त विचारधारा में राष्ट्रीयता, वैयक्तिकता तथा अधिकारों के यूरोपीय विचारों के संवहन का कार्य किया है ।

Robert Barnett ने चीनी सुधार नीति की असफलता के द्योतक सन् 1987 के प्रदर्शनों के संदर्भ में तिब्बती जन साधारण द्वारा प्रतीकात्मक प्रतिरोध को अपना अध्ययन विषय बनाया तो Ronald Schwartz ने तिब्बती प्रतिरोध की चीनी प्रतिक्रिया में यूनाईटेड फ्रंट की भूमिका को अध्ययन के लिए चुना और निष्कर्ष दिया कि इसकी राजनीतिक पुनर्शिक्षा ने तिब्बतियों में राजनीतिक संचेतना जगायी है । Hanna Havnevik ने तत्कालीन विरोध आंदोलनों में ननों की भूमिका पर विचार करते हुए स्पष्ट किया कि ननो द्वारा किया गया विद्रोह एक और तो उस भेदभाव के कारण है कि वे तिब्बती है और दूसरी ओर उस धार्मिक भेदभाव के कारण जिसकी वे 'स्त्री' होने के कारण शिकार है ।

उपरोक्त अध्ययनों के अतिरिक्त 1990 के लंदन सम्मेलन में तिब्बत के विषय पर चीनी दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करने वाले दो अध्ययन विशेष रूप से महत्वपूर्ण है ये अध्ययन Wang Yao तथा Wang Xiaoqiang द्वारा किये गये थे जो 1979 के बाद की चीनी सुधार नीतियों के विकास में भागीदार रहे थे । [1]

---

1. शाक्या जीरिंग – द डेवलपमेंट आफ मार्डन टिवेटन स्टडीज पृ0– 1 से 14, " रेजिस्टेंस एण्ड रिफार्म इन टिवेट–संपादक –रार्बट वर्निट तथा शिरिन एकीनर, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिर्स प्रायवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1996.

इस प्रकार 1990 में लंदन में संपन्न "Forty Years on Tibet – 1950-90" नामक सम्मेलन में तिब्बत विषयक जानकारी के विभिन्न मुददे विश्व के सामने आये । इससे तिब्बत के विषय में समकालीन मुददे तो सामने आये ही साथ ही तत्संबंधी अन्वेषण अनुसंधान के लिए संभावनाओं के नूतन क्षितिज भी विकसित हुए है ।

3– तिब्बत की राज्य व अर्थ व्यवस्था – तिब्बती राज्य व्यवस्था की विवेचना से पूर्व एक महत्वपूर्ण विचार पर ध्यान केन्द्रित करना आवश्यक है । वह यह कि तिब्बत में धर्म व राजनीति प्रथक रेखाओं पर नहीं चलते । अपितु धर्म राजनीति को पालित पोषित करता है । यही कारण है कि प्रशासन का प्रत्येक महत्वपूर्ण विभाग किसी न किसी लामा के अधीन था । तिब्बती धर्म व राजनीति के सर्वोच्च शिखर पर दलाईलामा विराजमान थे तो Kashag (तिब्बत की कैबिनेट स्तरीय संस्था) के सर्वोच्च पद पर लामा आसीन होता था । Tshogdu नामक संस्था लामाओं के प्राधान्य के तहत कार्य करती थी । द्रेपंग तथा सेरा मठो के लामा दलाईलामा/रीजेन्ट के चयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे । संक्षेपतः यह कहा जा सकता है कि परम्परागत तिब्बती राजनीति में धर्म व लामा शीर्ष स्थान पर प्रतिष्ठित होते रहे है । राज्य व्यवस्था के संदर्भ में महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि सरकारी संस्थाएंKashag, Yik Tshang, Tsi Khang इत्यादि सामूहिक सहमति के आधार पर प्रशासनिक कार्य संचालित करती थी । प्रादेशिक गर्वनरों के कार्यकाल अनिश्चित हुआ करते थे । प्रायः प्रत्येक पद के लिए 2 वर्गो का प्रतिनिधित्व करने वाले 2 अधिकारी नियुक्त किये जाते थे एक सामान्य वर्ग से तथा दूसरा लामा या धर्मगुरूओं के वर्ग से।

तिब्बती राज्य व्यवस्था के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण प्रशासनिक संस्थाओं व उनके कार्यकरण का उल्लेख नीचे किया जा रहा है ।

1. लिपिक विभाग – Yik Tshang दलाईलामा सप्तम द्वारा स्थापित इस विभाग में चार सचिव हुआ करते थे जिनके ऊपर एक Ta-Lama कार्यरत था । इन सचिवों को Dung Yik Chhemmo कहा जाता था। इनका कार्य दलाईलामा द्वारा निसृत आदेशों को देश के विभिन्न क्षेत्रों तक पहुँचाने का था । इसके अतिरिकत मठो से संबधित समस्त मामलों उनके प्रशासन, द्रेपंग, सेरा, गांडेन मठो को छोड़कर समस्त मठों के सरकारी लिपिकीय संवर्ग की नियुक्ति,

स्थानांतरण तथा पदच्युति के मामलोंकी देखरेख भी यह विभाग किया करता था । प्रायः दो प्रकार के रजिस्टर रखे जाते थे प्रथम सामान्य केडर से संबंधित कर्मचारियों का, द्वितीय लामा केडर के कर्मचारियों का जिन्हें तिब्बती भाषा में क्रमशः Shodung तथा Tsedung कहा जाता था । Yik – Tsang का कार्य Tsedung Cadre से संबंधित हुआ करता था । वित्त विभाग जिसे Tsi Khang कहा जाता था उसका कार्य Shodung कैडर के रजिस्टर का ब्यौरा रखना हुआ करता था ।

सरकारी सेवाओं में लामा कैडर से नियुक्ति पाने के लिये प्रशिक्षण देने हेतु Tse-Lobda (Rtse Lob gra) नामक विद्यालय हुआ करता था । 14 से 20 वर्ष की आयु के बालक इसमें प्रवेश की योग्यता रखते थे परन्तु या तो वे उच्च आभिजात्य परिवारों के बालक हुआ करते थे या पूर्व लामा कैडर के कर्मचारियों के संबंधी । कुछ निश्चित परिवार जिनमें Kheme तथा Dekyling प्रमुख थे । सदैव लामा कैडर की सरकारी नौकरी में अपने बच्चों को भेजा करते थे। इस विद्यालय में प्रवेश के लिये Gegan Chhenpo को आवेदन देने के साथ – साथ प्रवेशार्थी के लिए स्वस्थ्य तनमन का स्वामी होना तथा अच्छी श्रवण व वाकशक्ति संपन्न होना आवश्यक था। Dungyik Chhemmo नामक चार सचिव अभ्यार्थी की योग्यताओं के आधार पर निर्धारित किया करते थे कि कौन – कौन विद्यार्थी अर्द्ववार्षिक परीक्षाओं में हिस्सा लेगा । तत्पश्चात तिब्बती नव वर्ष के अवसर पर दलाईलामा इन अभ्यार्थियों का साक्षात्कार लेकर उन्हें Tsedung कैडर (लामा कैडर) में सेवार्थ नियुक्त कर दिया करते थे ।

2. न्याय विभाग – Sher Khang नामक उच्च न्यायालय का न्याय क्षेत्र पूरे तिब्बत में विस्तृत व मान्य था Kashag द्वारा दीवानी तथा आपराधिक मुकद्मे Sherpang को सौपे जाते थे जिसमें Shodung Cadre के पंचम रैंक के 2 अन्वेषक जॉच कार्य करके रिपोर्ट Kashag तथा दलाई लामा/रीजेन्ट को अंतिम निर्णय हेतु प्रेषित किया करते थे ।

Nang rtse sheegs las khung नामक न्यायालय ल्हासा शहर की सीमा के भीतर घटित दीवानी मुकद्मों की सुनवाई का केन्द्र था । दो पंचम रैंक के मिपॉन अधिकारी निर्णय दिया करते थे यदि मामला आभिजात्य वर्ग से संबंधित होता था तो मिपॉन इसे Kashag के पास अगले आदेश के लिए प्रेषित करते थे । यदि अपीलकर्ता कोई सरकारी कर्मचारी होता था तो वह

अपने मामले की सुनवाई के समय कोई प्रतिनिधि भेज सकता था तथा निर्णय के विरूद्व अपील कर सकता था। यदि मामला सामान्य जन तथा लामा के मध्य हुआ करता था और लामा आरोपी होता था तो संबंधित मठ में मामला चलता था और लामा के दोषी पाए जाने पर उसे मठ से निष्कासित कर दिया जाता था । इसके बाद उसे मिपॉन के न्यायालय में पुनः द्वितीय अभियोजन के लिये उपस्थित होना पड़ता था। दण्डित लामा अपने मठ के निर्णय के विरूद्व yik Tsang में अपील कर सकता था तथा मिपॉन के विरूद्व Kashag में याचिका दायर कर सकता था । मोनलम उत्सव के दौरान ल्हासा के सिटी मजिस्ट्रेटो की शक्तियॉ निलम्बित करके दलाई लामा द्वारा द्रेपंग मठ के दो अधिकारियों को जिन्हे Chhoje Geko कहां जाता था सौंप दी जाती थी। ये दो अधिकारी द्रेपंग के 20 Geyok तथा Chhag Tamba के साथ प्रथम माह के तीसरे दिन ल्हासा में प्रवेश करते थे । तिब्बत में अपराधियों को जेल में खाना और वस्त्र उपलब्ध नही करवाये जाते थे इस सबका इन्तजाम या तो समाज द्वारा या कैदियों के रिश्तेदारों द्वारा ही किया जाता था । गंभीर अपराधियों को पोटाला की तलहटी मे स्थित Shol गॉव में दो पंचम रैंक के अधिकारियों की देखरेख में रखा जाता था । कम गंभीर अपराधियों के लिये तिब्बत के निर्जन स्थलों में निष्कासन का दण्ड प्रचलित था ।

जुर्माने का दण्ड तिब्बत में अप्रचलित था । मृत्युदण्ड देने का अधिकार दलाई लॉमा को ही प्राप्त था । अपराधियों के लिये सार्वजनिक उपहास एवं अपमान की व्यवस्थाऍ भी प्रचलित थी ।

3. <u>वित्त विभाग</u> – सर्वप्रथम दलाई लामा सप्तम द्वारा "वित्त एवं लेखा विभाग" की स्थापना की गई थी । वित्त अधिकारियों के रूप में चार चतुर्थ रैंक के अधिकारी जिन्हें Tsipon कहां जाता था नियुक्त किये जाते थे । वे सरकारी के सेवा के Lay Cadre के अधिकारियों के ऊपर थे तथा उनसे ऊपर के अधिकारी Phopon Kusung Dapon हुआ करते थे । सरकारी सेवाओं में प्रवेश के लिये प्रशिक्षणार्थ एक विद्यालय था जिसमें उसी प्रकार प्रशिक्षण दिया जाता था जैसे पूर्वोक्त लिपिक विभाग के लिए व्यवस्था की गई थी तथा अन्त में दलाई लामा योग्य उम्मीदवारों नव वर्ष के दिन नियुक्त किया करते थे ।

रिमिटिंग एजेन्सी ल्हासा के सरकारी खजानों में अनाज न भेजकर देश व्यापी अनाज भण्डारों में अनाज भेजा करते थे जहां उसे अवसर व आवश्यकता के अनुसार उपयोग में लाया जाता था ।

4. <u>कोषागार</u> – तिब्बत में राजस्व निर्धारण के विषय में महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि वहां मठ तथा मठ संपत्ति कर के दायरे से मुक्त थी । इस प्रकार सिर्फ आम जनता कर दाता हुआ करती थी और थोड़ी जनसंख्या से विस्तृत प्रशासनिक व्यय चलाने के लिये आम जनता पर कर का भारी बोझ था । राजस्व का आधार प्रायः प्राकृतिक उत्पाद हुआ करते थे । सरकार जौ, कपड़े, बहुमूल्य पौधो की छाल, पत्तियां, जड़े तथा मवेशी बतौर कर एकत्रित किया करती थी।

प्रायः तीन प्रकार के कोषागार प्रचलित थे । दलाई लामा स्थापित पोटाला कोषागार दलाई लामा की व्यक्तिगत भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता था । तीन चतुर्थ रैंक के Chhagzopa (एक Shodung केडर से तथा दो Tsedung कैडर के) इसकी देखरेख हेतु नियुक्त किये गये थे । इस कोषागार को कोष Ngari से निश्चित मात्रा में स्वर्ण तथा दलाई लामा को दक्षिणा के रूप में प्राप्त सम्पत्ति से प्राप्त होता था । पोटाला कोषागार द्वारा नियुक्त Serpon (स्वर्ण प्रधान) तथा Shung Tsongpa (Ngari का सरकारी व्यापारी) नामक अधिकारी स्वर्ण एकत्रित करने, किसानो को सरकारी वस्तुएं बेचने, लद्दाख को चाय बेचने व वहां से मेवा, कपड़े इत्यादि वस्तुएं तिब्बत लाने का कार्य करते थे । प्रमुख कोषागार जिसे La Chhag, Labrang Chhagzo Lekhung कहां जाता था, दलाई लामा सप्तम द्वारा स्थापित किया गया था । यह तिब्बती सरकार का प्रमुख कोषागार था । जौ, मक्खन, मांस, स्वर्ण, टरक्वाइज तथा हीरे के रूप में प्राप्त राजस्व को ये प्रायः मोनलम के दौरान वितरित कर दिया करता था । तीन चतुर्थ रैंक अधिकारी इसकी देखभाल करते थे ।

रिजर्व कोषागार से प्राप्त धन आपात काल में ही प्राप्त किया जा सकता था । औपचारिकताएं पूरी करने की शर्त पर यह वित्त विभाग तथा अन्य व्यक्तियों को चांदी के रूप में कर्ज भी दिया करता था । इसके अतिरिक्त सेना तथा बड़े मठो जैसे जोखांग, तथा सामेये इत्यादि के अपने खजाने हुआ करते थे । लामाओं को वेतन इन्हीं खजानों से प्राप्त हुआ करता था । प्रत्येक सरकारी विभाग को वर्ष के आरंभ में एक निश्चित धन राशि दी जाती थी जिसका लेखा जोखा उसे Tspons नामक अधिकारी को देना होता था । लेखाओं को जांचने के बाद वह उन्हें Kashag को प्रेषित कर दिया करता था ।

सैन्य कोषागार – दो चतुर्थ रैंक के अधिकारियों के अधीन गठित सेना का वेतन विभाग Pho Khang कहलाता था । इसका अधिकारी Phopon हुआ करता था जिसका कार्य नियमित

सेना के लिए वेतन की व्यवस्था करना तथा अन्य नागरिक कार्यो को सम्पन्न करना था । सैन्य कोषागार भी उसी भॉति औपचारिकताएँ पूरी करने पर लोगों को धन उपलब्ध कराया करता था जैसे रिजर्व कोषागार । युद्व के अवसर पर Kashag का एक मंत्री सेना का नेतृत्व संभालता था । इस अवसर पर उसे Chimda कहा जाता था ।

5. सैन्य विभाग – प्राचीन काल में तिब्बत एक सैन्य शक्ति हुआ करता था । इसकी सेनाएं पूर्वी तिब्बत, दक्षिणी तिब्बत तथा खम क्षेत्रों में तैनात हुआ करती थी । 1751 में तिब्बत में सर्वप्रथम नियमित सेना की व्यवस्था की गई तथा 1913–14 में इसे पुनःसंगठित किया गया । 1922–24 के युद्व में कर्नल एरिक पार्कर की देखरेख में अधिकारियों व सैनिको को सैन्य प्रशिक्षण प्रदान किया गया । तिब्बत में सैन्य मामलों के प्रशासन तथा समन्वय के लिये सेना हैड क्वार्टर्स की भी व्यवस्था की गई । यह विभाग Kashag के अधीन कार्य करता था ।

6. दलाई लामा का सुरक्षा विभाग – दलाई लामा पंचम के समय चतुर्थ रैंक के Dapon नामक अधिकारी के अधीन दलाई लामा की रेजीमेंट की व्यवस्था की गई थी जिसका कार्य दलाई लामा के सुरक्षा इंतजाम देखना हुआ करता था । Kusung General सेना के अधिकारी Phopon की अधीनता में कार्य करता था । दलाई लामा सप्तम के समय Dapchi Maga नामक नियमित रेजीमेन्ट की व्यवस्था की गई । उपरोक्त दोनों ही रेजीमेन्टों का प्रधान Shodung कैडर से था । Dapchi General, Kusung General के अधीन हुआ करता था । Dapchi Regiment के सैनिक प्रमुख नगरों ल्हासा, ग्यान्तसे, शिगास्ते तथा डिंगरी में तैनात हुआ करते थे । 1913–14 में सैन्य विभाग में सुधार के कारण Dongma Maga तथा Sale Maga नामक दो नए विभाग गठित किये गये । इसके अतिरिक्त Yul Ma नामक एक मिलिशिया भी स्थापित की गई । सैनिकों को रसद वगैरह उनके मालिको के तरफ से उपलब्ध कराई जाती थी । राशन प्रायः सरकारी खजाने से उपलब्ध कराया जाता था । जिसमें जौ का उत्पाद तथा अन्य अनाज दिये जाते थे । वस्त्र तथा यातायात के लिये सवारियां भी सैनिको को उनके मालिको को उपलब्ध कराई जाती थी ।

उपरोक्त विभागों के अतिरिक्त डिस्ट्रिक्ट का प्रशासन संभालने के लिए कुछ अन्य विभाग

भी थे जो स्थानीय विषयों पर टिप्पणी करके अन्तिम निर्णय हेतु मामले Kashag को हस्तांतरित कर दिया करते थे ।[1]

तिब्बती अर्थव्यवस्था – कुछ तथ्य – तिब्बत की विषम भौगोलिक परिस्थितियों के बावजूद तिब्बती व्यापारियों ने चीन तथा उत्तरी तातारो के साथ व्यापारिक संबंध स्थापित कर रखे थे । भारतीय हिमालयी क्षेत्र कुमाऊ के इलाकों में भी तिब्बती व्यापारी ऊन, कालीनो, जानवरों की खालों, ऊनी कपड़ो, बोरेक्स, आभूषणो, चायनीज चाय तथा तिब्बती जड़ी बूटियों का व्यापार किया करते थे ।

जहां तक भूमि व्यवस्था की बात है तो 'सबै भूमि गोपाल की' के तर्ज पर तिब्बत में सीमा क्षेत्र की भूमि तिब्बत राज्य की परिसंपत्ति मानी जाती थी तथा राज्य को किसी भी भू संपत्ति पर अधिकार करने का वैधानिक हक हासिल था । उच्च–आभिजात्य वर्ग को राज्य की ओर से विस्तृत भू–संपत्ति प्रदान की जाती थी जिसके एवज् में पशुओं की उपज तथा कीमती खनिज वे राज्य को कर के रूप में देते थे । कर का स्वरूप नकदी के रूप में न होकर उपरोक्त सामान के रूप में अथवा राजकीय सेवाओं के लिये अपनी संतानों के प्रदाय के रूप में हुआ करता था। मठ विशाल संपत्तियों के स्वामी हुआ करते थे परन्तु वे भौतिक रूप से कर प्रदाता नही थे । राज्य द्वारा प्राप्त संपत्ति के एवज् में वे राज्य की जनता के सामूहिक कल्याणार्थ प्रार्थनाए व अन्य धार्मिक क्रियाएं सम्पन्न करके कर चुकाते थे । दलाईलामा इस संबंध में किसी भी विवाद के अंतिम निर्णय कर्ता हुआ करते थे ।

तिब्बती मुद्रा के रूप में सिल्वर Tan-ka तथा Jav, तांबे के सिक्कों के रूप में Chhege (1/2 tan-ka), Karmanga (1/3 tan-ka) तथा Khagang (1/6 tan-ka) प्रचलित थे । 1934 में सिल्वर सिक्का तथा नोट अस्तित्व में आये । एक भारतीय रूप्ये की कीमत 4 टंका के बराबर थी । 1959 में दलाईलामा के पलायन तथा तिब्बत पर चीन के कब्जे के बाद तिब्बती मुदा का प्रसार पूरी तरह रोककर वहॉ चीनी मुद्रा "यूआन" प्रचलित की गयी ।[2]

---

1. राहुल राम, 'सेन्ट्रल एशिया–मेजर पर्सपेक्टिव', पृ0 10–23, विकास पब्लिकेशन हाऊस प्राय0 लिमि0 नई दिल्ली, 1993.
2. चौपड़ा पी.एन. "सोशल कल्चरल एण्ड पालीटिक्ल हिस्ट्री आफ टिवेट" पृ0–37,41 क्रायटेरियन पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, 1989.

प्रथम स्कन्ध

आधुनिक तिब्बती इतिहास का विकास

(एक बफर राज्य की विडम्बनाएं)

प्रथम स्कन्ध

आधुनिक तिब्बती इतिहास का विकास
(एक बफर राज्य की विडम्बनाएं)

सातवीं शताब्दी के प्रारंभ में Songtsen Gampo के पिता ने बिखरे हुए तिब्बती कबीलों को एक जुट करने का कार्य आरंभ किया । कालान्तर में Song tsen Gampo ने इस कार्य को आगे बढ़ाते हुए तिब्बत में धार्मिक शासकों के शासन की परम्परा का सूत्रपात किया । इतना ही नहीं चीन तथा नेपाल के कुछ हिस्सों पर अधिकार करने के साथ उसने वहाँ की राजकुमारियों से वैवाहिक संबंध स्थापित किये । बौद्व धर्मावलम्बी रानीयों के प्रभाव में आकर Song tsen ने भी बौद्व धर्म स्वीकार कर लिया तथा बौद्व धर्म तिब्बत का राजकीय धर्म घोषित कर दिया । Song tsen Gampo के ही समय Thoumi Sambhota नामक विद्वान भारत आया तथा देवनागरी लिपि पर आधारित तिब्बती वर्णमाला का सूत्रपात हुआ । Song tsen Gampo का शासन काल 618 से 649 ई0 तक रहा । उसके उत्तराधिकारी Mang-Song-Mang Tsen ने उत्तरी पूर्वी सीमा पर स्थित Kansu, Szchowan तथा Yunnan के कई हिस्सों पर अधिकार कर लिया । Du-Song Mang Po के शासनकाल (676 से 704 तक) में चीन तिब्बत के अधीन हो गया । शासक Tri-de-Tsuk Ten (704 से 754 तक) के समय तक तिब्बत सैन्य दृष्टि से मजबूत हो चुका था तथा वहां सैन्य दुर्गो का निर्माण भी किया जा चुका था। Tri-Song-Detsen के शासन काल के दौरान (754 से 797 तक) तिब्बत में बौद्ववाद तथा मठवाद का तीव्रता से विकास हुआ । उसके समय के विद्वानों में धर्म कीर्ति तथा शोन्ठा रक्षित इत्यादि प्रमुख थे उसी समय तिब्बत ने बौद्ववाद के माध्यमिका सिद्वांत को राजकीय स्वीकृति प्रदान की गई । इसी मध्य तिब्बत सैन्य शक्ति के रूप में इतना मजबूत हो चुका था कि उसकी सेनाओं ने चीन पर आक्रमण करके तत्कालीन चीनी राजधानी Chang'an पर अधिकार कर लिया । तत्पश्चात Mune-Tsen-Po तथा Tri-de-song Tsen के पश्चात Lang Darma सत्तासीन

हुआ परंतु उसे बौद्ववादी जनता ने सत्ताच्युत कर दिया तत्पश्चात उसका भाई Tri Song Detsen 815 से 838 तक शासक रहा । 821 ई0 के दौरान उसने पुनः चीनी क्षेत्र पर अधिकार कर लिया । इसके शासनकाल के दौरान चीन और तिब्बत के मध्य एक संधि सम्पन्न हुई । उसने तिब्बत में हीनयान शाखा को प्रोत्साहन दिया जिससे क्रुद्व होकर 'बॉनवादियों' ने उसकी हत्या करके पुनः Lang Darma को शासक बनाया । इसका शासन काल लामाओं के लिये अत्याचारी शासन रहा । 900 ई0 में उसकी मृत्यु के बाद तिब्बत का शासन उसके दो पुत्रों के मध्य विभाजित कर दिया । शनैः शनै रियासतों की फूट तथा एक केन्द्रीय सत्ता के अभाव में तिब्बत की शक्ति बिखरने लगी । धीरे – धीरे चीन, नेपाल, भारत तथा मध्य एशिया में तिब्बत के अधिकृत क्षेत्र स्वतंत्र होते गये और एक क्षेत्रीय शक्ति के रूप में तिब्बत का गौरव तिरोहित हो गया । सन् 1042 ई0 में पश्चिमी तिब्बत के शासक ने विद्वान अतीश को तिब्बत आमंत्रित किया । उसके बाद से तिब्बत में धर्मगुरूओं का प्रभाव बढ़ने लगा । 13वीं शताब्दी में चंगेज खान की उत्तरी एशिया तथा पूर्वी युरोप की विजय यात्राओं के दौरान तिब्बती क्षेत्र की एकता विखण्डित हो चुकी थी । कालांतर में कुबलई खान ने शाक्य सम्प्रदाय का समर्थन किया । मध्य युगीन तिब्बत में मठो के मध्य प्रतिद्वंद्विता अपने चरम बिन्दु पर थी । Godan द्वारा शाक्य पंडित को तिब्बत का उपरीजेण्ट नियुक्त किये जाने पर तथा एहिक मामलों पर आध्यात्मिक सत्ता की अवस्थापना से शाक्य सम्प्रदाय की पद प्रतिष्ठा में वृद्वि हुई । इसी दौरान मंगोलों द्वारा चीन पर भी अधिकार कर लिया गया । इस प्रकार तिब्बत तथा चीन (दोनों संप्रभुत संपन्न स्वत़ंत्र देशों) पर मंगोल आधिपत्य स्थापित हो गया । शाक्य पंडित का पोता Phakpa कुबलई खान के दरबार में उपस्थित हुआ । कुबलई खान उसकी शिक्षा दीक्षा से इतना अधिक प्रभावित हुआ कि उसने उसे तिब्बत के उपरीजेण्ट पद पर नियुक्त करके तिब्बत के शासन का सारा भार उसे सौंप दिया । इस प्रकार तिब्बत का शासन मंगोल साम्राज्य की अधीनता में चलाया जाने लगा । यहॉ यह तथ्य ध्यातव्य है कि तिब्बत की स्थिति मंगोल शासक की अधीनता की थी चीनी साम्राज्य की अधीनता की नहीं और यह भी कि इस समय चीन उसी प्रकार मंगोल साम्राज्य का गुलाम था जैसे कि तिब्बत । स्पष्ट है कि तिब्बत पर अपने अधिकार क्षेत्र के चीनी दावों की ऐतिहासिकता वास्तव में झूठ पर आधारित है । कालान्तर में Chang-Chub Gyaltsen द्वारा शाक्य सम्प्रदाय को प्रभावहीन करने के प्श्चात तिबबत में धार्मिक शासकों के शासन की अवधारणा के तहत इस

विचार ने जोर पकड़ा कि मठों एवं मठाधीशों का कार्य राजनीतिक शासक को समर्थन देना है और इसके एवज में राजनीतिक शासक धर्म के रक्षक के रूप में कार्य करेगा । उपरोक्त शासक ने तिब्बत को 1350 ई0 तक मंगोलों से मुक्त करवा लिया । इस समय तक चीन में Ming साम्राज्य स्थापित हो चुका था। अध्ययन के संदर्भ में महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि चीन तथा तिब्बत से मंगोल साम्राज्य की समाप्ति के बाद भी तिब्बत का मंगोलिया से घनिष्ठ धार्मिक संबंध स्थापित रहा । जबकि चीन के नए साम्राज्य के साथ तिब्बत का कोई राजनीतिक संबंध – संपर्क कायम नहीं हुआ । तिब्बती लामाओं के कई दल इस दौरान धार्मिक उद्देश्य से चीनी शासकों के सम्मुख उपस्थित हुए । उनका उद्देश्य पूर्ण रूपेण धार्मिक था राजनीतिक कदापि नहीं ।

Chang-Chub-Gyaltsen कार्गयुपा सम्प्रदाय से संबंध रखता था । करमापा तथा कार्गयुपा सम्प्रदाय "लाल टोपी से तथा गेलुग्पा सम्प्रदाय "पीली टोपी" से संबंध रखते थे । गेलुग्पा सम्प्रदाय के संस्थापक Tsong-Khapa के शिष्यों में महान विद्वान Gedun Truppa ने शिगास्ते के निकट Tashilhunpo में एक बड़े मठ की स्थापना की । उनकी मृत्यु के कुछ समय बाद यह अनुभव किया जाने लगा कि उनकी आत्मा Geduin Gyatso नामक लामा के शरीर में अवतरित हो गयी है । इसी सिलसिले में आगे Sonam Gyatso नामक बालक को Gedun Truppa का तिसरा उत्तराधिकारी घोषित कर दिया गया । Sonam Gyatso को मंगोलिया के अल्तान खान द्वारा Tal'e (Dalai) का ओहदा प्रदान किया गया जिसका शाब्दिक अर्थ था समुद्र अर्थात ज्ञान का समुद्र ।[1] शीघ्र ही मंगोलिया के लड़ाकू कबीलों पर गेलुग्पा सम्प्रदाय का प्रभाव पड़ने लगा । धीरे – धीरे तिब्बत में भी इस सम्प्रदाय का प्रभाव क्षेत्र बढ़ा और वह पूर्व प्रचलित करमापा सम्प्रदाय के सामने आ खड़ा हुआ । 1642 ई0 में मंगोलिया के Qosot शासक गुर्जी खान ने तिब्बत के करमापा समर्थित शासक को परास्त एवं हत्या कर Nga wang Lobzang Gyatso नामक पांचवे दलाईलामा को तिब्बत का सर्वोच्च धर्म गुरू घोषित किया । गुर्जी खान तथा Ngawang Lobzang Gyatso का यह संबंध कालान्तर में मध्य एशिया में "राजनीतिक

---

1. सर वेल चार्ल्स "टिवेट पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट" पृ0–30, बुक फेथ इंडिया दिल्ली,1998

धार्मिक संरक्षक – संरक्षित विचारधारा" के रूप में अग्रसर हुआ । राज्य धर्म को संरक्षण देता था तथा धर्म राज्य की शक्ति को आध्यात्मिक समर्थन प्रदान करता था परन्तु चीन के मंगोल शासकों व तिब्बत के रीजेण्ट के रूप में लामा का यह संबंध जितना आदर्शात्मक था उतना ही तत्कालीन परिस्थितियों का व्यावहारिक समाधान भी प्रस्तुत करना था । गुर्जी खान की मृत्यु (1655 ई0) के बाद उसके उत्तराधिकारियों ने कोकोनोर में रहना पसन्द किया तथा तिब्बत के प्रशासन के प्रति उदासीनता बनायी रखी । इस बीच दलाईलामा पंचम ने अपना प्रभाव क्षेत्र काफी बढ़ा लिया तथा रीजेण्ट नियुक्त करने की शक्ति भी प्राप्त कर ली ।[1] सन् 1720 से 1792 ई0 तक का समय तिब्बत में मान्चू संरक्षकत्व का रहा । चीन में मान्चू वंशज Nurchachi के उत्तराधिकारी शासकों ने कभी Qosot मंगोलो पर जो कि कोकोनोर के स्वतंत्र शासक थे कभी आधिपत्य स्थापित करने का प्रयत्न नहीं किया । अतः इस कालखंड तक तिब्बत पर चीनी आधिपत्य के प्रमाण उपलब्ध नहीं होते ।

1. <u>शक्तिशाली पड़ौसियों का हस्ताक्षेप</u> – सन् 1682 में दलाईलामा पंचम की मृत्यु के पश्चात तिब्बत के वैध शासक Lhabzang Khan तथा पीकिंग में मांचू साम्राज्य के दौरान Tshangyang Gyatso नामक षष्ठ अवतार को दलाईलामा बनाया गया जो इस महान पद के योग्य साबित नहीं हुए फलतः रीजेण्ट Sange Gyatso द्वारा प्रशासन अपने हाथ में लेकर Qosot मंगोलो की सत्ता को Dgungars की मदद द्वारा चुनौती देने का प्रयत्न किया गया । तिब्बत के तत्कालीन शासक Lhabzang Khan द्वारा रीजेण्ट के विरूद्व तत्कालीन मान्चू शासक द्वारा Dzungars के तिब्बत में प्रभाव को रोकने के लिए मदद मांगी गयी । चूंकि मान्चू शासक मंगोलों के स्थान पर Dzungars की सत्ता नहीं चाहते थे अस्तु मान्चू शासकों की सहायता से Lhabzeng Khan अपने उद्देश्य में सफल हुआ । परंतु Lhabzeng Khan द्वारा सप्तम

---

1. रिचर्डसन,एच.ई. "टिवेट एण्ड इटस हिस्ट्री" पृ0–42, आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस,1962

दलाईलामा के रूप में अपने पुत्र को स्थापित करने का प्रयत्न न तो तिब्बतियों द्वारा और न ही चीनी शासक द्वारा तैयार किया गया । फलस्वरूप तिब्बतियों की प्रार्थना पर Dzungars द्वारा उपरोक्त शासक को सत्ताचित करके उसकी हत्या कर दी गई । तत्पश्चात Dzungars द्वारा लिटांग प्रांत से दलाईलामा के षष्ठ अवतार को लाया जाता इससे पूर्व भी मान्चु शासक ने "बालक अवतार" को अपने अधिकार में लिया । इस घटना से तथा बाद में Dzungars द्वारा तिब्बतियों पर किये गये अत्याचारों के कारण तिब्बतियों ने मान्चू शासक से हस्तक्षेप की अपील की। मान्चू शासक द्वारा इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु सन् 1718 तथा 1720 में दो सैन्य दल ल्हासा भेजे । तिब्बतियों द्वारा इनका स्वागत किया गया । 1720 तक तिब्बत से Dzungars का पूर्णतया सफाया हो गया । इस संघर्ष के उपरांत तिब्बतियों का सुरक्षा तथा सप्तम दलाईलामा मिले व मान्चू शासक को इसके एवज में तिब्बत में प्रभाव क्षेत्र तथा दलाईलामा के माध्यम से मंगोलिया पर धार्मिक आधिपत्य प्राप्त हुआ । अगली दो शताब्दियों तक तिब्बत में मान्चू प्रभाव स्थापित रहा। उन्होंने दलाईलामा को परामर्श देने के लिए मंत्रियों की संस्था स्थापित की । राजपद तथा रीजेण्ट कार्यालय समाप्त कर दिये गये । सेना सहित मान्चू मिलेट्री गर्वनर का नया पद सृजित किया गया जिसे बाद में तिब्बतियों की अनिच्छा तथा मंत्रिपरिषद की अपील पर सेना में कटौती और नागरिक गर्वनर के पद में परिवर्तित कर दिया गया । शीघ्र ही मंत्रिपरिषद में फूट तथा नागरिक युद्व की परिस्थितियां उत्पन्न होने पर 1727–28 के दौरान पुनः तिब्बतियों ने मान्चू शासक से हस्तक्षेप की अपील की । सैन्य हस्तक्षेप के पश्चात विभिन्न संघर्षरत् गुटो के बीच से मान्चू शासक द्वारा Phola Teji को तिब्बती काउंसिल का प्रधान नियुक्त कर दिया गया । साथ ही प्रशासन तथा नीति विषयक मुद्दों पर तिब्बती सरकार को परामर्श देने के लिये दो नागरिक चीनी अधिकारी (अम्बान) नियुक्त किये गये जो आगे चलकर तिब्बत की राजनीति में शाक्तिशाली पड़ौसियों के हस्तक्षेप के रूप में प्रकट हुए । 1727–28 में सिविल वार के दौरान मान्चू शासक द्वारा दलाईलामा सप्तम को दोषी मानकर लिटांग ले जाकर इस शर्त पर ल्हासा वापस भेजा गया कि वे अपनी राजनीतिक भूमिका सीमित कर लेगें तथा मात्र धार्मिक प्रतिष्ठा का उपभोग करेंगे । यह तिब्बत में मान्चू शासकों का द्वितीय सैन्य हस्तक्षेप था । वास्तविक प्रशासनिक शक्ति मंत्रि परिषद को हस्तांरित कर दी गई इसके साथ ही दलाईलामा के प्रतिद्वंद्वी लामा के रूप में गेलुग्पा सम्प्रदाय के पंचेन लामा की प्रतिष्ठा की गई । दलाईलामा पंचम द्वारा स्थापित पंचेन लामा को

मान्चू शासक ने उत्तरी व पश्चिमी क्षेत्र में अधिकार संपन्न बनाया है । परन्तु उन्होनें Tashilhumpo Monestry के आसपास का अधिकार क्षेत्र ही ग्रहण किया । इसी मध्य Phola Teji ने मान्चू शासक की सदाशयता ग्रहण कर तिब्बती शासक का स्थान प्राप्त कर लिया। उसके उत्तराधिकारी पुत्र ने तिब्बत में मान्चू प्रभाव को कम करना चाहा । चीनी अधिकारियों द्वारा उसकी हत्या से क्रुद्व तिब्बतियों ने चीनी अम्बानों तथा कई सैन्य अधिकारियों की हत्या कर दी । सप्तम दलाईलामा द्वारा प्रशासनिक स्थिति संभाल ली थी । मान्चू शासक ने इस विप्लव को दबाने के लिये सेना भेजी परन्तु उसके उपयोग की आवश्यकता नही पड़ी । तिब्बत के शासक का पद समाप्त कर दिया गया । मंत्रि परिषद की शक्तियों में विस्तार किया गया । दलाईलामा को उनके अधिकार मान्चू साम्राज्य से सहयोग करने के कारण पुनः वापस कर दिये गये । चीनी अम्बानों को तिब्बती सरकार की कार्यवाही की देखरेख का उत्तरदायित्व सौंपा गया । सप्तम दलाईलामा की मृत्यु (1757 ई0) से तेरहवें दलाईलामा की सत्ता पर (1876 ई0) का लंबा कालखण्ड तिब्बत की राजनीति में रीजेण्ट द्वारा शासन का रहा । रीजेण्ट वह अधिकारी हुआ करता था जो दलाईलामा की मृत्यु के बाद नये दलाईलामा के चयन अथवा उनके वयस्क होने की स्थिति तक उनके कार्यालय की देखरेख व अधिकारों का उपभोग करता था । इस कालखण्ड के दौरान दलाईलामा पद पर आरूढ़ व्यक्ति या तो वयस्क होने के पूर्व (9 वे वा 10 वें) दलाईलामा या 25 वर्ष की आयु प्राप्त करने से पूर्व (11वें व 12वें दलाईलामा) मृत्यु को प्राप्त हो गया । तिब्बती इतिहास का यह कालखण्ड कठोर अलगाववाद का रहा । 1770 में भूटानियों द्वारा सिक्किम व दार्जिलिंग पर आक्रमण को अंग्रेजो द्वारा विफल कर दिया गया । तिब्बत व नेपाल के परम्परागत संबंध सौहार्द्रपूर्ण थे परन्तु जब हिन्दु गोरखाओं ने राजा प्रिथी नारायण के नेतृत्व में नेपाल पर जीत हासिल की और 1788 में तिब्बत पर आक्रमण कर दिया जो चीनी व तिब्बती कमाण्डरों ने राजा प्रिथी नारायण को तोहफे भेजना शुरू कर दिया । परन्तु चीनी शासक ने इस शर्त को अस्वीकार करते हुए सैन्य बल ल्हासा भेजा जिसने गोरखाओं को पीछे ढकेल दिया । यह तिब्बत में चौथा चीनी सैन्य हस्तक्षेप था । इस घटना के बाद से तिब्बत में चीनी अम्बानों का प्रभाव बढ़ गया । दलाईलामा का चयन लाटरी द्वारा करने की मुद्दे पर तिब्बत पर चीन का दबाव बढ़ा । यद्यपि चयन की तिब्बती परंपरा को मान्यता दे दी गयी । तथापि चयन के पश्चात चीनी शासक की स्वीकृति आवश्यक थी । 1792 के बाद तिब्बत के बाहरी विश्व से संपर्क कम होने लगे । 1840 एंग्लो – चाइनीज युद्व के बाद मान्चू प्रभाव घटने लगा । 1841 ई0 के डोगरा

आक्रमण का प्रतिरोध तिब्बतियों ने स्वंय किया । 1855 में पुनः गोरखा आक्रमण के समय तिब्बती सेना ने मुकाबला किया परंतु पराजित हुई । इसी बीच चीन में मान्चू शक्ति का पराभव हुआ साथ ही तिब्बत उसके अधिकार क्षेत्र से बाहर होता गया । तेरहवें दलाईलामा के समय तिब्बत पुनः बाहरी विश्व से जुड़ने लगा ।

तिब्बत में ब्रिटिश अभियान के साथ ही चीन ने अपनी पश्चिमी सीमाओं की चौकसी बढ़ा दी। 1905 ई0 के अन्त तक मान्चू जनरल Chao Erh-Feng के पूर्वी सीमा पर आगमन से लेकर 1910 तक लगभग पूरी सीमा पर चीनी आधिपत्य स्थापित हो गया । 1906 ई0 के समझौते के मद्दे नजर चीनी पक्ष द्वारा भारतीय सीमा पर एक कमिश्नर की नियुक्ति की गयी । इस नये अधिकारी ने अंग्रेजों व तिब्बतियों के मध्य सीधे संपर्क को गैर कानूनी घोषित कर दिया साथ ही 1904 के एंग्लो तिब्बती समझौते के भागीदार समस्त तिब्बती मंत्रीयों को पदच्युत कर दिया । अंग्रेजो द्वारा संपत्ति की खरीद पर, नये व्यापार केन्द्र खोलने पर तथा गारटोक तक पत्राचार प्रक्रिया पर पाबंदी लगा दी गयी । नेपाल तथा भूटान को ब्रिटिश प्रभाव से मुक्त कराने के लिये कूटनीतिक प्रयास किये गये । चीन के साम्राज्यवादी दुसाहस पर ब्रिटिश प्रतिक्रिया काफी धीमी रही । 1908 ई0 में चीन तथा ब्रिटिश के मध्य नये व्यापारिक नियमों की नीवं रखी गयी । तिब्बती मंत्री ने बैठक में उपस्थित होते हुए भी वाद विवाद में हिस्सा नहीं लिया । चीन द्वारा तेरहवीं दलाईलामा को पदच्युत किये जाने के कारण तिब्बतियों में व्याप्त रोष के कारण चीनी शासक द्वारा उन्हें पुनः पदासीन किया गया परन्तु उनका ओहदा आश्रित शासक का ही रखा गया । दूसरी ओर तिब्बत में चीनी सैन्य वर्चस्व बढ़ता गया । 1909 तक सैन्य वर्चस्व इतना बढ़ गया कि दलाईलामा ने ब्रिटेन तथा अन्य देशों से चीन के सैन्य वर्चस्व पर नियंत्रण करने की अपील की । अन्य देशों द्वारा विरोध दर्ज करने पर चीन ने इसे समझौते के तहत व्यापार मार्गो के संरक्षण के लिये की गयी कार्यवाही के रूप में परिभाषित किया । 1910 में जनरल चाओ के नेतृत्व में फौजों की तैनाती के साथ ही दलाईलामा भारत आ गये । दूसरी तरफ चीन ने तिब्बत का सारा प्रशासन अपने नियत्रंण में लेकर दलाईलामा के स्थान पर दूसरे अवतार की स्थापना के लिये खोज करने की घोषणा कर दी । ब्रिटिश भारत में दलाईलामा को शरण तो मिल गई परंतु ब्रिटिश सरकार तिब्बतियों को उनके अधिकार दिलाने में नहीं अपितु तिब्बत में अपने व्यापारिक हितों के संरक्षण के लिये चीन से वार्ता करने के लिए तत्पर हुई । तिब्बती इतिहास में पहली बार चीनी सेना तिब्बतियों की इच्छा के विरूद्व प्रविष्ट हुई थी ।

चीनी शासकों ने दो शताब्दियों तक लगातार क्षेत्र में शांति कायम रखने में धैर्य का परिचय दिया। संभवतः यंग हसबैण्ड मिशन के पश्चात् चीनियों में ब्रिटेन की महत्वकांक्षा का भय बैठ गया ।उसी के फलस्वरूप उन्होंने तिब्बत में सैन्य विस्तार को तरज़ीह दी। दूसरी तरफ ब्रिटेन ने चीन की तिब्बत पर सुजरेण्टी को स्वीकार किया। चीन की विस्तारवादी मनोवृति का ब्रिटेन द्वारा विरोध उस समय आरंभ हुआ जबकि उसने इसी तरह का जाल भूटान व नेपाल में भी फैलाना शुरू कर दिया। घरेलू स्तर पर बराबर तिब्बती जनता द्वारा चीनी प्रशासन का विरोध असहयोग दिखलाकर किया जाता रहा। 1911 में चीनी शासक की मृत्यु तथा चीन में क्रांति के साथ ही ल्हासा स्थित चीनी सेना में विखराव का आरंभ हो गया। तिब्बतियों द्वारा चीनी सेना व सम्पत्ति को नुकसान पहुंचाया गया। ब्रिटिश सरकार द्वारा दलाई लामा को अधिकृत तिब्बत तथा चीनियों के बीच मध्यस्थता का प्रस्ताव रखा गया। अंततः नेपाली सरकार की मध्यस्थता के बाद 1912 के अंत तक चीनी सेनाएँ तिब्बत छोड़कर वापस चली गई। इसके बाद दलाई लामा ने वापस लौटकर तिब्बत को स्वतंत्र राष्ट्र घोषित करते हुए राष्ट्रीय परिषद के साथ सत्ता संभाल ली। अपनी पूर्वी सीमा पर सवयं को सुरक्षित करते हुए दलाई लामा की सरकार ने तिब्बत में चीनी वर्चस्व पूर्णतया समाप्त करके स्वतंत्र तिब्बत की गरिमा को पुनर्स्थापित किया। तत्पश्चात् दलाई लामा एवं पंचेन लामा के बीच उत्पन्न मतभेद बहुत बढ़ गये। पंचेन लामा की मध्यस्थता की मांग को भारत की ब्रिटिश सरकार द्वारा अस्वीकार किये जाने पर सन् 1923 में पंचेन लामा चीन पलायन कर गये। इस प्रकार तिब्बत के घरेलू मामलों में हस्तक्षेप करने का अवसर चीन को प्राप्त हो गया। दूसरी तरफ दलाई लामा, पंचेन लामा का तिब्बत में स्वागत करने के लिए तैयार थे परन्तु इस संदर्भ में वे चीनी सेनाओं का तिब्बत में हस्तक्षेप नहीं चाहते थे। फलस्वरूप पंचेन लामा अपनी मृत्यु पर्यन्त चीन में ही रहे। 1929 व 1930 के दौरान चीन द्वारा अनौपचारिक प्रतिनिधि मण्डल तिब्बत भेजे गये ।इन प्रतिनिधि मण्डलों के साथ दलाई लामा ने स्वतंत्र राज्य के संप्रभु के तौर पर बिना ब्रिटिश सहायता के वार्ता में हिस्सा लिया। इस वार्ता के दौरान चीनी पक्ष तिब्बत को हथियार बारूद देने पर सहमत नहीं हुआ। वस्तुतः चीन में मॉचू साम्राज्य की समाप्ति के साथ ही चीनी शासकों व तिब्बती धर्म गुरू के मध्य संरक्षक–संरक्षित की मध्य एशियाई विचार धारा का अंत हो गया। ऐसी स्थिति में आपसी लेन–देन की पुरातन परंपरा का तत्कालीन परिस्थितियों में कोई औचित्य नहीं रह गया।

सन् 1930 ई. में एकबार पुनः ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो गई जब दलाई लामा ने भारत स्थित ब्रिटिश सरकार से हस्तक्षेप की गुजारिश की । 1930 में Dhargye मोनेस्ट्री ने अपने ऊपर किये गये आक्रमण से प्रतिरक्षा हेतु तिब्बत सरकार से अपील की। तिब्बती सेनायें प्रतिकार करती हुई चीनी क्षेत्र में जा घुसी। उघर चीनी सेनानायक ने इस क्षेत्र को चीनी प्रान्त सेचुआन में मिलाने की योजना बनाई। दलाई लामा व च्यांग कॉई शेक में वार्ता का कोई परिणाम निकलता न देखकर दलाई लामा ने ब्रिटिश सरकार से मामले में हस्तक्षेप की अपील की। परिणामतः तिब्बत को यांग्त्जे के पूर्व में स्थित वे क्षेत्र छोड़ने पड़े जो वास्तव में चीन के अधिकार में थे। 1932 के अंत तक क्षेत्र में संतुलित शांति स्थापित रही। इसी मध्य 1933 में दलाई लामा की मृत्यु के पश्चात् नेशनल असेम्बली के प्रधान बन बैठे। Lungshar नामक अधिकारी ने अपने प्रभाव से रेटिंग मोनेस्ट्री के लामा को रीजेन्ट नियुक्त कर दिया। जिसका अन्य लामाओं ने विरोध किया Lungshar को दंडित करके Tektra के लामा को रीजेन्ट नियुक्त किया गया। इस दौरान चीन द्वारा मिलिट्री कमाण्डर Huang –Mu- Sang के नेतृत्व में भेजे गये प्रतिनिधि मण्डल ने तिब्बत में उथल–पुथल के समय चीनी सुजरेन्टी का विचार सामने रखा जिसे तिब्बत द्वारा अस्वीकार कर दिया। चीनी पक्ष ने पंचेन लामा की ससैन्य वापसी तथा जांग क्षेत्र के पंचेन लामा को सम्पूर्ण अधिकार व सम्पत्ति वापस करने पर बल दिया। चीनी मिलिट्री कमाण्डर ने ल्हासा ने दो चीनी कर्मचारी रखने की शर्त भी मनवा ली। कुल मिलाकर चीनी पक्ष का रवैया तिब्बत पर हावी रहने का था। पंचेन लामा की चीन से तिब्बत वापसी के प्रश्न पर भी तिब्बत ने चीनी सेना की मध्यस्थता नामंजूर कर दी और यह भी स्पष्ट कर दिया कि भविष्य में चीन व तिब्बत के मध्य किसी भी समझौते में ब्रिटिश सरकार तीसरे पक्ष के रूप में मौजूद रहेगी। इस प्रकार अतीत में तिब्बत की ब्रिटिश सरकार पर छोटी–मोटी निर्भरता कालांतर में एक पड़ौसी के प्रति पूर्ण अविश्वास तथा दूसरे के प्रति विश्वासपूर्ण सद्भावना के रूप में प्रतिफलित हुई। इस विचार ने तो शक्तिशाली पड़ौसियों के मध्य स्थित तिब्बत की तटस्थता को काफी हद तक प्रभावित किया।

तिब्बत सरकार के निवेदन पर सिक्किम स्थित राजनीतिक अधिकारी बेसिल गोल्ड को बड़े स्टाफ व मिलिट्री आफिसरों के साथ ब्रिटिश सरकार ने 1937 में ल्हासा भेजा जिसका उद्देश्य तिब्बत सरकार को चीनी पंजे के भय से मुक्त कराना व इस हेतु उसे सैन्य व भौतिक सहायता प्रदान करना था। गोल्ड के बाद एच.ई. रिचर्डसन को तिब्बती मामलों का भार सौंपा गया। ब्रिटिश सहायता का आश्वासन पाकर तिब्बती पक्ष मजबूत हुआ तथा तिब्बत व चीन में शांतिपूर्ण संतुलन

कायम हुआ। हुआंग द्वारा ल्हासा में छोड़े गये अधिकारियों के समानान्तर ब्रिटिश सरकार ने भी ल्हासा में अपना एक प्रतिनिधि रखा जिसका कार्य तिब्बतियों को चीनी पक्ष द्वारा चली कूटनीतिक चालों के विरूद्ध जागृत करना व उनका उत्तर देने में पारंगत करना था। इस प्रकार तिब्बत तथा भारत स्थित ब्रिटिश सरकार के मध्य सौहार्द्रपूर्ण संबंध स्थापित रहे। 1947 में भारत के स्वतंत्र होने के बाद भी तिब्बत व ब्रिटिश भारत के मध्य सम्पन्न सभी समझौते ज्यों के त्यों बरकरार रखे गये। यहां एक बात स्पष्ट हो जाती है कि चाहे 1922 में तिब्बत नेपाल विवाद का शांतिपूर्ण समाधान हो या तत्कालीन हुआंग मिशन द्वारा तिब्बत में दो चीनी अधिकारी रखे जाने का समझौता या फिर तिब्बत को चीनी भय से मुक्त करने व उसे सैन्य भौतिक सहायता उपलब्ध कराने के लिए तत्कालीन भारत स्थित ब्रिटिश सरकार का बेसिल गोल्ड और एच.ई. रिचर्डसन के नेतृत्व में मिशन भेजना –ये सारी बातें तिब्बत के मामलों में शक्तिशाली पड़ौसियों के हस्तक्षेप को स्पष्ट करते हैं भले ही यह हस्तक्षेप तिब्बती शासक के मांग पर किया गया हो या कभी द्वितीय पक्ष की ओर से अनचाहा हस्तक्षेप रहा हो।

मंगोलिया तथा चीन के अतिरिक्त रूस ने भी तिब्बत के इतिहास में शक्तिशाली पड़ौसी की भूमिका का निर्वहन किया। अनेक मंगोल तथा कुलमुक, बुरियात इत्यादि जनजातियॉं बौद्धधर्मावलम्बी थी। 18 वीं शताब्दी की शुरूआत में ही रूस ने पूर्व तथा दक्षिण में अपनी सीमाओं को विस्तृत करना शुरू कर दिया था तथा 19 वीं शताब्दी के अंत तक ब्रिटिश भारत की उत्तर पश्चिमी सीमाओं पर दस्तक देनी शुरू कर दी। ऐसी परिस्थिति में तिब्बत रूस तथा ब्रिटिश भारत के मध्य अन्तस्थ (Buffer State) राज्य के मध्य रूप में स्थापित हुआ। रूस तथा भारत स्थित ब्रिटिश सरकार दोनों ने तिब्बत में प्रभाव क्षेत्र की स्थापना हेतु उसके साथ व्यापारिक संबंधों की स्थापना पर बल दिया। ब्रिटेन तेरहवें दलाई लामा पर बुर्रियत लामा डोरीजेफ के बढ़ते प्रभाव से बेहद चिंतित था। द्रेपंग मोनेस्ट्री में शिक्षित होने के प्श्चात् वह तेरहवें दलाई लामा का प्रशिक्षक नियुक्त किया गया। द्रेपंग मोनेस्ट्री के लिए धन एकत्रित करने के लिए रूस जाकर लौटने के बाद उसकी भूमिका रूस तथा रूसी शासक के प्रति समर्पित दिखई दी। उसने रूसी शासक की बौद्धवाद के प्रति समर्पण की भावना से दलाई लामा को अवगत कराया। तेरहवें दलाई लामा रूस के प्रति आकृष्ट हुये परन्तु जनरल असेम्बली ने अलगाववादी विचार धारा का अवलंबन करते हुए रूस के प्रति तिब्बत के झुंकाव का विरोध किया। रूसी शासक द्वारा डोरीजेफ को दलाई लामा के "अद्वितीयदूत " की उपाधि से विभूषित किया गया। इन सारी बातों से प्रभावित होकर भारत स्थित

ब्रिटिश सरकार ने क्षेत्र में राजनीतिक संतुलन बनाये रखने तथा तिब्बत में अपने हितों की संरक्षा के उद्देश्य से यंग हसबेण्ड मिशन ल्हासा भेजा जिसमें 3000 हजार सशस्त्र सैनिकों के अलावा 7000 अनुयायी भी वहां भेजे गये। तीन–चार स्थलों पर तिब्बतियों के साथ झड़पों के बाद मिशन ल्हासा पहुँचा जहाँ से तेरहवें दलाई लामा समेत डोरीजेफ पहले ही पलायन कर चुका था। इसी समय यंग हसबेण्ड तथा रीजेन्ट द्वारा 1904 का आंग्ल तिब्बती समझौता हस्ताक्षरित किया गया। इस समझौते में चीन की भूमिका नगण्य रही। समझौते पर हस्ताक्षर के लिए न तो तिब्बत ने चीन की सहमति चाही न ही ब्रिटेन ने। यद्यपि इस समझौते के दो सालों के अन्दर ब्रिटेन ने चीन के साथ आंग्ल चीनी समझौते पर हस्ताक्षर किये। इसके साथ ही चीन को तिब्बत की एकता बरकरार रखने और इस प्रकार तिब्बत में हस्तक्षेप का अधिकार भी प्राप्त हो गया। बावजूद इसके अपनी उत्तरी सीमाओं की सुरक्षा हेतु भारत की ब्रिटिश सरकार ने दार्जिलिंग व कलिम्पोंग को अपने अधीन कर लिया तथा सिक्किम व भूटान पर अपना प्रोटेक्टरेट स्थापित कर लिया। इसी मध्य तेरहवें दलाई लामा ने मंगोलिया (उर्गा) पहुँचकर जार के पूर्व निवेदन पर रूस का समर्थन प्राप्त करने के उद्देश्य से डोरीजेफ को सेण्ट पीटर्सवर्ग भेजा। एक तरफ तेरहवें दलाई लामा रूस को तिब्बत के मित्र के रूप में मान्यता दे रहे थे तो दूसरी तरफ 1907 में ब्रिटेन व रूस के मध्य पर्शिया, अफगानिस्तान तथा तिब्बत से संबंधित समझौते के विषय में रूस ने तिब्बत को अनभिज्ञ रखा। तिब्बत पर चीनी सुजरेण्टी को स्वीकार करते हुए समझौते के तहत ब्रिटेन तथा रूस दोनों ने तिब्बत के साथ बिना चीनी मध्यस्थता के पूर्व समझौता न करने का निर्णय लिया तथा अपने प्रतिनिधि ल्हासा न भेजने का भी फैसला किया। इस समझौते के दो स्पष्ट परिणाम दृष्टिगोचर हुये प्रथम तिब्बत का रूसी मित्रता का भ्रम टूटा द्वितीय तिब्बतियों ने समझौते से अनभिज्ञ रखे जाने के कारण इसे मानने से इंकार कर दिया। प्रथम परिणाम के मद्देनजर तेरहवें दलाई लामा ने पीकिंग स्थित ब्रिटिश एम्बेसेडर को अतीत की कड़वाहट भुलाने तथा ब्रिटेन व तिब्बत के मध्य नवीन संबंधों की स्थापना के लिए पत्र लिखा। 1910 के चीनी आक्रमण के समय पलायन कर भारत आने पर दलाई लामा की ब्रिटिश सरकार से मदद की अपील का कोई प्रतिफल नहीं मिला। भारत स्थित ब्रिटिश सरकार ने तेरहवें दलाई लामा के सम्मुख यह तथ्य स्पष्ट कर दिया कि यह मामला तिब्बत तथा उसके सुजरेन चीन के मध्य का है और इस बावत ब्रिटिश सरकार इसमें कुछ नहीं कर सकती। भारत स्थित ब्रिटिश सरकार से जवाब पाकर दलाई लामा ने रूसी जार से गुप्त रूप से मदद मांगी। जार ने ब्रिटिश सरकार को सूचित करते हुए मात्र अपनी शुभ इच्छायें दलाई

लामा को प्रेषित की। इस प्रकार शक्तिशाली पड़ौसियों के मध्य तिब्बत एक प्रभावशाली अन्तस्थ राज्य के रूप में नहीं वरन शक्तिहीन सहायता आकांक्षित राज्य के रूप में सामने आया। उसकी भूमिका कभी भी शक्तिशाली पड़ौसी राज्यों के मध्य संघर्ष के निर्णयकर्ता की नहीं रहीं बल्कि इतिहास स्पष्ट करता है कि तिब्बत विषयक मामलों के निर्णायक उसके शक्तिशाली पड़ौसी ही रहे। सन् 1911 में दलाई लामा के ल्हासा वापस लौटने तक मंगोलिया पर चीनी कम्युनिस्टों की मदद से रूसी कम्युनिस्टों ने अधिकार कर लिया। 1921 में श्वेत रूसियों तथा 1924 में रूसी कम्युनिस्टों द्वारा उत्तरी मंगोलिया पर अधिकार किये जाने के बाद कम्युनिस्टों का धर्म पर कहर टूटा। एक बार फिर मंगोलिया वासियों ने धर्म तथा धर्म के संरक्षक के रूप में तिब्बत को याद किया। मंगोलिया में चीन का प्रभाव बढ़ने तथा वहां चीनी किसानों को बसायें जाने के पश्चात् तिब्बत पर रूसी अतिक्रमण का खतरा मंडराने लगा। उर्गा (उलन बटोर) की ग्राण्ड लामा के चयन पर पाबंदी तथा मठों की संपत्ति जब्त किये जाने से दलाई लामा रूसियों के तिब्बत पर अतिक्रमण को लेकर काफी आशंकित थे। 1927 में सोवियत–मंगोल मिशन ल्हासा में साम्यवादी विचारधार के प्रसार का जायजा लेने पहुँचा। लगभग एक साल तक वहां रहने के बाद भी प्रतिनिधि को उपयुक्त परिस्थितियॉ नहीं मिल सकी। इस दौरान दलाई लामा एक बार फिर ब्रिटिश सरकार से विमुख होकर चीन की ओर आकृष्ट हुये। 1933 में दलाई लामा की मृत्यु के पश्चात् संघर्ष के उपरांत Tektra के लामा को रीजेण्ट नियुक्त किया गया। इस कालखण्ड के बाद चीन पर साम्यवादी कब्जे के समय तक तिब्बत का रवैया अपने पड़ौसी राज्यों के प्रति लचीली नीति का रहा। चीन पर साम्यवादी कब्जे के उपरांत तिब्बत पर साम्यवाद का खतरा मंडराने लगा। तिब्बत में सुधारवादी उपाय अपनाने के नाम पर साम्यवादी चीन द्वारा शनैः शनैः तिब्बत को अपने अधिकार क्षेत्र में लिया जाने लगा यद्यपि 1947 में नई दिल्ली मे सम्पन्न एशियाई राष्ट्रों के सम्मेलन में तिब्बत को स्वतंत्र राज्यों का दर्जा दिया गया तथापि चीन द्वारा निरंतर तिब्बत को मातृभूमि का हिस्सा बतलाकर अपना एक अधीनस्थ राज्य घोषित किया गया। 1948 में तिब्बती पासपोर्ट पर तिब्बती व्यापारिक प्रतिनिधि मण्डल भारत चीन समेत फ्रांस, ग्रेटब्रिटेन, यू.एस. ए. तथा इटली की यात्रा पर गया जो तिब्बती राज्य के सम्प्रभु स्वरूप को स्पष्ट करता है। 1 अक्टूबर 1949 को चीन में केन्द्रीय जन सरकार की स्थापना के साथ तिब्बत को तथाकथित सामंतशाही से मुक्ति दिलाने के नाम पर चीन की जनमुक्ति सेना ने तिब्बत में प्रवेश किया। फरवरी 1957 में दलाई लामा की तिब्बत वापसी के बाद जुलाई 1958 में चीन ने यह स्पष्ट कर

दिया कि पं. नेहरू सुरक्षा कारणों से तिब्बत नहीं आ सकते। 17 मार्च 1959 को दलाई लामा के तिब्बत से पलायन के बाद तिब्बत एवं तिब्बती जनता पूर्णतया शक्तिशाली चीन के हाथ में आ गये। चीन द्वारा तिब्बत के अन्यायपूर्ण अधिग्रहण पर भारत की खामोशी आलोचना का विषय बनती रही है। यदि 1907–08 तक भारत की ब्रिटिश सरकार तिब्बत पर चीनी सुजरेण्टी पर अपनी मोहर लगा चुकी थी तथापि 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद भारत उसी ब्रिटिश रवैये को अपनाने के लिए बाध्य नहीं था। परन्तु तत्कालीन नीति निर्माताओं विशेष रूप पं. नेहरू का चीन की सदाशयता में विश्वास वह कारण था जिसके पीछे भारतीय विदेश नीति चीन के साथ संबंध निर्धारण में असफल सिद्ध हो गई। पहले काशगर से काऊंसल जनरल की वापसी फिर 15 सितम्बर 1952 को ल्हासा स्थित भारतीय मिशन की काऊंसलेट जनरल में तब्दीली तत्पश्चात् 1956–57 में दलाई लामा को तिब्बत वापस भेजना, 1958 में चीन का पंडित नेहरू को ल्हासा आने से सुरक्षा इत्यादि कारणों से मना करना और फिर 1959 में चीनी अतिक्रमण के विरूद्ध उभरा हुआ तिब्बती जन आक्रोश इत्यादि घटनाएं शांतिप्रिय तिब्बत के शक्तिशाली पड़ौसी द्वारा बलपूर्ण अतिक्रमण को रेखांकित करती हैं । इतना ही नहीं रूस की तरफ से भी तिब्बत को उदासीनता का सामना करना पड़ा । तिब्बत पर साम्यवादी चीन के कब्जे के बाद सोवियत संघ की तरफ से तिब्बत को कोई सकारात्मक सहायता प्राप्त नहीं हुई । 1960 के दशक में यू.एन.ओ. के मंच पर सोवियत संघ ने तिब्बत का विरोध किया परन्तु 1979 के बाद से तिब्बत के प्रति सोवियत संघ के नजरिये में परिवर्तन आया । यू.एन.ओ. में चीन–वियतनाम विवाद के दौरान सोवियत प्रतिनिधि ने चीन की तिब्बत में कार्यवाही को आक्रमण के रूप में परिभाषित किया । सोवियत ओरियण्टल स्टडीज इन्स्टीट्यूट द्वारा किये गए अध्ययन में भी तिब्बत को चीनी कब्जे के पूर्व एक स्वतन्त्र राज्य के रूप में मान्यता प्रदान की गई । तिब्बत को लेकर रूस तथा चीन के मध्य कड़वाहट के दौरान चीनी पक्ष का सारा ध्यान विश्व के सम्मुख यह स्पष्ट करने पर रहा कि तिब्बत पर चीनी नियंत्रण उसे सामंतवाद से मुक्ति दिलाने तथा नये सुधार करने के लिए जारी है और यह भी कि सुधारों की तीव्र गति से तिब्बती जनता को हुए कष्ट के लिए उसे अफसोस है, भविष्य में सुधारों की गति धीमी रखी जायेगी तथा तिब्बतियों से संबंधित प्रत्येक मामलें को उनकी सहमति से हल किया जायेगा। चीन के उपरोक्त रवैये के बावजूद वास्तविकता कुछ और ही है। भूतपूर्व सौवियत संघ बदली परिस्थितियों में तिब्बत की सहायता को तत्पर था परन्तु चौदहवें दलाई लामा ने सोवियत प्रस्ताव को स्वीकारने के बाद भी यह स्पष्ट नहीं किया कि किन परिस्थितियों में उन्हें

सोवियत सहायता की आवश्यकता है? ऐसा प्रतीत हो ता है मानो अतीत के अनुभवों से सीख लेकर तिब्बत ने कूटनीतिक छिपाव का सहारा लेना आरंभ कर दिया है।

2. <u>धार्मिक संरक्षक की राजनीतिक संरक्षा हेतु अपील</u> :– तिब्बत में धार्मिक शासकों के शासन का आरंभ सोंगत्सेन गांपो के समय से हुआ तत्पश्चात् Mang –Song –Mang Tsen, Du-Song Mang-Po, Tri de – Tsuk Ten, Tri-Song Detsen इत्यादि शासकों के शासनकाल में तिब्बत का सैन्य व धार्मिक दृष्टि से काफी विकास हुआ। लांग डरमा के द्वितीय शासनकाल के दौरान तिब्बत की शक्ति का ह्ास होने लगा। केन्द्रीय शक्ति के छिन्न–भिन्न होने से अनेक रियासतों ने अपनी सवतंत्रता की घोषणा कर दी । 1042 ई. में विद्वान अतीश के तिब्बत पदार्पण के बाद से वहाँ धर्म गुरूओं का प्रभाव पड़ना शुरू हो गया। प्रत्येक धार्मिक संप्रदाय को किसी न किसी शासक का समर्थन प्राप्त था। कुबलई खान ने शाक्य संप्रदाय का समर्थन किया। छांग–चुब ग्याल्तसेन द्वारा शाक्य संप्रदाय को प्रभावहीन करके कार्ग्युपा संप्रदाय को समर्थन दिया गया।

इस समय तक धार्मिक शासक अथवा संरक्षक के शासन के तहत इस विचार ने जोर पकड़ लिया था कि मठों एवं मठाधीशों का कार्य राजनीतिक शासक को समर्थन देना है। मठाधीश उपासना एवं धार्मिक क्रियाओं द्वारा राज्य का हित चिंतन करेंगे और इसके एवज में राज्य उन्हें कर मुक्त रखते हुए राजनीतिक संरक्षण उपलब्ध करायेगा। रिमपुंग परिवार से संबंध रखने वाले जांग राजा करमापा संप्रदाय के संरक्षक थे। करमापा या कार्ग्युपा संप्रदाय "लाल टोपी" तथा गेलुग्पा संप्रदाय "पीली टोपी" के उपनाम से जाने जाते थे। छांग चुब ग्याल्तसेन द्वारा 1350 में तिब्बत को मंगोलों से मुक्त करवाने के समय तक चीन में मिंग साम्राज्य स्थापित हो चुका था। तिब्बत से मंगोल साम्राज्य की समाप्ति के बाद भी तिब्बत तथा मंगोलिया के मध्य घनिष्ठ धार्मिक संबंध स्थापित रहा। मंगोलिया ने सदैव तिब्बत को अपने धर्मगुरू का दर्जा प्रदान किया। तिब्बत के सर्वोच्च धर्मगुरू को "दलाई" Tale' का दर्जा मंगोलिया के अल्तान खान द्वारा ही दिया गया था। इसी प्रकार चीन में मिंग साम्राज्य के समय गये प्रतिनिधि मण्डल धार्मिक प्रकृति के थे। कुल मिलाकर तिब्बत की राजनीति धर्मोन्मुख हो रही थी। गेलुग्पा संप्रदाय के संस्थापक जोंग्खापा के शिष्य गेडुन ट्रुप्पा की मृत्यु के बाद उनकी आत्मा गेडुन ज्ञातसो नामक लामा के शरीर में अवतरित हो गई है, ऐसा तिब्बती विश्वास था। तत्पश्चात् सोनमज्ञातसो को गेडुन ट्रुप्पा का तीसरा उत्तराधिकारी नियुक्त किया गया। अल्तान खान द्वारा दलाई लामा को सर्वोच्च धर्मगुरू की उपाधि

दिये जाने के बाद से दलाई लामा पद की परंपरा तथा उनकी महत्वपूर्ण स्थिति आज भी विद्यमान है। 1642 ई. में मंगोलिया के शासक गुर्जी खान ने तिब्बत के करमापा समर्थित शासक को परास्त एवं हत्या कर Ngawang Labzang Gyatso नामक पांचवे दलाई लामा को तिब्बत का सर्वोच्च धर्मगुरू घोंषित कर दिया। मॉचू शासक शुन ची के शासनकाल के दौरान दलाई लामा की पीकिंग यात्रा के समय उन्हें तिब्बत के स्वतंत्र शासक के रूप में सम्मानित किया गया। यद्यपि गुर्जी खान उस समय तिब्बत का वैध शासक था व दलाई लामा की स्थिति उसके अधीन संरक्षित की थी। गुर्जी खान तथा वांग लोब जांग ग्यात्सो का यह संबंध कालांतर में मध्य एशिया में "राजनीतिक–धार्मिक संरक्षक–संरक्षित विचारधारा" के रूप में अग्रसर हुआ। राज्य धर्म को संरक्षण देता था तथा धर्म राज्य के बल को आध्यात्मिक समर्थन प्रदान करता था। चीन की मंगोल शासकों व तिब्बत के रीजेण्ट के रूप में दलाई लामा का यह संबंध जितना आदर्शात्मक था उतना ही वास्तविक परिस्थितियों की देन भी। गुर्जी खान के उत्तराधिकारियों ने कोकोनोर में रहना पसंद किया तथा तिब्बत के प्रशासन के प्रति उदासीनता बनाये रखी। परिणामस्वरूप दलाई लामा की पदप्रतिष्ठा में वृद्धि हुई। उन्होंने रीजेण्ट नियुक्त करने की शक्ति भी प्राप्त कर ली। चीन में मांचू साम्राज्य की समाप्ति के साथ ही चीनी शासकों व तिब्बती धर्मगुरू के मध्य संरक्षक– संरक्षित की मध्य एशियाई विचारधारा का भी अंत हो गया। परंतु तिब्बत के धर्मगुरू के रूप में दलाई लामा का गौरव पूर्वतया विद्यमान रहा। तिब्बत के सर्वोच्च धर्मगुरू के रूप में तिब्बती शासन के प्रधान के रूप में उनकी भूमिका भी धार्मिक संरक्षक के रूप में अक्षुण्ण रही है। यही कारण है कि राज्य के प्रधान के रूप में तिब्बत के राष्ट्रहित की संरक्षा के लिए कई अवसरों पर दलाई लामा ने अपने शक्तिशाली पड़ौसियों से सहायतार्थ अपील की। सन् 1930 में धार्गये मोनेस्ट्री की तिब्बती सरकार से रक्षार्थ की गई अपील के मद्देनजर चीनी तथा तिब्बती सेनायें आमने–सामने आ गई। स्थिति को शांतिपूर्ण ढंग से सुलझाने के उद्देश्य से दलाई लामा ने ब्रिटिश सरकार से हस्तक्षेप की गुजारिश की। जैसा कि पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि तिब्बत शक्तिशाली पड़ौसियों के समय–समय पर किये गये हस्तक्षेप का शिकार रहा है। 18 वीं शताब्दी की शुरूआत में रूस ने पूर्व व दक्षिण में अपनी सीमाओं को विस्तृत करना शुरू कर दिया तथा 19 वीं सदी के अंत तक ब्रिटिश भारत की उत्तरी पश्चिमी सीमाओं तक आ पहुँचा। इस प्रकार इस समय तक रूस तथा ब्रिटिश भारत दोनों तिब्बत में अपना प्रभाव क्षेत्र स्थापित करने के लिए संकल्पबद्ध हो चुके थे। बुर्रियत लामा डोरीजेफ के सघन प्रभाव में आकर तेरहवें दलाई लामा ने तिब्बत की रूस के साथ

मित्रता में भलाई देखी। इससे प्रभावित होकर तिब्बत ने अपने हितों की संरक्षा हेतु भारत स्थित ब्रिटिश सरकार से सहायता की अपील की जिसके परिणामस्वरूप यंग हसबेण्ड मिशन ल्हासा भेजा गया। तत्पश्चात् तेरहवें दलाई लामा के पलायन कर जाने के बाद तिब्बती रीजेण्ट और ब्रिटेन के मध्य समझौता हुआ जिसमें चीन की भूमिका नगण्य रही। ब्रिटेन ने इस समझौते के दो सालों के भीतर कूटनीतिक प्रयास करते हुए आंग्ल चीनी समझौता किया और इस प्रकार चीन को तिब्बत की एकता बनाये रखने के लिए उत्तरदायी बनाया। कलिम्पोंग व दार्जिलिंग पर अधिकार करने के बाद ब्रिटेन ने सिक्किम व भूटान पर अपना संरक्षकत्व स्थापित किया। संभवतः ब्रिटेन के इन प्रयासों से आशंकित होकर तेरहवे दलाई लामा ने डोरीजेफ की सहायता से रूसी समर्थन प्राप्त करना चाहा। परंतु इसी बीच 1907 में रूस तथा ब्रिटेन ने आपस में समझौता करके तिब्बत पर चीनी सुजरेन्टी स्वीकार करके बिना चीनी मध्यस्थता के तिब्बत से कभी भी कोई समझौता न करने का निर्णय लिया। रूसी मित्रता प्राप्त करने में असफल रहने पर तेरहवें दलाई लामा ने ब्रिटेन और तिब्बत के बीच नये संबंध स्थापित करने चाहे परन्तु 1910 में चीनी आक्रमण के समय भारत पलायन कर के आये तेरहवें दलाई लामा के सम्मुख ब्रिटेन ने यह स्पष्ट कर दिया कि वह तिब्बत और चीन के मध्य विवाद में कुछ भी नहीं कर सकता। ब्रिटिश सरकार से निराश होकर तेरहवें दलाई लामा रूसी जार की तरफ आकर्षित हुये परन्तु रूस से भी कोई सक्रिय सहायता प्राप्त नहीं हो सकी। उत्तरी मंगोलिया पर रूसी कब्जे तथा मंगोलिया में चीन का वर्चस्व कहीं तिब्बत तक न पहुँच जाये इस विचार से दलाई लामा भयग्रस्त हो गये। उर्गा के ग्राण्ड लामा के चयन पर पाबंदी तथा मठों की सम्पत्ति जब्त किये जाने के कारण उनका चिंतित होना स्वाभाविक था ऐसी परिस्थितियों में ब्रिटिश सहायता न मिल पाने से निराश होकर तेरहवे दलाई लामा चीन के प्रति पुनः आकृष्ट हुये। चीन का तिब्बत में हस्तक्षेप अंततः ल्हासा में भारी सैन्य जमावड़े तथा दलाई लामा को बंधक बनाने के असफल प्रयास में प्रतिफलित हुआ। 1959 को दलाई लामा भारत में शरणार्थी के रूप में प्रवेश हुये भारत द्वारा उन्हें इस शर्त पर शरण दी गई कि वे तथा उनके अनुयायी भारत भूमि से चीन के विरूद्ध कोई दुष्प्रचार अभियान शुरू नहीं करेंगे तथा चीन के विरूद्ध कोई राजनीतिक कार्यवाही नहीं की जायेगी। 1979 के बाद से सोवियत रूस ने तिब्बत मुद्दे पर सहायता की नीति तो अपनाई परंतु चौदहवे दलाई लामा ने इसके प्रत्युत्तर में यह स्पष्ट नहीं किया कि वे सोवियत सहायता को किन परिस्थितियों में स्वीकार करेंगे। चौदहवें दलाई लामा धर्मशाला हिमांचल प्रदेश में तिब्बत की मुक्ति के लिए अहिंसात्मक ढ़ग से प्रयासरत हैं ।

3. <u>तिब्बत पर चीनी नियंत्रण</u> :– तिब्बत के इतिहास पर विहंगम दृष्टि डालने के बाद एक बात स्पष्ट हो जाती है कि तिब्बत धार्मिक मनोवृत्ति से युक्त, स्वसंतुष्ट एवं विश्व राजनीति के प्रति उदासीन राष्ट्र रहा है। अतीत में तिब्बत के अन्य राज्यों के साथ संबंध या तो धार्मिक आस्था के आधार पर या फिर शक्तिशाली पड़ौसी राज्य के हस्तक्षेप से बचने के लिए ही सथापित हुए। स्वयं अपनी ओर से पहल करके विश्व राजनीति या क्षेत्रीय राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की तिब्बती महत्वाकांक्षा कभी नहीं रही। यहीं कारण है कि तिब्बत समय–समय पर अपने शक्तिशाली पड़ौसियों की बदनीयती का शिकार होता रहा है। तिब्बत पर चीनी नियंत्रण की शुरूवात सन् 1950 में चीनी कम्युनिस्टों की जीत के साथ हो गई थी। तथा तिब्बत के मध्यवर्ती इलाकें शिंघाई तथा सिंक्यांग अवरोधक के रूप में सामने थे। सन् 1950 में शिंघाई के गवर्नर Ma-Pu-Feng ने कम्युनिस्टों के आगे हथियार डाल दिये। ल्हासा स्थित सैनिकों को युद्ध की तैयारी के आदेश दे दिए गए। जनवरी 1950 में भारत नें चीन की साम्यवादी सरकार को मान्यता प्रदान कर दी। चीन की भूतपूर्व च्यांग काई शेक सरकार के स्थान पर कम्युनिस्टों को मान्यता देने का निर्णय इस विचार पर आधारित था कि चीन की कम्युनिस्ट सरकार द्वारा भारतीय सरकार को तिब्बत के विषय में ब्रिटिश सरकार से उत्तराधिकार में प्राप्त विशेष अधिकारों को स्वीकार न किये जाने की स्थिति में एक मान्यता प्राप्त सरकार से कूटनीतिक संबंध स्थापित करके सौदेबाजी करना अधिक आसान था अपेक्षाकृत संबंधहीन गैर मान्यता प्राप्त सरकार के साथ संबंध निर्धारण से । अस्तु 1950 में तत्कालीन नेहरू सरकार चीन की कम्युनिस्ट सरकार को मान्यता प्रदान कर दी गई । दूसरी तरफ तिब्बती सरकार पश्चिम की तरफ बढ़ते चीनी प्रसार से आशंकित थी। तिब्बती सरकार ने अपनी स्थिति स्पष्ट करने तथा चीन की तरफ से आशंकित संकट के मद्देनजर भारत, यूनाइटेड किंगडम तथा अमेरिका के लिए कई प्रतिनिधि मण्डल प्रेषित किये। आपसी समझ विकसित करने के लिए चीन को भी एक प्रतिनिधि मण्डल भेजा गया। सिर्फ नेपाल तथा भारत के प्रतिनिधि मण्डल आशाप्रद रहे। ब्रिटेन तथा अमेरिका से सहायता का आश्वासन प्राप्त नहीं हो सका। तिब्बतियों के प्रतिनिधि मण्डल ने भारत स्थित कम्युनिस्ट चीनी राजदूत से भेंट की जिसने उन्हें सितम्बर के अंत तक चीन जाने की सलाह दी। परन्तु चीन का उद्देश्य किसी भी तरीके से वार्ता के विचार को निष्फल करके बल प्रयोग द्वारा तिब्बत पर अधिकार स्थापित करना था। अंततः 7 अक्टूबर 1950 को पूर्वी तिब्बत पर चीनी सेनाओं द्वारा आक्रमण कर दिया गया। इसके बाद से वहां चीनी साम्यवादी पेटर्न स्थापित करने के प्रयत्न तेज कर दिए गए। इसी दौरान महात्मा बुद्ध के महापरिनिर्वाण की 2500 वीं जयंती के अवसर पर भारत पधारे दलाई लामा ने पं.नेहरू से तिब्बत में चीन की नीति एवं तिब्बतियों के प्रति क्रूर व्यवहार के प्रति तीव्र चिंता व्यक्त करते हुए भारत में रहकर

तिब्बत के लिए विश्व का नैतिक समर्थन प्राप्त करने का विचार सामने रखा। तब पं. नेहरू ने उन्हें 17 सूत्रीय समझौते को स्वीकार करते हुए जारी रखने व तिब्बत वापस लौटने का सुझाव दिया। चीन ने भी तिब्बत की स्वायत्तता का का वचन दिया। चीन ने यद्यपि अगले 6 सालों तक सुधारों की गति धीमी रखने का आश्वासन दिया तथापि पूर्वी सेक्टर के खम्पा विद्रोही सरकारी दमन से बचने के लिए ल्हासा पहुँचने लगे। कराधान तथा दण्ड के नए–नए प्रकार लागू किए गए, मठों की तथा अन्य प्रकार की सम्पत्तियाँ जब्त की जाने लगी। पूर्व के अनेक कस्बे बमबारी में ध्वस्त कर दिये गये। न सिर्फ चीन के विरूद्ध संघर्षरत गुरिल्ला खम्पा ही दण्डित किये गये बल्कि सामान्य तिब्बती जनता को भी प्रताड़ित किया गया । मठ तथा धार्मिक परिसंपत्तियों को व्यापक नुकसान पहुँचाया गया। साम्यवादी विचारधारा के तहत धर्म को व्यक्ति का शोषक तथा महात्मा बुद्ध को प्रतिक्रांतिकारी के रूप में स्थापित किया जाने लगा। कुल मिलाकर तिब्बत के धार्मिक मानस के पुनर्संस्कार का प्रयत्न किया जाने लगा। खम्पा विद्रोहियों ने सड़क, पुल तथा चीनी रसद भण्डारों पर हमला बोल दिया। चीनियों के दमन चक्र को रोकने की दलाई लामा की अपील का कोई असर नहीं हुआ। ल्हासा आए पूर्वी क्षेत्र के अधिकांश शरणार्थियों ने डर कर गुरिल्लाओं का साथ देना आरंभ कर दिया। दलाई लामा ने अहिंसा का सबक सिखाते हुए एक प्रतिनिधि मण्डल इस उद्देश्य से संघर्षरत गुरिल्लाओं के पास भेजा ताकि चीनी कहर कहीं संपूर्ण तिब्बत पर न टूटने लगे। इस प्रतिनिधि मण्डल ने चीनी पक्ष से भी गुरिल्लाओं द्वारा अस्त्र प्रयोग न किए जाने की स्थिति में उनके प्रति कोई कठोर कार्यवाही न करने का आश्वासन प्राप्त कर लिया। परन्तु साथ ही सौदेबाज चीन द्वारा तिब्बत सरकार से गुरिल्लओं के विरूद्ध चीनी अस्त्र–शस्त्रों से सुसज्जित तिब्बती सेना के उपयोग का आश्वासन मांगा गया जिसे मंत्री परिषद द्वारा अस्वीकार कर दिया गया। 7 साल के चीनी नियंत्रण के बाद पूर्वी तिब्बत पूरी तरह विनाश के कगार पर था। परन्तु चीनी पक्ष इसके लिए स्वयं को उत्तरदायी नहीं मान रहा था। इसके ठीक विपरीत तिब्बतियों में व्याप्त असंतोष के लिए चीन द्वारा दलाई लामा समेत भारत स्थित तिब्बतियों तथा भारत को जिम्मेदार ठहराया गया और उन्हें "सुधारों के प्रतिकारी" घोषित किया गया। दलाई लामा की स्थिति बेहद दुविधापूर्ण थी। एक ओर चीनी पक्ष उन्हें गुरिल्ला छापामारों का समर्थक बतला रहा था तो दूसरा पक्ष उन्हें चीनी सरकार का समर्थक मान रहा था।

इसके पश्चात् 1958 एवं 1959 में निरंतर चीन द्वारा दलाई लामा को चीन पहुँचने का आमंत्रण दिया गया जिसे दलाई लामा ने अध्ययन में व्यवधान तथा सुरक्षा इत्यादि कारणों से अस्वीकार कर दिया। 1959 में भी नोरबू लिंग्का की घेराबंदी कर दी गई। एक बार पुनः चीनी सेनानायक Tan Kuan-Sen द्वारा दलाई लामा को अपने शिविर में आमंत्रित किया गया परन्तु तब

तिब्बती जनता चीन के धोखेबाज स्वभाव से परिचित हो चुकी थी। इसके अतिरिक्त 10 मार्च को चीनी जनरल के अपने शिविर में नाटक देखने के आमंत्रण को दलाई लामा की स्वीकृति के बाद 9 मार्च को ही चीनी पक्ष द्वारा दलाई लामा से बिना किसी सुरक्षा तथा सेना के चीनी शिविर में आने की बात पर दबाव देने के कारण चीनी पक्ष संदेह के दायरे में आ गया। दलाई लामा को अपने घेरे में लेने में नाकाम चीनी पक्ष द्वारा 16 मार्च को नोरबूलिंग्का पर गोलाबारी का निर्णय लिया गया। 10 मार्च की सुबह से ही करीबन 10000 तिब्बतियों की भीड़ में नोरबूलिंग्का के इलाके को चारो तरफ से घेर लिया । उन्होंने तिब्बत को तिब्बतियों के लिए छोड़ने के नारे लगाने शुरू कर दिये। वे दलाई लामा को चीनी नियंत्रण में जाने से रोक रहे थे। अंततः दलाई लामा ने चीनी शिविर में अपने 3 मंत्री स्थिति स्पष्ट करने के लिए भेजे। चीनी पक्ष द्वारा तिब्बतियों के इस कृत्य को विद्रोह की स्थिति करार देते हुए इसके विरूद्ध कार्यवाही करने की धमकी दी गई। 11 से 16 मार्च के बीच तनाव इतना अधिक बढ़ गया कि 16 मार्च की रात्रि को अपने कुछ नजदीकी रिश्तेदारों, तिब्बती सेना की एक बटालियन के साथ दलाई लामा तिब्बत से भारत के लिए पलायन कर गये। खम्पा गुरिल्लाओं द्वारा संरक्षित–प्रशस्त मार्ग पर आगे बढ़तें हुए तूफानों बर्फबारी तथा झंझावाती वर्षा का सामना करते हुए अंततः दलाई लामा ने अपने साथियों के साथ 5 अप्रैल 1959 को भारतीय सीमा में तवांग में प्रवेश किया, 12 अगस्त को बोम्डिला पहुँचे वहां से तेजपुर पहुंचने पर उन्होंने स्पष्ट किया कि वे स्वेच्छा से पलायन करके भारत आये हैं जबकि चीन द्वारा उन्हें भारत सरकार द्वारा भड़काये जाने पर तिब्बत से पलायन करने का आरोप लगाया गया था। तत्पश्चात् वे मसूरी पहुँचे जहां से कुछ समय बाद उन्होंने शिमला स्थित धर्मशाला को अपने निवास के लिए पसंद किया। आज भी यह स्थान तिब्बत के महान धर्मगुरू दलाई लामा का निवास स्थान है। अपने मसूरी प्रवास के दौरान हुई प्रेस कॉन्फ्रेस में दलाई लामा ने पुनः यह स्पष्ट कर दिया कि वह स्वेच्छा से तिब्बत छोड़कर भारत आये हैं और यह भी कि "दलाई लामा सहित केबीनेट" जहां भी अवस्थित होगी उसे तिब्बती जनता द्वारा तिब्बत की सरकार का दर्जा दिया जायेगा। सम्प्रति दलाई लामा अपने सर्वोच्च नियंत्रण में धर्मशाला में तिब्बत की निर्वासित सरकार का संचालन कर रहे हैं।

उधर तिब्बत में 20 मार्च को चीनी पक्ष द्वारा नोरबू लिंग्का, पोटाला तथा तिब्बतियों के प्रमुख प्रदर्शन स्थलों पर बमबारी आरंभ कर दी गई। पीकिंग रेडियो से तिब्बत में विद्रोह भड़कने तथा उसे दबाने के लिए चीन द्वारा किये गये उपायों की जानकारी दी गई। चार दिवसीय संघर्ष

में कम से कम लगभग 4000 तिब्बती मारे गये। और लगभग इतने ही बंदी बनाये गये।[1]

ल्हासा विद्रोह को दबाने के पश्चात चीनी सेनाओं ने दक्षिण की तरफ बढ़ते हुए सांग–पो नदी तक के क्षेत्र से गुरिल्ला छापामारों का सफाया कर दिया । तत्पश्चात् सांग–पो नदी के दक्षिण की तरफ बढ़ते हुए उन्होंने गुरिल्लाओं को पहाड़ी क्षेत्रों तथा भारतीय सीमा की ओर खदेड़ दिया। मई के अंत में चीनी जनवादी सरकार द्वारा गुरिल्लाओं के सफायें की घोषणा कर दी गई। तिब्बत में पूर्णरूपेण सैन्य अधिनायकत्व स्थापित कर दिया गया। तथाकथित तिब्बती सरकार ने पंचेन लामा की दलाई लामा के स्थान पर नियुक्ति के साथ तिब्बती स्वायतता की घोषणा कर दी गई। भारत तथा नेपाल को तिब्बती परिक्षेत्र से जोड़ने वाले दर्रो पर चीनी सेनायें तैनात कर दी गई ताकि न तो तिब्बती शरणार्थी बाहर जा सके न ही कोई बाहरी व्यक्ति तिब्बत में प्रवेश कर सके। इस प्रकार तिब्बत को एक "बंद राज्य" में परिणित कर दिया गया। भारत के साथ संचार तथा व्यापार संबंध समाप्त कर दिये गये । कैलाश मानसरोवर की तीर्थ यात्रा रद्द कर दी गई। तिब्बतियों के लिए ,गॉव कस्बों में घूमने के दौरान पहचानपत्र रखना अनिवार्य घोषित कर दिया गया। तिब्बती जनता तथा धार्मिक स्थल चीनियों की ज्यादतियों का शिकार बने। मठों की संपत्ति लूट ली गई। धार्मिक कृतियों को नष्ट कर दिया गया। जन समुदाय के लिए मठों एवं लामाओं को दान देना प्रतिबंधित एवं दण्डनीय कृत्य घोषित कर दिया गया। लामाओं पर अनैतिकता के मनगढ़ंत आरोप लगाये गये। चाहे औरते हो या बूढ़े या बच्चे सभी को जबरिया श्रम मे लगाया गया। इतना ही नहीं अपने भोजन के लिए वे चीनी राशन पर निर्भर थे। समस्त प्राइवेट भूसंपत्तियों को जब्त करके उन पर राज्य का नियंत्रण स्थापित कर दिया गया। कम्यून व्यवस्था लागू की गई। कृषि भूमि जब्त करके बसाए गये चीनियों को खेती करने के लिए दे दी गई। भारी मात्रा में हानवंशीय चीनियों को तिब्बत में बसाया जा रहा है। तिब्बतियों को तिब्बत में ही अल्प संख्यक बनाने ,के उद्देश्य से बकौल डोलकर ल्हामों (निवासी धर्मशाला, पूर्व निवासी तिब्बत) के वहां बच्चों को पैदा नहीं होने दिया जाता, एबोर्शन कराये जाते हैं, प्रोस्टीट्यूशन कराया जाता है, अय्याशी की चीज के रूप में उनका उपयोग किया जाता है ताकि

1. मलिक, बी.एन. "द चायनीज बिट्रेयल" पृष्ठ 218, एलाइड पब्लिशर्स प्रा. लिमि. नई दिल्ली 1977

उनका ध्यान आजादी की ओर से हटे।'' ल्हाक्पा डोरजी (पूर्ववासी केंरोग, तिब्बत संप्रति मैसूर कर्नाटका के निवासी) का मत है कि तिब्बत में तिबेतन मायनॉर्टी में है। चीनी शहरों में आराम से सुविधाओं में रहते है व तिब्बती गॉव में रहते हैं।'' 1989 में तिब्बत में चीनी जनसंख्या 7.2 मिलियन थी जबकि तिब्बती मूल के लोग 6 मिलियन थे। सन् 2010 तक तिब्बत स्थित चीनियों की संख्या 20 मिलियन होने की संभावना है। इसी संदर्भ में आम्डो तिब्बत के कार्मा जीरिंग जो वर्तमान में हिमाचल प्रदेश के निवासी है, का मत है कि ''तिब्बती जनसंख्या को सीमित करने के उद्देश्य से तिब्बती मूल की युवती का चीनी युवक से विवाह कराया जाता है ताकि तिब्बत का नाम व कल्चर मिट जाये। तिब्बती युवक युवतियों को परस्पर विवाह संबंधों में नहीं बंधने दिया जाता। 1 से 2 मिलियन तिब्बतियों को चायना ने मार डाला तथा 6000 मोनेस्ट्रीज को डिस्ट्राय कर डाला।'' कुल मिलाकर स्थिति बेहद खौफनाक है। तिब्बती संस्कृति एवं मर्यादा को नष्ट करने के लिए लामाओं व ननों को व्यभिचार के लिए बाध्य किया जाता है। तिब्बती महिलाओं की अस्मिता असुरक्षित है। कई मामलों में तिब्बतियों को मृत्यु दण्ड दिया जाता है। अनेक बार सामूहिक नरसंहार किये जाते है। न सिर्फ जनसंख्यात्मक असंतुलन अपितु तिब्बत का पर्यावरण भी चीनी कब्जे की बड़ी कीमत चुका रहा है। तिब्बत एक यूरेनियम सम्पन्न राज्य है। यूरेनियम बहुल सिक्यांग प्रांत चीनी कब्जे में है। पांचवे दशक की शुरूवात में चीन–सोवियत संयुक्त उपक्रम के तहत इस इलाके की 3 यूरेनियम खानों को विकसित किया गया तथा 1955 तक इन पर चीन ने अपना पूर्ण अधिकार स्थापित कर लिया। आज तिब्बत चीन को न सिर्फ यूरेनियम उपलब्ध करवाकर न्यूक्लियर पॉवर के रूप में चीन की विश्व में भूमिका को महत्वपूर्ण बना रहा है अपितु चीन के न्यूक्लियर कूड़ेदान के रूप में भी प्रयुक्त हो रहा है। चीन द्वारा प्रयुक्त परमाणविक सामग्री के कचरे को तिब्बत के निर्जन स्थलों पर डम्प कर दिया जाता है जिससे तिब्बती भूमि, जल तथा वन संपदा प्रदूषित हो रहे हैं। हमारी सभी महत्वपूर्ण नदियों का स्रोत हिमालय हैं चीन के इस कृत्य से अंततोगत्वा हमारी जीवनदायिनी नदियॉ विषवाहनी बनती चली जा रही है। भारी मात्रा में तिब्बती वन संपदा का कटाव हिमालयी जलवायु संतुलन को बिगाड़ रहा है जिससे न सिर्फ भारतीय उप महाद्वीप वरन् वैश्विक पर्यावरण के लिए भयंकर खतरा उत्पन्न हो रहा है। सारांशतः तिब्बत पर चीनी नियंत्रण तिब्बत के सामाजिक, संस्कृतिक, पर्यावरणिक परिवेश के लिए ही घातक नहीं है अपितु चीन के हिमालयी सरोकारों के साथ भारतीय सीमाओं की सुरक्षा का विचार भी आपदग्रस्त हो गया है।

4. तिब्बती अस्मिता का सवाल :–तिब्बती संस्कृति मूलतः एक अध्यात्मपरक संस्कृति है "ॐ. मनी पदमे हम" के मूलमंत्र से अनुप्राणित तिब्बती संस्कृति की भागीरथी का अंतिम लक्ष्य निर्वाण रूपी महासागर के मार्ग का अन्वेषण तथा उसमें विलीन हो जाना है। मानसरोवर के पवित्र सलिल से अभिषिक्त तिब्बती संस्कृति एक मार्ग है, एक साधन है, स्वमानस को अन्वेषित करने का तथा स्वमानस को विश्वचेतस के साथ समायोजित करने का। ऐसी आध्यात्मिक संस्कृति के रीति रिवाज व परंपराएं भी धर्म व धार्मिकता की भावना से युक्त है। जहाँ तक तिब्बती राष्ट्रीय अस्मिता एवं तिब्बती जनजीवन पर बौद्ध धर्म और विचारधारा के गहन प्रभाव का संबंध है, प्रतीत होता है कि तिब्बत में बौद्धवाद के उदय तथा तिब्बती राष्ट्रीय अस्मिता का विचार मध्य युग की तुलना में प्राचीन काल में अधिक फला–फूला।

विशेष रूप से 11 वीं शताब्दी तथा इससे आगे की बौद्धवादी संचेतना ने तिब्बती जन की राष्ट्रीय आकांक्षाओं पर कुठाराघात किया है । ऐसा ही विचार श्री सामतेन जी कारमें ने पर्वत पूजा विषयक अपने निबंध में स्पष्ट किया है।

राष्ट्रवाद की जड़े मनुष्य के अन्तःकरण में व्याप्त दृढ़ इच्छाशक्ति, दृढ़ आत्मस्वीकृति तथा दृढ़ आत्मनिश्चय सरीखी उर्वर शक्तियों से जीवनी शक्ति ग्रहण करती है। परन्तु बौद्ध धर्म की विचारधारा इन मानवीय लक्षणों के ठीक विपरीत आत्मनिग्रह, निर्वाण, तटस्थता सरीखे गुणों से मानस का संस्कार करती है। तिब्बती मठ संस्कृति ने विदेशी धर्म व संस्कृति से किसी भी तरह के सम्पर्क को सदैव हतोत्साहित ही किया। तिब्बती इतिहास में ऐसे बहुत कम अवसर आए जब तिब्बती लामाओं ने मंगोल खान या मांचू सम्राट के साथ अपने राष्ट्रहित को सर्वोपरि रखने की चेष्टा की हो। देश भक्ति राष्ट्रवाद का प्राण तत्व है परन्तु तिब्बत में राष्ट्र या राज्य के प्रति भक्ति की तुलना में बौद्धधर्म व संस्थाओं के प्रति भक्ति का झुकाव सदैव भारी रहा है। भू–क्षेत्रीय दृष्टिकोण से यदि देखा जाये तो अपने पड़ौसी राज्यों से कटकर रहने की इस तिब्बती मनोवृत्ति का परिणाम तिब्बत के राजनीतिक अलगाव के रूप में सामने आया है। गौरतलब है कि 1916 में जब ब्रिटिश माउन्टेन क्लाइम्बर्स एसोसिएशन ने माउन्ट एवरेस्ट पर तिब्बत की दिशा से पर्वता रोहण की अनुमति प्राप्त करनी चाही उस समय तिब्बत सरकार को यह ज्ञात नहीं था कि उत्तरी एवरेस्ट तिब्बत के सीमा क्षेत्र में आता है या नहीं।

(अ) राज्य व्यवस्था :– पुनर्जन्म एवं सुकर्मो के सुफल, सुकर्म में आस्था तिब्बती जनजीवन का सर्वमान्य विश्वास है। दुरात्माओं की उपस्थिति एवं मानवता के लिए दुरात्माओ के

हानिकारक परिणामों में तिब्बतियों की आस्था उन्हें आम तौर पर बुरे कार्यो से बचने व अच्छे कार्यों को करने के लिए प्रेरित करती है। इसके लिए आम तिब्बतीजन लामाओं का आश्रय लेता है। लामा उनके लिए पृथ्वी पर बुद्ध का अवतार है जिसने सांसारिक आवागमन से मुक्ति तो पा ली है, निर्वाण की अवस्था को प्राप्त कर लिया है तथापि जो मानवता की कष्टों से मुक्ति के लिए अपनी मुक्ति का महान त्याग करके पुनः किसी शिशु के रूप में अवतार लेता है। यही कारण है कि तिब्बती जनता उन लामाओं में सर्वोच्च धर्मगुरू दलाई लामा को ईश्वर के समान दर्जा प्रदान करती है। मठ तथा धर्म के प्रति निष्ठा इतनी व्यापक है कि परिवार के चार पुत्रों में से एक अवश्य मठ को समर्पित किया जाता है। 95 प्रतिशत तिब्बती लामावाद में विश्वास रखते हैं। लामाओं का जीवन नैतिकता का प्रतीत माना जाता है। यद्यपि कई वर्षो के चीनी शासन के दौरान लामाओं पर अनैतिकता के आरोप लगाये जाते रहे हैं। बावजूद इसके आम तिब्बती जनता का अपने धर्म तथा धर्मगुरूओं में विश्वास कम होने के बजाय बढ़ा है। किसी नवजात शिशु के दलाई लामा का अवतार घोषित होते ही उसके परिवार की प्रतिष्ठा में वृद्धि हो जाती है। तीन महान तिब्बती मठों में द्रेपंग, सेरा तथा गाडेन की गणना की जाती है। ये मठ न केवल प्रतिष्ठा और सत्ता के केन्द्र है बल्कि ज्ञान के महान विश्वविद्यालय भी है। यहीं महान दलाई लामा अपना अध्ययन पूर्ण करते हैं।

तिब्बत की शासन प्रणाली मठों एवं आभिजात्य वर्ग के परस्पर सहयोग से संचालित हुआ करती थी। 109 काउंटियों वाला विशाल तिब्बती प्रदेश "तिब्बतन लोकल गवर्नमेंट" के नाम से अभिहित किया जाता था। सर्वोच्च शक्ति दलाई लामा के अधीन संचालित प्रशासन के 2 प्रमुख विभाग हुआ करते थे। प्रथम लिपिकीय, द्वितीय सामान्य जन मिश्रित लिपिकीय विभाग जिसके अन्तर्गत Kashag नामक संस्था आती थी। सर्वोच्च प्रशासनिक क्षमता सम्पन्न केबीनेट के समतुल्य इस संस्था में ज्यादातर सदस्य लामा होते थे तथा एक या दो की संख्या में सामान्य जन होते थे जो केलोन्स या मंत्रियों के रूप में कार्य करते थे। दलाई लामा की सर्वोच्च सत्ता के अधीन Yik - Tsang/ सचिवालय कार्य करता था। सामान्य प्रशासन तथा सेना के महत्वपूर्ण आधिकारिक पदों पर भर्ती प्रायः आभिजात्य वर्ग से की जाती थी। प्रायः सामान्य जन की स्थिति मठ, लामा तथा सरकार की अधीनता की होती थी। प्रायः आवंटित भूमि पर लामा कर वसूली तथा विवादों के समाधान का कार्य किया करते थे। परन्तु मठ तथा आभिजात्य वर्ग उनके न्याय क्षेत्र से अलग हुआ करते थे। तिब्बती कानून प्रायः रीति–रिवाजों पर आधारित हुआ करते थे। सामान्य जन के लिए दण्ड विधान उनके स्वामियों, मठो तथा उच्च अधिकारियों द्वारा

तय किया जाता था। सामान्य पृष्ठभूमि से आये लामाओं को गंभीर अपराध के लिए ले मजिस्ट्रेट के प्रति उत्तरदायी बनाया गया था। सेना में भी उच्च पदस्थ अधिकारियों का चयन आभिजात्य वर्गीय लोगों में से किया जाता था। मृत्यु दण्ड प्रायः अस्वीकार्य था तथापि लामा की हत्या या इसी तरह के अन्य जघन्य अपराधों के लिए मृत्यु दण्ड का प्रावधान किया जाता था। जीवन पर्यन्त चलने वाले स्थाई दण्ड के लिए अपराधी को दण्डित करने का एक और तरीका अपनाया जाता था। जिसमें अपराधी के दण्ड का उल्लेख करते हुए एक छोटा लकड़ी का पट्टा उसके गले में टांग दिया जाता था। 18 इंच के व्यास वाले इस पट्टे को इस प्रकार अपराधी की गर्दन में फंसाया जाता था की वह अलग न हो सके। इससे कम अवधि के दण्ड के लिए भी इसी तरह का पट्टा गले में टांगकर अपराधी को गली–गली घुमाया जाता था ताकि सार्वजनिक अपमान द्वारा उसे उसके अपराध का अहसास कराया जा सके। तत्पश्चात् पट्टे निकालकर कोड़ों की सजा देकर उसका राज्य से निष्कासन कर दिया जाता था। अपराधी के निष्कासन से लौटने पर उसे पुनः तभी दण्डित किया जा सकता था जबकि वह दूबारा अपराध करे या पूर्व में किये गये अपराध की पुनरावृत्ति करें।

यह भी व्यवस्था की गई थी कि यदि किसी व्यक्ति की शिकायत की गई हो परन्तु जांच के बाद वह झूटी पाई जाये तो इस स्थिति में शिकायतकर्ता को न सिर्फ जुर्माना भरना पड़ता था बल्कि कुछ स्थितियों में उसे वहीं दण्ड भुगतना पड़ता था जो उस अपराध (जो किया नहीं गया) के अपराधी को भुगतना पड़ता। इसके अतिरिक्त तिब्बती कानून शिकायतकर्ता को स्वयं अपनी खोई हुई सम्पत्ति अपराधी से वापस प्राप्त करने तत्पश्चात् न्यायालय को इस विषय में सूचित करने का भी प्रावधान करता था।

तिब्बती समाज के तीन वर्गो में विभाजित होने के कारण प्रायः एक ही अपराध के लिए तीनों वर्गो के लिए पृथक–पृथक दण्ड की व्यवस्थायें हुआ करती थी। यदि कोई अभिजात्य व्यक्ति किसी सामान्य जन की हत्या कर दे तो वह स्वतः निर्णीत माना जाता था। इसी तरह के अपराध के लिए द्वितीय वर्ग के लिए 10 ताम्बे के सिक्के हर्जाने के रूप में मान्य थे तथा समाज के तृतीय वर्ग के लिए इसी अपराध के लिए 20 ताम्बे के सिक्के देय थे। हत्या के पीछे कोई उपयुक्त कारण न पाये जाने पर मजिस्ट्रेट जुर्माना भी कर सकता था।[1]

(ब) संस्कृति व रीति–रिवाज :– किसी भी समाज का आधा हिस्सा समाज में महिलाओं की स्थिति तथा उनके योगदान से अपना स्वरूप ग्रहण करता है। तिब्बत में पुरूषों के मुकाबले महिलाओं की संख्या का प्रतिशत (51.4 प्रतिशत महिलायें, 48.6 प्रतिशत पुरूष) अधिक है।[1]

---

1. सु इन हान–"ल्हासा –द ओपन सिटी, पृष्ठ 137, जोनाथन केप पब्लिकेशन, 1977

तिब्बत में शारीरिक श्रम एक ऐसा तथ्य है जिसके चलते तिब्बती समाज में महिलाओं की स्थिति महत्वपूर्ण हो जाती है।

आर्थर वेली द्वारा अनुदित चीनी कथा 'The Monkey' में एक ऐसे साम्राज्य का उल्लेख मिलता है। जहां महिलायें शासिका हुआ करती थी व पुरुष उनके अधीन कार्यकर्ता। वस्तुतः ये कथा तिब्बत की प्राचीन समाज व्यवस्था को इंगित करती है। तिब्बत के प्रथम शासक सोगत्सेन गाम्पो ने भी महिलाओं को महत्वपूर्ण प्रतिष्ठा उपलब्ध करवा रखी थी। शनै–शनै लामावाद तथा चीन के कन्फ्यूशियसवाद के वर्चस्व के कारण तिब्बत के मातृ सत्तात्मक समाज में नारी की प्रतिष्ठा घटने लगी। लामावाद ने नारी शरीर के प्रति आकार्षण को कम करने के लिए उन पर तरह–तरह के प्रतिबंध आयत्त किये जैसे महिलायें बाहर निकलते समय अपने चेहरे पर काली वार्निश लगाएं ताकि उनकी कुरूपता उनके आकर्षण को ढक ले। धीरे–धीरे तिब्बत के उच्च अभिजात वर्गीय समाज में तो स्त्री की गरीमा बनी रही परन्तु सामान्य तथा निम्न वर्गीय तिब्बतियों के मध्य नारी की प्रतिष्ठा गिरने लगी। बावजूद इसके तिब्बत की सामान्य एवं निम्न वर्गीय नारी अपने शारीरिक श्रम की बदौलत आज भी तिब्बती जन जीवन का मूल आधार है। उसे हम एक ऐसे हाशिये पर खड़ा पाते है जहां से तिब्बती समाज की वर्णमाला प्रारंभ होती है। लामावाद ने मातृसत्तात्मक समाज की प्रतिष्ठा को धूल में मिला दिया। स्त्रियों को अपवित्र प्राय माना गया। उनके लिए लामाओं का स्पर्श करना निषिद्ध कर दिया गया। साथ ही सामान्य जन के लिए भी स्त्रियों का पुरुषों के घुटनों के उपर नजर उठाना निषिद्ध घोषित कर दिया गया। एक अन्य विचित्र प्रथा भी देखने में आती है कि यदि अवैध यौनाचार स्त्री की सहमति के बगैर किया गया हो तो स्त्री को दण्डस्वरूप एक चांदी का सिक्का तथा सहमति से किये जाने की स्थिति में उसे तीन चांदी के सिक्के राज्य को देने पड़ते थे।

विवाह तथा वैवाहिक जीवन के विषय में उच्च आभिजात्य वर्ग को जो स्वतंत्रतायें प्राप्त हुआ करती थी उनसे समाज क अपेक्षकृत निम्न वर्ग अछूता था। दास वर्ग ने भी स्त्रियों की स्थिति बेहद दयनीय थी। उच्च वर्गीय महिलायें सभी बंधनों से मुक्त प्रायः स्वतंत्र जीवन व्यतीत किया करती थी यद्यपि विवाह माता–पिता की अनुमति से ही आयोजित किये जाते थे। सम्पत्ति का अधिकार उच्च आभिजात्य वर्गीय महिलाओं को प्राप्त हुआ करता था। तलाक पारस्परिक सहमति का विषय था जिसमें सम्पत्ति का दोनों पक्षों में समान बटंवारा तथा बालकों का पिता के पक्ष में व बालिकाओं का माता के पक्ष में बंटवारा प्रचलित प्राय था। उच्च अभिजात्य वर्गीय लोगों में बहुपत्नी प्रथा प्रचलित थी वहीं दूसरी ओर चरवाहे सरीखे वर्गो में बहुपति प्रथा प्रचलित थी।

---

1. सु इन हान– "ल्हासा द ओपन सिटी– ए जर्नी टू टिबेट", पृष्ठ 136, जोनाथन केप पब्लिकेशन, 1977

इसका कारण स्त्रियों का अभाव नहीं था अपितु घर की जमीन का कई पुत्रों में बंटवारा होने से रोकना था जो उसी स्थिति में संभव था। जबकि घर के सभी युवा पुत्र एक ही स्त्री से विवाह करते। इस प्रकार उस स्त्री से उत्पन्न समस्त संताने परिवार के बड़े पुत्र की संताने समझी जाती और कालांतर में इन संतानों में से पुरूष संतानों के लिए भी विवाह की यही प्रथा स्वीकार्य होने के कारण जमीन के उस छोटे से टुकड़े का बंटवारा होने से बचा रहता। समाज के निम्न वर्ग के लिए "विवाह" संस्था महत्वहीन थी। वे अपने मालिक की अनुमति से ही विवाह कर सकते थे इसके बाद भी विवाह संस्था उनके लिए स्थाई महत्व की नहीं थी क्योंकि जीविकोपार्जन के उद्देश्य से उन्हें अपने परिवार को प्रायः छोड़ना पड़ता था। महिला कामगारों को उनके द्वारा किये जाने वाले परिश्रम के कारण प्रायः उनके मालिक मुश्किल से कार्यमुक्त करते थे। फलतः विवाह की स्थिति में उनके पति को अपना घर छोड़कर आना पड़ता था न कि स्त्री पति के घर जाती थी। इस प्रकार शारीरिक, मानसिक दृष्टि से तिब्बत की सामान्य व निम्न वर्गीय नारी पुरूष शोषण का शिकार रही है। तिब्बत में साम्यवादी चीन द्वारा चलायी गई सांस्कृतिक क्रांति की मुहिम के बाद पुरातन परंपराओं से तिब्बती जन सामान्य के मोहभंग के बाद की स्थिति में तथाकथित परिवर्तन आया है। बहुपति, बहुपत्नी एवं विवाह की अन्य प्रचलित प्राय परंपराएं बदल गई है। जन सामान्य के जीवन में आई स्थिरता के कारण उपरोक्त परंपराएँ स्थाई विवाह परंपरा के सूत्र के रूप में परिवर्तित हो चुकी है।

जहां तक तीज–त्योहारों, उत्सवों का संबंध है तिब्बत की संस्कृति इस उत्साह से परिपूर्ण है। मोनलम उत्सव तो अब तिब्बतियों की स्वतंत्रता की इच्छा व्यक्त करने का प्रतीक बन गया है तथा जाम्पा उस पवित्र राष्ट्रीय पर्व का प्रसाद।

तिब्बती संस्कृति में नृत्य तथा संगीत का भी विशेष महत्व है। कठिन परिश्रम के बाद संगीत का मधुर अमृत जैसे तन के साथ उनके मन प्राण को भी पुनर्नवा कर देता है। तिब्बत पर चीनी कब्जे के बाद भी उनकी सांस्कृतिक धरोहर का यह जज्बा शिशुविद्यालयों में संगीत शिक्षा के रूप में तथा उत्सवों के दौरान नृत्य प्रदर्शनों के रूप में विद्यमान है। यद्यपि उस पर भी साम्यवादी चोले का रंग चढ़ गया है लेकिन आम तिब्बती की आत्मा अब भी तिब्बत की स्वतंत्रता तथा अपने निर्वासित नेता दलाई लामा के साथ जुड़ी हुई है।

(स) <u>भाषा एवं साहित्य</u> :– तिब्बती संस्कृति के वाहकों में महत्वपूर्ण स्थान तिब्बती भाषा को भी प्राप्त है। विश्व की अन्य भाषाओं की भाँति तिब्बती भाषा की भी अनेक बोलियाँ, उपबोलियाँ हैं जो थोड़ी–थोड़ी दूरी पर स्थान परिवर्तन के कारण बदलती रहती है। तिब्बत पर साम्यवादी कब्जे के समय तिब्बती भाषा तीन मानदण्डों के रूप में प्रचलित प्राय थी। एक रूप तो वह जो लामाओं द्वारा लिखा व बोला जाता था जो प्रायः धार्मिकता के सूत्र में आबद्ध था,

द्वितीय रूप जनभाषा का था जो स्थानानुसार परिवर्तनशील था। इनके बीच में भाषा का एक अन्य रूप भी विद्यमान था जो सामंतो एवं अभिजात्य वर्ग द्वारा प्रयुक्त किया जाता था। अत्यधिक धार्मिकता के कारण तिब्बती भाषा धार्मिक एवं दार्शनिक अभिव्यक्ति के लिहाज से काफी प्रौढ़ है परन्तु विज्ञान तथा नवीनतम वैज्ञानिक विषयों यथा भौतिकी, अंतरिक्ष भौतिकी, संगणक विज्ञान, सूक्ष्म जैविकी के हिसाब से तिब्बती भाषा की विपन्नता सर्व ज्ञात है। सन् 1959 तक तिब्बती भाषा में सामान्य वैज्ञानिक शब्दों जैसे अणु–परमाणु के लिए कोई शब्द नहीं हुआ करता था। यद्यपि सामान्य गणितीय धारणाओं के अध्ययन् के लिए तिब्बती भाषा पर्याप्त थी।

अवैज्ञानिकता के अतिरिक्त एक सामान्य वर्ग की वस्तुओं को अभिहित करने वाले सामान्य शब्द का अभाव भी तिब्बती भाषा का दोष हुआ करता था। उदाहरणार्थ समाधि एवं अन्तर्चेतना की स्थिति के लिए अनेक शब्द प्रचलित है परंतु ''नींद'' के लिए किसी सामान्य शब्द का अभाव है, वृक्षों की लगभग सभी प्रजातियों के नाम हैं परंतु ''वृक्ष'' शब्द को अभिहित करने वाले शब्द का अभाव है।

इसके अतिरिक्त सैद्धांतिक–दार्शनिक भाषा के लिखित एवं दैनिक प्रयोग के मध्य विद्यमान अन्तर को कम करना भी बेहद आवश्यक था ताकि एक सामान्य दैनिक प्रयोग की भाषा के रूप में तिब्बती भाषा का विकास किया जा सकें।

इन समस्याओं से मुक्ति के लिए सन् 1956 में चीन अधिकृत तिब्बत में एक बारह सदस्यीय भाषा समिति बनाई गई जिसका प्रमुख कार्य ''हान–तिब्बती शब्दकोष'' का निर्माण करना तथा आवश्यकतानुसार नये शब्दों की रचना करना था। परन्तु कमेटी का कार्य मात्र अभिजात वर्गीय होने तथा जन सामान्य में अप्रचलित रहने के कारण फलदायी सिद्ध नहीं हुआ।

'स्टेण्डर्ड तिब्बतन'' या 'मानदण्ड तिब्बती' भाषा के विकास के लिए आवश्यकता इस बात की है कि तिब्बती भाषा के दार्शनिक एवं जनभाषाई स्वरूप के मध्य भाषा का सर्वसामान्य रूप विकसित किया जाये जो न सिर्फ दैनिक प्रयोग के काम आये बल्कि शिशु विद्यालयों से लेकर तिब्बती विश्वविद्यालयों में अध्ययन का माध्यम बन सके। इस दिशा में एक लाख से ऊपर नये शब्द तथा शब्द विन्यास तिब्बती भाषा में आविष्कृत किये गये हैं।

तिब्बती साहित्य की मौखिक परंपरा के अतिरिक्त लिखित परंपरा जैसे उपन्यास, नाटक तथा कहानियों का प्रायः अभाव था। जो थोड़ा बहुत लिखित साहित्य था उसका ताना–बाना धार्मिक था। सन् 1959 के पूर्व तिब्बत में पुस्तक प्रकाशन की कोई व्यवस्था विद्यमान नहीं थी। मठों में धार्मिक साहित्य के प्रकाशन के लिए लकड़ी के गुटकों का प्रयोग किया जाता था जिनमें प्रायः काली व लाल स्याही प्रयुक्त होती थी। प्रकाशन यंत्रों के अभाव के कारण पत्र–पत्रिकाओं में लेख तथा कहानियों की परंपरा का विकास नहीं हो सका। तिब्बत से बाहर प्रकाशित होने वाला तिब्बती

समाचार पत्र "टिबेट मिरर" या "द न्यूज मिरर" था जो कलिम्पोंग से रेव. थारचिन द्वारा प्रकाशित किया जाता था। तिब्बती लिपि के अनुकूल टाईप सेट का विकास सन् 1951–52 में किया गया। 4 मई 1955 को "ब्रीफ न्यूज" नामक प्रथम समाचार पत्र तिब्बत में प्रकाशित किया गया जिसकी सप्ताह में तीन हजार प्रतियाँ निकाली गई।

शिन्हुआ प्रिंटिंग प्रेस द्वारा ल्हासा, लिन्डजे तथा ग्यान्तजे में फुलस्केल प्रिंटिंग कारखाना स्थापित किया गया जो "टिबेट डेली" के स्थानीय, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संस्करण प्रकाशित करता है। प्रतिदिन इसकी पंद्रह हजार प्रतियाँ प्रकाशित की जाती है।

इसके अतिरिक्त पिछले कुछ समय के दौरान तिब्बत में साहित्य के प्रचार–प्रसार के दौरान लगभग चार करोड़ पुस्तके प्रकाशित की गई जो साहित्य, राजनीति, ज्ञान–विज्ञान जैसे विविध विषयों से संबंधित थी। वस्तुतः तिब्बत में चीनी साम्यवादी शासन का टाईप सेट या प्रिंटिग प्रेस विकसित करने का प्रयास चीनी तथा तिब्बती भाषा के मध्य विद्यमान संवादहीनता को दूर करना था। तिब्बत पर साम्यवादी कब्जे की शुरूआत में ही साम्यवादी चीनी शासन के सम्मुख एक वास्तविकता स्पष्ट थी कि उन्हें तिब्बतियों को अधुनातन राजनीतिक विचार धाराओं यथा मार्क्सवाद, लेनिनवाद, सोवियत रिवीज़निज्म तथा अमेरिकी इंपीरियलिज्म के विषय में समझाने के लिए एक सम्यक भाषा की आवश्यकता थी। इसके लिए सन् 1950 में आम्डो से एक समाचार पत्र प्रकाशित किया गया जिसमें अन्य सामंतों के अलावा पंचेन लामा तथा Geshe Shereb Gyatso के भाषण प्रकाशित किये जाते थे। चायनीज कम्युनिष्ठ पार्टी की मूलभूत नीतियों को तिब्बत में लोकप्रिय बनाने की दृष्टि से पीपुल्स लिबरेशन आर्मी को अष्ट बिन्दु घोषण पत्र तिब्बती भाषा में अनूदित करके बटंवाया गया। इन सब प्रयासों के लिए तिब्बती भाषा का एक ऐसा सर्वसामान्य स्वरूप विकसित किया गया जिसका उद्देश्य साम्यवादी चीन के तिब्बत पर कब्जे को सांस्कृतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक एवं प्रगतिशील दृष्टिकोण से उचित व सही सिद्ध करना था। इस प्रकार एक सामान्य बोलचाल की तिब्बती भाषा का विकास करने के क्रम में सन् 1960 में तिब्बती भाषा के सैद्धांतिक व व्याकरणिक स्वरूप में कुछ परिवर्तन किये गये। तिब्बती लिपि के पांच मूल अक्षर (' brel-sgra), gi, gyi, kyi, yi & ' i हैं। जिनका प्रयोग आगे सफिक्स जोड़कर तथा व्यंजन जोड़कर किया जाता है। बोलचाल की तिब्बती भाषा में उपरोक्त पांचों अक्षरों के स्थान पर सिर्फ का gi प्रयोग होने के कारण gyi, kyi का साधारण प्रयोग खत्म कर दिया गया। यद्यपि बाद के प्रकाशनों में इनका प्रयोग पुनः आरंभ कर दिया गया। सांस्कृतिक क्रांति के दौरान तिब्बंती भाषा के अभिजातीय मानदण्ड की समाप्ति का आह्वान करने के साथ "कामगार वर्ग की भाषा" अपनायें जाने वर विशेष बल दिया जाने लगा। भौतिक पदार्थ की अहमन्यता पर आधृत मार्क्सवादी दर्शन के मूलाधार वर्ग, वर्ग संघर्ष, बुर्जुआ एवं

सर्वहारा वर्ग, कार्य समिति तथा समाजवाद इत्यादि शब्दों से तिब्बती जनता पूर्णरूपेण अपरिचित थी। तब प्रश्न उपस्थित हुआ कि किस प्रकार इन मूल अवधारणाओं से तिब्बती जनसामान्य को परिचित कराया जाय? इसके साथ ही खोज आरंभ हुई इन शब्दों की अभिव्यक्त कर सकने वाले समान तिब्बती शब्दों की । शब्द "वर्ग" या "क्लास" को gral-rim' के नाम से अभिहित किया गया जिसमें gral' शब्द अंग्रेजी 'row' या 'rank' को स्पष्ट करता था तथा 'rim' शब्द 'order' को, जिनका संम्मिलित अर्थ 'row' 'rank order' के रूप में स्पष्ट हुआ। अर्थात एक समान पंक्ति या ओहदे के व्यक्ति एक क्लास के व्यक्ति माने गये। इसी प्रकार वर्ग संघर्ष को स्पष्ट करने के लिए 'gral -rim' में 'thab -rtsod' शब्द विन्यास और जोड़ा गया जिसमें 'thab' से आषय 'combat' या संघर्ष से था तथा 'rtsod' से तात्पर्य बहस या वाद विवाद से था। इस तरह कई शब्द विन्यासों को जोड़कर नये शब्दों की रचना की गई । इसी प्रकार प्रतिकियावादी, प्रतिक्रांतिकारी, अभिजात्य वर्ग, बुर्जुआ वर्ग, कामगार वर्ग के लिए नये–नये शब्दों का निर्माण तिब्बती भाषा में किया गया। सन् 1959 के तिब्बत चीन संघर्ष में तिब्बत के समर्थकों को प्रतिक्रियावादी या 'log -spyod-pa' माना गया। 'log' से तात्पर्य बदलाव से था जबकि 'spyod' शब्द "मेनर" को ध्वनित करता था, प्रतिक्रांतिकारी को 'gsar-brje'i ngo-log-pa' अभिहित किया गया जिसका अर्थ था नवीनता के विरूद्ध अर्थात जो भी व्यक्ति तिब्बत में चीनी कम्युनिष्ट शासन द्वारा लाये गये सुधारों, नवीनता का विरोधी था उसे प्रतिक्रांतिकारी के रूप में गंभीर राजनीतिक अपराध का दोषी माना गया। अभिजात्य वर्ग को 'byor-idan gral-rim' कहां गया जिसमें 'byor' का अर्थ है धन तथा 'idan' शब्द सम्पन्नता को अभिहित करता है। 'gral-rim' का अर्थ पूर्वोक्त ही है। कामगार या सर्वहारा वर्ग को 'byor-med gral rim' अभिहित किया गया जिसमें 'byor'शब्द धन का, 'med' शब्द रहित का सूचक था। मध्यम वर्ग को 'byor'-'bring-gral rim' अर्थात मध्य धन वर्ग घोषित किया गया। वर्क टीम तथा समाजवाद को 'las-don-ru-khag' क्रमशः तथा ' spyi-tshogs ring-lugs' से अभिहित किया गया। समाजवाद spyi-tshogs' का अर्थ क्रमशः जन सामान्य व 'tshogs' का अर्थ एकत्रित होना माना गया। व 'ring- lugs' अंग्रेजी के "इज्म" या वाद के रूप में मान्य किया गया। जिसमें 'ring' से तात्पर्य लंबी व ' lugs' का निहितार्थ परंपरा के रूप में मान्य किया गया अर्थात समाजवाद एक ऐसी लंबी परंपरा के रूप में मान्य किया गया जो लोगों के सामूहिक कल्याण को लक्ष्य मानकर चलता है तथा जिसमें निजी फायदे के लिए कोई स्थान नहीं होता।

एक नये तरह की आम बोलचाल की तिब्बती भाषा प्रयोग करने का उद्देश्य समाजवादी किस्म के तिब्बती समाज की रचना करना था। जो मार्क्स तथा माओ के समाजवादी सिद्धांतों को

स्वीकार करता हो। जिसका एक बड़ा उद्देश्य कम्युनिष्ट पार्टी की नीतियों को जन साधारण तक अनूदित करके पहुंचाना भी था। "टिबेट डेली" के सभी अंकों में माओं के भाषण व कृत्य प्रकाशित किये जाते थे। पार्टी की नीतियों को सैद्धांतिक पत्रिका 'redflag (dar dmar)में तिब्बती भाषा में प्रकाशित करके साम्यवादी तिब्बतियों के मध्य वितरित किया जाता था। कुल मिलाकर चीन अधिकृत तिब्बत में तिब्बती भाषा के आम मानदण्ड का विकास किसी बौद्धिक सहिष्णुता का परिचायक न होकर साम्यशाही की नीतियों के प्रचार प्रसार के उद्देश्य से किया गया जैसा कि जीरिंग शाक्या ने अपने लेख "पॉलीटिसाइजेशन एण्ड द टिबेटन लेंग्वेज" में स्पष्ट किया है। 'To some extent this has been a technical response, in so far as the translation and innovation of the new lexicon are product of political needs rather than of a genuine intellectual and creative exchange of ideas."

इस प्रकार के प्रयास यही इंगित करते हैं कि एक पूर्णतया भिन्न सांस्कृतिक, सामाजिक, भाषायी पृष्ठभूमि वाले शासन के अनुकूल भाषा के विकास के लिए एक अद्‌भुत शब्दावली एवं शब्द विन्यास अस्तित्व में आया। भाषिक विकास एवं राजनीतिक भौतिकवादी दर्शन के सम्मिश्रण से कुछ जटिल भाषायी आविष्कार सम्मुख आये।

साहित्य :– तिब्बती साहित्य के विषय में व्यापक चर्चा न करके यहीं कहना पर्याप्त होगा कि तिब्बत में आम तिब्बती भाषा के विकास के पीछे जो राजनीतिक विवशताऐं थी वहीं साम्यवादी बंधन साहित्य के स्वतंत्र विकास पर भी था यही कारण है कि मार्क्स, लेनिन व माओ के सैद्धांतिक विश्लेषणों के अतिरिक्त तिब्बत में पिछले कुछ सालों से अन्य भाषाओं की अनूदित रचनाऍ अंगुलियों पर गिनने लायक ही है। शेक्सपीयर की coriolanus तथा चीनी साहित्य की "द ड्रीम ऑफ द रेड चेम्बर", "द जर्नी टू द वेस्ट" एवं सुंग्जीकृत "आर्ट ऑफ वार" इत्यादि पुस्तकों के अतिरिक्त कुछेक जापानी व रूसी साहित्य की पुस्तके तिब्बती भाषा में साहित्य के नाम पर अनूदित मिलती है।

तिब्बत से बाहर अवश्य तिब्बती भाषा व साहित्य के विकास के कुछ कार्य हुये हैं। तिब्बती संस्कृति, परंपरागत तिब्बती विज्ञान तथा तिब्बती भाषा पर कुछ पुस्तके लिखी गई हैं। तिब्बत के राजनीतिक इतिहास पर भी कुछ महत्वपूर्ण पुस्तके तिब्बती भाषा में लिखी व अंग्रेजी में अनूदित की गई है जिनकी सूची नीचे दी जा रही है :–

(1) Bod kyi rtsa-khrims (The Constitution of Tibet , bilingual text in Tibetanl & English, New Delhi, 1963

(2) 'Gro-ba-mi' i thob-thang gi yig-cha (The universal Declaration of Human Rights (Tibetan Translation) Dharmashala, 1970)

(3) Bod kyi srid-don rgyal-rabs (A Political History of Tibet) by Tsepon Shakabpa, Kalingpong, 1976

(4) - Bod kyi lo-rgyas phyogs-bsdus Bodday Bod-mi(Tibetan History, Tibet & Tibetans), by Tsultrim Kelsang, New Delhi 1980.

इस अध्याय में उपरोक्त बिन्दुओं का विश्लेषण करने का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि चीनी कब्जे के तहत तिब्बती संस्कृति, जनजीवन, भाषा व साहित्य स्वतंत्र विकास को अग्रसर नहीं हुये। भाषा व साहित्य के क्षेत्र में जो प्रगति हुई है वह चीन की तिब्बत में साम्यवाद के प्रचार–प्रसार के लिए तिब्बती भाषा को माध्यम बनाने के कारण हुई है। इस प्रकार तिब्बती भाषा एवं संस्कृति चीनी कब्जे के अधीन पंगु ही हुई है, विकसित नहीं।

5. <u>प्रभाव क्षेत्रों से बाहर तिब्बत का स्वतंत्र अस्तित्व</u> :– तिब्बती इतिहास का अध्ययन करने के बाद यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अतीत में चीन व स्वतंत्र तिब्बत के बीच क्षेत्रीय शक्ति राजनीति का खेल जारी रहा है। दोनों पक्षों में से जो भी पक्ष एक काल खंड विशेष में शक्तिशाली रहा उसने दूसरे पर अतिक्रमण करने का प्रयत्न किया। ऐसी स्थिति में वर्तमान में चीन का इतिहास की दुहाई देते हुए तिब्बत पर कब्जा अवैध है। संस्कृति, भाषा , विचारधारा किसी भी दृष्टि से चीन और तिब्बत में कोई साम्यता नहीं है। चीनी साम्यवादी भौतिक यथार्थवाद एवं तिब्बती दार्शनिकतावाद का कोई मेल नहीं। अतीत में चीन और तिब्बत के पारस्परिक संबंध "संरक्षक व धर्मगुरू" के पवित्र बंधन से बंधे थे न कि जोर–जबरदस्ती व शक्ति के दण्ड के भय से। इस विचारधारा को स्पष्ट करें के बाद प्रश्न उपस्थिति होता है कि प्रभाव क्षेत्र के बाहर तिब्बत का स्वतंत्र अस्तित्व क्या संभव है ? अतीत में तिब्बत अनेक अवसरों पर चीन की तरफ आकर्षित हुआ है, कई अवसरों पर उसने रूसी सहायता की आशा की है तथा कई बार मोहभंग की स्थिति में भारत की ब्रिटिश सरकार ने सहायता का आह्वान किया। वर्तमान में भी चीन अधिकृत तिब्बत की ज्यादातर जनता साम्यवादी अभियानों एवं कार्यशालाओं के "ब्रेन वॉश अभियान" के बाद चीनी साम्यवादी सुधारों की समर्थक बन गई है। इसी परिप्रेक्ष्य में कई तिब्बती स्वर तिब्बत के भूतपूर्व शासन व परंपराओं के खिलाफ मुखर हो उठे हैं। दूसरी तरफ निर्वासित

तिब्बती सरकार के तिब्बत को चीन से मुक्त कराने हेतु कूटनीति प्रयासों की सघनता व तीव्रता भी पर्याप्त नहीं है। यदि कुवैत को इराक के कब्जे से मुक्त कराने के लिए बहुराष्ट्रीय सेनाएँ लामबंद हो सकती थी तो चीन से तिब्बत की मुक्ति के लिए एकजुट अन्तर्राष्ट्रीय प्रयत्न क्यों नहीं किये जाते? कारण स्पष्ट है कि व्यापारिक दैत्य चीन के साथ आज विश्व की कोई भी महाशक्ति अपने संबंध नहीं बिगाड़ना चाहती और तिब्बत में किसी महाशक्ति के कोई भी हित प्रत्यक्ष रूप से न्यस्त नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति बराबर की शक्ति, सौदेबाजी एवं भयादोहन के कुछ सामान्य सिद्धांतों को लेकर चलती है और खेद की बात यह है कि निर्वासित तिब्बती सरकार के पास इनमें से कोई भी पांसा शेष नहीं है। नेपाल अपने स्वतंत्र अस्तित्व के कारण भारत के साथ "चीनी कार्ड" खेल सकता है, बर्मा व भूटान भी भारत को चीन का पक्ष लेकर धमका सकते हैं। परन्तु निर्वासित तिब्बती सरकार अपने शरणदाता के विरूद्ध सर नहीं उठा सकती न ही भारत सरकार अपने सीमावर्ती हितों व सुरक्षा के मद्देनजर तिब्बती पक्ष का समर्थन करने का साहस जुटा सकती है। दक्षिण एशियाई क्षेत्र में पाकिस्तान–चीन गठजोड़ के चलते तिब्बत का पाकिस्तान से अपने मुद्दे पर समर्थन प्राप्त करना असंभव है, इसमें दोनों देशों की सांस्कृतिक विभिन्नता भी उत्तरदायी है। श्रीलंका एक बौद्ध देश होते हुए भी तिब्बत का यथोचित समर्थन नहीं करता। दलाई लामा को शांति का नॉबेल पुरस्कार दिये जाने के बाद तिब्बती मुद्दे पर समर्थन की उम्मीद बढ़ी थी परन्तु वह नाकाफी रही। यहां इन सब विचारों से उल्लेख का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि क्या तिब्बत अपने वश पर अपनी स्वतंत्रता हासिल कर सकता है और उससे भी आगे क्या बिना किसी बाह्य सहायता से अपनी आंतरिक व बाह्य सम्प्रभुता एवं अखंडता कायम रख सकता है? इतिहास यह स्पष्ट करता है कि तिब्बत अनेक बार चीनी बदनीयती का शिकार हो चुका है तथा किसी भी प्रकार तिब्बती स्वायत्ता के मुद्दे पर चीन के साथ समझौते के बाद भी वह चीनी कूटनीति के खूनी पंजों से मुक्त नहीं हो सकता।

चीनी साम्यवादी पार्टी का जन्म (1 जुलाई सन् 1921) ही राजनीतिक शक्ति को बंदूक की नली से हासिल करने की विचारणा के साथ हुआ है।[1]

सैन्य शक्ति संगठित करके बिछड़े हुए बच्चों के रूप में आस–पास के राज्यों तिब्बत तथा मंगोलिया को मातृभूमि की क्रोड़ में वापिस संरक्षित करने के उद्देश्य से 1 अगस्त सन् 1927 को पीपुल्स लिबरेशन आर्मी का विधिवत गठन किया गया। जिसने मुक्ति की प्रक्रिया का आरंभ करते हुए सर्वप्रथम 1 अक्टूबर 1949 को "जनवादी चीनी गणराज्य" की नींव डाली।[2]

---

1. वी.जी.चेंग–टिबेट्स इनडिपेंडेंस, "टाक्सिक टिबेट अण्डर न्यूक्लियर चायना" पृष्ठ 118, ए.पी. एच. पब्लिशिंग कार्पोरेशन नई दिल्ली, 1996
2. घोष, एस.के. एवं श्रीधर– "द पीपुल्स लिबरेशन आर्मी ऑफ चायना, कनवेंशनर फोरसेस",1975

पीपुल्स लिबरेशन आर्मी ने जनरल Chu-Teh तथा माओत्सेतुंग के गुरिल्ला युद्ध के चार मूलभूत सिद्धांतों को आधार बनाया जो इस प्रकार थे :–

संघर्ष की स्थितियों में जब भी पीपुल्स आर्मी ने उपरोक्त सिद्धांतों का अनुकरण किया तब वह मोर्चे पर सफल रही।[3]

प्रथम जब शत्रु आगे बढ़ता है हम पीछे हो जाते है ।

द्वितीय जब शत्रु विश्राम करता है हम उसे परेशान करते हैं ।

तृतीय जब शत्रु युद्ध विमुख हो जाता है तब हम आक्रमण करता है।

चतुर्थ जब शत्रु युद्ध से भागता है तब हम उसका पीछा करते हैं।

चीनी साम्यवादी शासन तथा जनवादी चीनी सेना के कूटनीतिक पेटर्न के मद्देनजर स्वायत्ता या पूर्ण स्वतंत्रता की स्थितियों में तिब्बत की चीन से सुरक्षा की गारंटी नहीं दी जा सकती। तिब्बत का विशाल भू–क्षेत्र, उसमें न्यूक्लियर कचरा डम्प करने की चीनी मानसिकता तथा इस भू–क्षेत्र में न्यस्त विशाल यूरेनियम भण्डार तिब्बत के प्रति चीनी साम्राज्यवादी लालसा को ही बढ़ायेंगे।

तिब्बती संकट के दौरान भारत का रवैया और उसकी आलोचना सर्वविदित है। अतीत में ब्रिटिश सरकार द्वारा तिब्बत पर चीनी सुजरेन्टी को मान्यता दिये जाने के कारण पं. नेहरू ने भी तिब्बत के प्रति उसी नीति का अनुसरण किया। भारत द्वारा दलाई लामा को शरण देना निसंदेह नेहरू की चीनी नीति में परिवर्तन का द्योतक था तथापि इसके पूर्व काशगर से कांसुल जनरल की चीन की इच्छापर वापसी तथा सितम्बर 1952 में ल्हासा स्थित इंडियन मिशन का काउँसलेट जनरल में स्थानान्तरण भारत की तिब्बत नीति की कमजोरी को उजागर करता है।

तिब्बत हमेशा से भारत एवं चीन के मध्य रूचि का विषय रहा है। 792–94 ई. में सामये मठ में आयोजित वाद–विवाद के दौरान ज्ञान के फैलाव के दो स्वरूपों जिनमें एक चीन के तीव्र प्रयासों से तथा दूसरा भारत के मंदगति से किए जा रहे निरंतर प्रयासों से संबंध रखता था, में से भारतीय पेटर्न की मानसिकता को महत्व प्रदान किया गया। वैसे भी तिब्बती जीवन दर्शन एवं उनकी मानसिकता भारतीय दर्शन से अधिक साम्यता रखती है। जीव वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक दोनों दृष्टियों से तिब्बत व चीन में मूलभूत अन्तर विद्यमान है।

बक्सटन, ल्हो टर्नर, मोरेन तथा रीजले सरीखे मानव शास्त्री तिब्बतियों को (dolichophalic/Proto-nordics) नस्ल का मानते हैं जो चीनियों से पूर्णतः अलग है। तिब्बतियों की अनेक सांस्कृतिक परंपरायें यथा दीप जलाना, मंत्रोच्चारण तथा प्रार्थना चक्रों को

---

3. एडगर ओ.बेलेंस, ''द रेड आर्मी ऑफ चायना'' पृष्ठ 14, 47, 1962

घुमाना इत्यादि कहीं भी चीनी परंपराओं से मेल नहीं खाती। हॉ कुछ हद तक भारतीय संस्कृति की परंपराओं से अवश्य मेल खाती है। भाषा एवं भूगोल की दृष्टि से भी तिब्बती भाषा एव चीनी भाषा का कोई मेल नहीं। तिब्बती भाषा " तिब्बत– बर्मी" भाषा समूह के अन्तर्गत आती है।[1]

रिचर्डसन इसकी लिपि का विकास भारत में हुआ मानते हैं जो 7 वीं शताब्दी की गुप्तकालीन लिपि से अधिक मेल खाती है। वे चीनी भाषा को "चीनी – पाई भाषा" के समूह में रखते हैं।[2]

सन् 1951 के कालखंड के बाद से तिब्बत के मुद्दे ने भारत व चीन के बीच महत्वपूर्ण भूमिका निभाही है। 29 अप्रैल 1954 को भारत तथा चीन के मध्य सम्पन्न "भारत एवं चीन के मध्य व्यापार एवं अन्तर्संबंध समझौता" के द्वारा औपचारिक रूप से भारत ने तिब्बत पर चीनी आधिपत्य को स्वीकृति प्रदान कर दी। परस्पर व्यापारिक ऐजेन्सियों के आरंभ के साथ भी भारत ने कलिंगपोंग– ल्हासा मार्ग की सुरक्षा के लिए याटुंग तथा ज्ञातसे में तैनात सैन्य संरक्षकों की वापसी की शर्त पर भी हस्ताक्षर कर दिये। एक ओर पं. नेहरू पंचशील एवं क्षेत्रीय शांति की दुहाई देते हुए चीन से संबंध सुधार रहे थे तो दूसरी ओर पड़ोसी देश नेपाल भी चीन के साथ अच्छे संबंध निर्धारण का प्रयत्न कर रहा था। 1 अगस्त 1955 को चीन के साथ कूटनीतिक संबंधों का आरंभ करते हुए 20 सितम्बर 1956 को नेपाल ने तिब्बत के ऊपर चीन की सम्प्रभुता स्वीकार कर ली। 1957 में चीन के साथ व्यापार व अन्तर्संबंध समझौता करने के बाद दिसम्बर 1960 में नेपाल के शासक राजा महेन्द्र ने चीन के साथ सीधे सम्पर्क स्थापित किये जिनका उपयोग आज भी नेपाल भारत को ब्लेकमेल करने के लिए करता है। इस प्रकार चीन को निरंतर तिब्बत के मुद्दे पर अपने पड़ोसी राज्यों की सहमति प्राप्त होती रहीं। इतना ही नहीं संयुक्त राष्ट्रसंघ में पहली बार नवम्बर 1950 में तिब्बत का मुद्दा उठाये जाने के प्रयास पर चीन के विरूद्ध भारत का समर्थन प्राप्त नहीं हो सका। इस पर भारत का तर्क था कि चीन चूँकि यू.एन.ओ. का सदस्य नहीं है इसलिए उसके द्वारा पारित किये गये प्रस्तावों को मान्यता देने के लिए भी वह बाध्य नहीं है। इस स्थिति में तिब्बत मुद्दे को यू. एन.ओ. में उठाना व्यर्थ है। इसके अतिरिक्त भारत का यह भी मत था कि अपने दिये गये आश्वासन के कारण चीन अब आगे तिब्बत में अतिक्रमण नहीं करेगा। परन्तु चीन की कथनी और करनी में व्याप्त अंतर तिब्बत के पूर्ण पतन एवं पराधीनता के रूप में सामने आया।

---

1. बर्मन, बी.आर."रिलीजन एण्ड पॉलीटिक्स इन टिबेट," पृष्ठ 3, 1979
2. रिचर्डसन, एच.ई. "शॉर्ट हिस्ट्री ऑफ टिबेट," पृष्ठ 2–3, 15, 1962

तिब्बत के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का प्रबंधन चीन के ही हाथ में होगा उस स्थिति में भावी तिब्बत सरकार की इन क्षेत्रों में स्वतंत्रता न के बराबर होगी। सन् 1954 में भारत चीन के मध्य सम्पन्न संधि के तहत भारतीय व्यापारियों को तिब्बत ने व्यापार की छूट प्रदान की गई थी। परन्तु समय पर परिवहन संबंधी सुविधायें मुहैया न कराये जाने के कारण उनका सामान वहां तैनात चीनियों द्वारा नाममात्र की कीमते चुकाकर खरीद लिया जाता था। ऐसी स्थिति में चीन की सुजरेंटी में तिब्बती व्यापार के विकसित होने की उम्मीद कदापि नहीं की जा सकती।

तिब्बत की पूर्ण स्वतंत्रता तो दूर की बात है स्वायत्ता की स्थिति में भी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार एवं वैदेशिक क्षेत्र में चीन की पराधीनता तिब्बत में संघर्ष को ही जन्म देगी। तिब्बत के तथा कथित साम्यवादीकरण की प्रक्रिया को चीनी पक्ष द्वारा उसे अन्तर्राष्ट्रीय षड़यंत्र से निकालने व एशिया की लोकतांत्रिक शक्ति के रूप में स्थापित करने का नाम दिया गया। भारत द्वारा इस परिप्रेक्ष्य में जारी वक्तव्यों को चीन के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप का नाम दिया गया। भारत एवं चीन के मध्य सीमा विवाद के हल के लिए वार्ताओं के अनेक चक्र सम्पन्न हो चुके है जिनका कोई परिणाम नहीं निकला। वस्तुतः दो शक्तिशाली राष्ट्रों के मध्य विद्यमान अंतस्थ राज्य को दरकिनार करके शांति के लिए किया जा रहा कोई प्रयत्न सफल नहीं हो सकता। तिब्बत न सिर्फ चीन के दबाव से भारतीय सीमाओं की रक्षा का साधन था अपितु भारत तथा मध्य एशिया के बीच भी सेतु की भूमिका निभाता था।

भविष्य में तिब्बत अपने पड़ोसी देशों तथा महाशक्तियों के प्रभाव क्षेत्र से बाहर रहकर भी अपने पृथक अस्तित्व तथा अस्मिता को बनाये रखेगा क्योंकि उसके पास न सिर्फ एक राज्य के निर्माण के लिए आवश्यक सभी तत्व (जनसंख्या, भू–क्षेत्र, सरकार व सम्प्रभुता) मौजूद होंगे बल्कि इन तत्वों को सजीव बनाने वाली संजीवनी के रूप में तिब्बती राष्ट्रवाद भी विद्यमान रहेगा। राज्य के तत्वों के संदर्भ में अन्तर्राष्ट्रीय न्यायविद आयोग ने सन् 1960 में रिपोर्ट जारी करते हुए स्पष्ट किया कि सन् 1912 से 1950 तक लगातार तिब्बत ने राज्य निर्माण की उन शर्तों को प्रदर्शित किया है जो अन्तर्राष्ट्रीय कानून के तहत स्वीकार्य है। सन् 1950 में वहां जनसंख्या, भू–क्षेत्र तथा सरकार की जो अपने धरेलू मामलों का निस्तारण करते हुए किसी भी बाह्य सत्ता से पूर्णतः स्वतंत्र थी।[1]

आज भारत एवं चीन सीमा संदर्भ पर बात करते हुए जिस मैकमोहन रेखा का जिक्र करते है वह सीमा रेखा वास्तव में भारत व चीन के मध्य नहीं अपितु भारत एवं तिब्बत के मध्य अवस्थित है और इस सीमा को मान्यता प्रदान करने वाला समझौता 1913 का शिमला समझौता था जिसे तिब्बत और भारत स्थित ब्रिटिश सरकार द्वारा मान्यता प्रदान की गई थी।

1. रिपोर्ट ऑफ इंटरनेशनल कमीशन ऑफ ज्यूरिस्ट, "टिबेट एण्ड द चायनीज पीपुल्स रिपब्लिक", पृष्ठ 165, जेनेवा, 1960

न सिर्फ 1913 का शिमला समझौता तिब्बत के अन्तर्राष्ट्रीय मानदण्डों पर तिब्बत के सम्प्रभु राज्य के स्तर को मान्यता प्रदान करता है बल्कि सन् 1942 के आस–पास तिब्बत द्वारा अपनी तटस्थता को बरकरार रखते हुए ब्रिटेन और चीन के पक्ष में गैर युद्ध सामग्री का अपने क्षेत्र से परिवहन करने की अनुमति देना तथा युद्ध सामग्री के परिवहन के लिए साफ इंकार करना, यह स्पष्ट करता है कि तिब्बत एक सम्प्रभु व स्वतंत्र राष्ट्र के तौर पर अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर व्यवहार करता रहा है। बाह्य मंगोलिया, नेपाल तथा भूटान के साथ समय–समय पर सम्पन्न तिब्बती संधियाँ भी तिब्बत के प्रभाव क्षेत्र से बाहर पूर्ण स्वतंत्र सम्प्रभु राज्य के स्वरूप को स्पष्ट करती है। अतः भविष्य में भी तिब्बत स्वतंत्र तौर पर दूसरे राष्ट्रों के साथ संबंधों का निर्धारण कर सकता है। अपने शक्तिशाली कूटनीतिक पड़ोसियों से मोलभाव करने का ज्ञान अतीत के अनुभव से उपज चुका है।

किसी राष्ट्र का कूटनीतिक रूप से साफल्य न सिर्फ नेतृत्व की बुद्धिमत्ता पर निर्भर करता है अपितु देश की जनता का समर्थन भी बराबर की भूमिका निभाता है। चीनी साम्यशाही के नियंत्रण में आम तिब्बती खुश नहीं है, पारतंत्र्य का धुंध उनका दम घोंट रहा है। दलाई लामा द्वारा तिब्बत में भेजे गये वस्तुस्थिति मिशनों के तिब्बत भ्रमण में लोगों द्वारा कातर होकर दलाई लामा के संदेश वाहकों के प्रति जो संवेदना दिखाई अप्रत्यक्ष रूप से चीनियों से छुपा कर अपनी दुर्दशा का जो हाल उनतक पहुँचाया उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि तिब्बत में लोकतांत्रिक सुधारों की सफलता संबंधी चीनी दावे खोखले है और तिब्बत के निवासी आज भी दलाई लामा के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं जो उन्हें चीनी शासन से मुक्ति दिलाऐंगे। केन्द्रीय तिब्बत में अनेक राष्ट्रवादी संगठन गुप्त रूप से कार्यरत हैं जो तिब्बती स्वतंत्रता की चिंगारी को हवा देते हुए सहीं अवसर की प्रतीक्षा में हैं। इन संगठनों में प्रमुख इस प्रकार है–''इडिपेंडेंटस आर्गेनाइजेशन'', ''स्नोलाइन आर्गेनाइजेशन'', ''टाइगर –ड्रेगन आर्गेनाइजेशन'', ''थ्री प्राविंस आर्गेनाइजेशन'', ''यूनाइटेड टिबेट यूथ एसोसिएशन'', ''पेट्रीयोटिक गर्ल्स आर्गेनाइजेशन'' इत्यादि।[1]

उपरोक्त राष्ट्रवादी संगठनों का उद्देश्य चीनी शासन का विरोध करना तथा तिब्बती स्वतंत्रता के स्वप्न को साकार करना है। परमपूज्य दलाई लामा के नेतृत्व में विश्वास करते हुए अपने शहीदों की स्मृति में तीनों प्रांतों (पूर्वी तिब्बत/इनर तिब्बत, केन्द्रीय एवं पश्चिमी तिब्बत/आउटर तिब्बत) के एकीकरण के साथ स्वतंत्रता के लिए प्राणाहुति देने को तत्पर ये संगठन तिब्बत की राष्ट्रवादी लहर को रूपायित करते हैं। यह इस बात का भी स्पष्ट संकेत है कि तिब्बतीजन की यह गैर समझौता परक दृढ़ इच्छा ही भविष्य में तिब्बत को प्रभाव क्षेत्रों से बाहर रखकर स्वतंत्र निर्णय लेने में समर्थ मजबूत राष्ट्र बनाने में सफल होगी। परन्तु इस क्षण के लिए तिब्बत के नेतृत्व को सहीं समय पर सहीं निर्णय लेकर अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीति के कठोर स्वभाव को जांचने परखने की प्रकृति विकसित करनी होगी।

---

1. वांगयाल, फुन्टसोग, ''द रिपोर्ट फ्राम टिबेट'', सुप्रा एन. 40, पृष्ठ 147

द्वितीय स्कन्ध

तिब्बत की राजनीति एवं दलाई लामा का पलायन

निर्वासन-प्रतिरोध एवं राजनय

द्वितीय स्कन्ध

तिब्बत की राजनीति एवं दलाई लामा का पलायन

(सन् 1959 से वर्तमान तक)

राजनीतिक एवं कूटनीतिक अलगाववाद से उपजी ऐतिहासिक विवशताओं के अन्तर्गत सन् 1950 में अपने मातृदेश तिब्बत से दलाई लामा का पलायन आकस्मिक नहीं था। इसके पूर्व 1934–35 में तिब्बतियों तथा साम्यवादी सेनाओं के मध्य अनेक झड़पें हो चुकी थी परन्तु इन झड़पों का बाद के चीनी कब्जे से उतना कोई सरोकार नहीं था। दक्षिण उत्तरी तिब्बत में 1949 में जब लालसेना आगे बढ़ रही थी उस समय ग्यालथांग से खम आगे बढ़े और स्थानीय निवासियों की सहायता से लालसेना को पीछे ढकेल दिया। बाद में इन लोगों में फूट डालकर लालसेना ने उनकी एकता को भंग कर दिया। इतना ही नहीं सन् 1953 के तथाकथित डेमोक्रेटिक सुधारों का पूर्वी तिब्बत में प्रथम केन्द्र भी ग्यालथांग ही बना। 1953–53 के मध्य थोड़ी शांति रही परन्तु शीघ्र ही वहां गिरफ्तारियों, निष्कासन तथा मृत्यु दण्ड का सिल–सिला शुरू हो गया। सन् 1955–56 के दौरान पूर्वी तिब्बत में लोकतांत्रिक सुधारों के चलते तिब्बती जनप्रतिरोध उभरा जिसमें ग्यारी नीमा की भूमिका सराहनीय रही। यूरू पॉन के क्रांति आह्वान पर डोरजी यूडोन ने खम में 23 जनजातीय प्रमुखों को ''वाल्यून्टीयर आर्मी टू डिटेंड बुद्धिज्म'' नामक संगठन के तहत इकट्ठा किया। यातायात, परिवहन तथा संचार की पर्याप्त सुविधाओं के अभाव में भी एक संयुक्त क्रांति का प्रयत्न और उसमें आंशिक सफलता उस तिब्बती मानस की स्वतंत्रता के लिए सच्ची लगन को रूपायित करती है जो विचार को नहीं कार्य को महत्व देती है। सन! 1956 में सामान्य तौर पर कुछ महीनों के लिए तिब्बतियों ने चीनियों को अपने क्षेत्र से खदेड़ दिया यद्यपि चीनी दुबारा अधिक शक्ति और सैनिकों के साथ पुनः वहाँ आ पहुँचे। इस संदर्भ में दावा नोरबु का मत है कि जब तक चीनियों ने वस्तुगत रूप से कार्य कर रही सामाजिक व्यवस्था और उस समाज द्वारा तब तक पवित्र समझी जाने वाली मूल्य व्यवस्था को नहीं छेड़ा जैसे कि बाह्य तिब्बत में तब तक कोई क्रांति नहीं हुई यद्यपि देश में अभूतपूर्व चीनी उपस्थिति तब भी महान क्षोभ और चिन्ता कारण थी। लेकिन तब जब चीनियों ने विद्यमान पवित्र सामाजिक व्यवस्था को आंतरिक तिब्बत ने छेड़ने की कोशिश की तभी क्रांति प्रारंभ हो गई।[1]

---

1. नोरबू दाबा, 'चाईना क्वार्टरली' ''द 1959 टिबेटन रिबेलियन : एन इन्टर प्रेटेशन'', पृष्ठ 74–93,मार्च 1979, नं. 77

यही वह परम्परागत भावनात्मक अपील थी जिसके तहत क्रांति पूर्वी तिब्बत की सीमाएं लांघकर तिब्बत स्वायत शासी क्षेत्र में प्रविष्ठ हो गई जहां पर चीनियों ने सामाजिक व्यवस्था व सामन्तशाही से कोई विरोध दर्ज नही किया । इतना होने पर भी खम और आम्डों में व्याप्त संकीर्ण जनजातीय निष्ठाओं के चलते तिब्बतियों का यह आंदोलन व्यापक राष्ट्रीय जन आंदोलन नहीं बन सका ।

पूर्वी तिब्बत में आंदोलन के दमन के बाद और बड़ी मात्रा में ल्हासा में शरणार्थियों के पलायन के बाद 16 जून 1958 को गांपों ताशी एण्ड्रग्स्ट्रांग ने ल्हासा के दक्षिण में ल्होखा में प्रतिरोधी सैन्य बल का गठन किया । इस सैन्य अभियान के लिए धन खम नेताओं ने जमा किया जो उन्हे चीन से दाओ युआन के रूप में भारत भाग जाने के लिए प्राप्त हुआ था ।[1]

अभियान के लिए हथियार व गोला बारूद का प्रबंध इसी ढ़ंग से किया गया था। धीरे–धीरे बिगड़ते हुए हालात मार्च 1959 तक पूर्णतया अनियन्त्रित हो गए । दलाई लामा को पोटाला पैलिस से बाहर निकाल कर चीनी घेराबंदी में लेने का प्रयास किया गया परन्तु तिब्बती जनता की अपने धर्म प्राण नेतृत्व के प्रति सहानुभूति की लहर ने दलाई लामा को महल में रहने और फिर शांतिपूर्वक वहां से पलायन करने को बाध्य कर दिया । तिब्बत से पलायन के बाद भारतीय सीमा पर भारत या भूटान जाने की विकल्पगत दुविधा के बाद भारत को वरीयता दिये जाने के दो कारण दलाई लामा ने स्पष्ट किये प्रथम भारत और तिब्बत का आध्यात्मिक संबंध एवं द्वितीय भौगोलिक निकटता ।[2]

समूचे तिब्बती संघर्ष के दौरान हुए असंख्य अत्याचारों व संत्रासों से पीड़ित तिब्बतियों का तिब्बत से स्वतः पलायन, निष्कासन और तिब्बती महिलाओं पर किये गए बर्बर चीनी अत्याचारों ने एक बार पुनः यूरोप में नाज़ी अत्याचारों और एशिया में अफगान संघर्ष की यादें ताजा कर दीं। तिब्बती जन प्रतिरोध आंदोलन के दबाये जाने के 15–20 सालों के बाद भी 1982 की चीनी जनगणना के अनुसार स्त्री पुरूष जनसंख्या अनुपात में भारी अन्तर पाया गया है ।सन् 1960–63 के अकाल के बाद भी चीन या तिब्बत के अन्य भागों में इतना वृहद् लैगिक अनुपात अन्तर नहीं पाया गया। इस वृहद् अन्तर का कारण संभवतः यही है कि पूर्वी एवं उत्तर पूर्वी तिब्बत जो अधिकांश तिब्बती जनता का निवास स्थल है वहीं अधिकतर संघर्ष हुए जिनमें हजारों तिब्बतियों को प्राणों की आहुति देनी पड़ी । अक्टूबर 1960 में 'सीक्रेट' नामक लघु पत्रिका में मार्च 1960 से उस समय तक 87000 शत्रुओं के मारे जाने की जानकारी दी गई ।

---

1. नोरबू दावा, 'चाईना क्वार्टरली', ''द 1959 टिबेटन रिबेलियन : एन इन्टरप्रिटेशन'', मार्च 1979 नं. 77
2. टाइम्स ऑफ इण्डिया 23 जून 1991

इससे स्पष्ट होता है कि दलाई लामा के भारत आने से पूर्व और उसके ठीक बाद तक तिब्बती जन आंदोलन अपने उद्देश्य के प्रति पूर्णतः उग्र हो चुका था । तिब्बती रणबांकुरे अपने प्राण न्योछावर कर रहे थे तो तिब्बती ललनाओं की अस्मिता स्वातन्त्र्य बेदी पर बलि हेतु रखी हुई थी।

तिब्बती जन प्रतिरोध की अपनी एक और विशिष्टता है कि इसमें स्वयं अपनी गतिविधियों को व्यवस्थित और ब्यौरेवार स्वरूप प्रदान नहीं किया गया है । सन् 1956 के प्रारंभिक वर्षों में निर्वासित तिब्बती सरकार ने प्रतिरोधरत तिब्बतियो व शरणार्थियों से तथ्यात्मक विवरण इकट्ठे किए परन्तु वे अत्यधिक संक्षिप्त थे और उनमें से कुछ भी प्रकाशित हुए । 1974 में मुस्टांग में अन्तिम गुरिल्ला संगठन के बंद होने के बाद भारत स्थित " फोर रिवर्स सिक्स रेंजेस" नामक संगठन ने इन संगठनों की गतिविधियों व इतिहास पर काफी जानकारी इकट्ठी की। ल्हासा स्थित राष्ट्रवादी संगठन "मिमांग" के एक सदस्य एलो चोनजे ने तिब्बती प्रतिरोध व राजनय पर महत्तवपूर्ण रोचक जानकारी दो खण्डों में प्रकाशित की है ।[1]

यद्यपि तिब्बती प्रतिरोध आंदोलन सी.आई .ए. के साथ अपने संबंधों को लेकर खासा चौकन्ना रहा है ताकि नेपाल और भारत के साथ उसके सम्बन्धों में दरार न आए तथापि एक फ्रेंच टेलीविजन वृत्त चित्र में खमने सी.आई.ए. तथा भारतीय सेना व इन्टेलीजेन्स ब्यूरो के साथ अपने पुराने सम्बन्धों का खुलासा किया है । हालांकि वाशिंगटन की तिब्बती प्रतिरोध सहायता नीति सदैव सुरक्षागत सीक्रेट्स में रही है । 1955–56 के तिब्बती जन प्रतिरोध के दौरान समग्र तिब्बती अस्मिता लहु लुहान हो रही थी तो दूसरी ओर राजनयिक क्रियाकलाप भी अपने आस–पास की परिस्थतियों से प्रभावित होकर कूटनीतिक ताना बाना बुन रहे थे । दक्षिण एशिया की प्रादेशिक राजनीति में चीन का बढ़ता वर्चस्व सदैव पड़ौसी राज्यों के लिए भय और चिन्ता का कारण बनता रहा है । अप्रैल 1955 के बांडुंग सम्मेलन के समय भारत चीन संबंध सद्भावनाओं के दौर से गुजर रहे थे । लगभग इसी समय चाऊ–एन–लाई ने अपने पाकिस्तानी सहस्थानी मो. अली के साथ राजनयिक संबंध बनाने शुरू कर दिये। इस समय चीन ने भारत चीन मैत्री के ऊपर अपने राष्ट्रीय हितों को महत्व देते हुए एक ऐसे पड़ौसी राज्य पाकिस्तान के साथ कूटनीतिक संबंधों को तरजीह दी जो पहले से ही अमेरिका समर्थित साम्यवाद विरोधी गुट 'सीटों' का सदस्य था ।[2]

सन् 1956 में बुद्ध जयन्ती के अवसर पर भारत आए दलाई लामा की भारत में ही रूक जाने की प्रार्थना को पंडित नेहरू ने अस्वीकार कर दिया । सन् 1958 के ग्रीष्म में पंडित नेहरू की सुरक्षा को खतरा बताते हुए चीन द्वारा उनकी यात्रा रद्द कर दी गई ।

---

1. एलो चोनजे, "द की दैट ओपन्स द डोर ऑफ ट्रुथ टू द टिबेटन कन्डीशन"
2. रशब्रुक विलियम्स, एल.एफ, "द स्टेट ऑफ पाकिस्तान" ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1962

इसके पश्चात् भारत चीन सीमा विवाद तथा भारत के भूटान, सिक्किम व नेपाल के साथ सम्बन्ध चीन के सवालिया घेरे में आ गए । अप्रैल 1960 में चाऊ–एन–लाई ने अपनी भारत यात्रा के दौरान भारत की उत्तर पूर्वी सीमा पर स्थित अरूणांचल प्रदेश पर से अपना दावा वापस लेने, मैकमोहन लाइन स्वीकार करने और इसके बदले में पश्चिमी क्षेत्र में अक्साई चिन पर भारत से इसी प्रकार की रियायत लेने का विचार रखा परन्तु भारत ने उसके उपरोक्त प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया । तिब्बत भारत और चीन के बीच एक सम्प्रभु राज्य हुआ करता था परन्तु तिब्बत पर चीनी कब्जे के बाद न सिर्फ हमारी उत्तरी सीमाएं असुरक्षित हो गई हैं अपितु लाखों तिब्बती शरणार्थियों का भार भी हमारी अर्थव्यवस्था व संसाधनों पर पड़ रहा है । ''अतिथि देवों भव'' की महान सांस्कृतिक परम्परा का पालन करने वाला भारत अध्यात्म पुंज दलाई लामा से यह तो नहीं कहेगा कि उसके संसाधन सीमित हैं परन्तु यथार्थ को नज़र अंदाज नहीं किया जा सकता ।

राजनयः– सन् 1959 में दलाई लामा ने तिब्बत से पलायन कर भारत में शरण ली । 1970 के दशक के आखिरी वर्षो में साम्यवादी चीनी सरकार तथा निर्वासित तिब्बती सरकार के मध्य बातचीत का आरंभ हुआ । धर्मशाला स्थित निर्वासित तिब्बती सरकार ने सदैव इस खबर का विरोध किया कि वह चीन के साथ किसी प्रकार की वार्ता में संलग्न है यद्यपि ऐसी चर्चा सुनने में आई कि दलाई लामा तिब्बत वापस लौटने वाले है । सन् 1978 में दलाई लामा के बड़े भाई ग्यालो थोन्डुप की ओर से चीन में दलाई लामा को आमंत्रण भिजवाया । पन्द्रह सदस्यीय प्रतिनिधि मण्डल के तिब्बत जाने के प्रयास को उस समय धक्का लगा जबकि उन्हे ''ओरवसीज चायनीज'' के तौर पर चीनी दस्तावेजो के साथ तिब्बत जाने को कहा गया । निर्वासित तिब्बती सरकार ने यह शर्त अस्वीकार कर दी । चीन अधिकृत तिब्बत में तिब्बतियों की स्थिति की जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रथम वस्तुस्थिति मिशन अगस्त 1979 में हांगकांग बीजिंग के रास्ते तिब्बत भेजा गया । इसके साथ ही धर्मशाल–बीजिंग के मध्य 'डेलीगेशन डिप्लोमेसी' आरम्भ हो गई । द्वितीय प्रतिनिध मण्डल जून 1980 में तथा तृतीय प्रतिनिधि मण्डल उसी दौरान वहां भेजा गया । द्वितीय प्रतिनिधि मण्डल की ल्हासा यात्रा के दौरान जोंखांग मंदिर के सम्मुख जमा भीड़ के तिब्बत की स्वतंत्रता तथा दलाई लामा के पक्ष में नारे लगाए जाने से खिन्न चीनी प्रशासन द्वारा द्वितीय प्रतिनिधि मण्डल की यात्रा मे कटौती कर दी गई और 1981 में जाने वाले चतुर्थ प्रतिनिधि मण्डल की यात्रा निरस्त कर दी गई । तत्पश्चात् इन प्रतिनिधि मण्डलों से प्राप्त जानकारी के आधार पर धर्मशाला द्वारा 'महज वार्ता के लिए' एक प्रतिनिधि मण्डल बीजिंग भेजा गया । जून में इसकी वापसी के बाद निर्वासित सरकार द्वारा कोई जानकारी प्रेस को उपलब्ध नहीं कराई गई परन्तु बीजिंग द्वारा यह स्पष्ट किया गया कि उसने दलाई लामा की तिब्बत को

ताईबान के समान दर्जा उपलब्ध कराने की मांग अस्वीकार कर दी है । इस घटना के अगले दो साल बाद तक संवाद न्यूनता की स्थिति बनी रही । प्रतिनिधि मण्डलों के आवगमन से दलाई लामा की तिब्बत वापसी सम्बन्धी चर्चा ने जोर पकड़ा । बीजिंग द्वारा दलाई लामा की आशंकित वापसी को लेकर घोंषणा की गई कि दलाई लामा तिब्बत आ सकते हैं परन्तु उन्हे वहां रूकने तथा स्थानीय पद ग्रहण करने का अधिकार नहीं होंगा 16 दिसम्बर 1983 को धर्म शाला स्थित निर्वासित सरकार की ओर से दलाई लामा के 1985 में तिब्बत न जाने की घोंषण कर दी गई। सितम्बर से नवम्बर 1984 तक द्वितीय प्रतिनिधि मण्डल बीजिंग में रहा । इसकी वापसी पर उन विचारों का जिक्र सार्वजनिक तौर पर किया गया जिन पर बीजिंग से वार्ता की गई थी । उनमें तिब्बत के ऐतिहासिक दर्जे, आत्मनिर्णय के अधिकार, तीन परम्परागत प्रांतों के सम्मिलन, चीन के साथ बराबरी के स्तर सम्बन्ध निर्धारण तथा तिब्बत को शांति क्षेत्र घोंषित करने के मुद्दे प्रमुख थे बीजिंग ने धर्मशाला की इन शर्तों को अस्वीकार कर दिया तथापि दोनों पक्षों के बीच संपर्क बना रहा। चतुर्थ वस्तुस्थिति मिशन जुलाई से सितम्ब र 1985 तक तिब्बत के गांसु एवं किंघाई क्षेत्र में रहा । इसे तिब्बत स्वायत्त क्षेत्र में जाने की अनुमति नहीं दी गई। तिब्बती जनों को प्रतिनिधि मण्डल के आगमन की पूर्व सूचना नहीं दी गई थी। तथा उनके पास से दलाई लामा के अनेक फोटोग्राफ जब्त कर लिये गये। 9 जून 1985 को चीनी प्रीमियर झाओ जियांग ने लंदन में जारी वक्तव्य में स्पष्ट कर दिया कि तिब्बत के भविष्य के बारे में विचार चीन के दायरे में ही रहकर किया जा सकता है।[1]

मई 1986 में थुबटेन नोरबु जो दलाई लामा के बड़े भाई हैं उनके तथा अमेरिका के बीच सम्बंधों में गिरावट आई। 1986–87 के दौरान तिब्बत ने चीन द्वारा बड़ी संख्या में गिरफ्तारियाँ, हिंसा तथा चीनी जनसंख्या की बसाहट की घटनायें बढ़ी। तिब्बती जनआन्दोलनों को हिंसक तरीके से कुचला गया। जून 1987 में तिब्बत जाने वाला पंचम प्रतिनिधि मण्डल पुनः "ओवर सीज चाइनीज" के रूप में यात्रा करने की शर्त अस्वीकार्य होने के कारण तिब्बत नहीं जा सका। अंत में चीन ने ग्यालो थोंडुप तथा दलाई लामा के अन्य रिश्तेदारों को बगैर चीनी कागजातों के तिब्बत यात्रा करने की अनुमति दे दी जिसे निर्वासित सरकार ने अस्वीकार कर दिया। सितम्बर 1987 में दलाई लामा ने पंच बिन्दु शांति प्रस्ताव प्रस्तुत किया जिसमें सम्पूर्ण तिब्बत को शांति क्षेत्र घोंषित करने, चीन की जनसंख्या स्थानान्तरण नीति समाप्त करने, तिब्बतियों के मूलभूत मानव अधिकारों एवं लोकतांत्रिक स्वतंत्रताओं का सम्मान करने, तिब्बत के नैसर्गिक वातावरण की सुरक्षा तथा परमाणुं हथियारों के निर्माण व परमाणविक कचरा डम्प करने के लिए तिब्बत का उपयोग करने के चीनी प्रयासों की समाप्ति, भविष्य में तिब्बत के दर्जे को लेकर ईमानदार समझौते के प्रयासों का आरंभ तथा तिब्बती व चीनी लोंगों के बीच सम्बन्धों की स्थापना के प्रयास इत्यादि पांच बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित किया गया ।

1. इंडियन एक्सप्रेस नई दिल्ली, 10 जून 1985

तत्पश्चात् 27 सितम्बर से ल्हासा में प्रदर्शनो, गिरफ्तारियों तथा हिन्सा का सिलसिला शुरू हो गया । अगले दो सालें तक प्रदर्शन व चीनी दमन जारी रहा । 15 जून 1988 में स्ट्रासवर्ग प्रस्ताव रखते हुए दलाई लामा ने तिब्बत के लिए पूर्ण स्वायत्ता की मांग की । इसमें विदेशी संबंधों को पूर्णतः चीन के नियंत्रण में रखा गया । बीजिंग ने तिब्बत की इस अर्द्धस्वतंत्रता की मांग को अस्वीकार करते हुए यह स्पष्ट किया कि वह सिर्फ दलाई लामा के साथ बीजिंग या हांगकांग में ही नहीं बल्कि कहीं भी वार्ता करने के लिए तैयार है । धर्मशाला ने इस प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए जनवरी 1989 में जेनेवा में वार्ता का प्रस्ताव रखा परन्तु अंततः चीनी पक्ष द्वारा विदेशी सलाहकार को तिब्बती टीम में शामिल किये जाने के कारण यह वार्ता प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया । मार्च 1989 में तिब्बत में मार्शल लॉ लागू कर दिया गया । इसके पूर्व चीनी दमन चक्र के कारण हजारों तिब्बतियों को प्राणाहुति देनी पड़ी । इसके बाद बीजिग धर्मशाला के मध्य संपर्क के प्रयास धीमे पड़ गए ।

तिब्बत के मुद्दे पर अमरीका के येल विश्वविद्यालय में 9 अक्टूबर 1991 को दिये गए भाषण में दलाई लामा ने विश्व के सम्मुख एक बार पुनः चीन द्वारा तिब्बतियों के दमन व अत्याचार को स्पष्ट किया ।

The Chinese government's refusal reciprocate my efforts to start negotiations has increased the impatience of many Tibetans, especially Tibatans in Tibet, with the non violent path we follow. Tension in my country is increasing as china encourages demonstrations and aggression in Tibet reducing Tibatans to a Second class minority in our own country. The harse repression & intimidation of Tibatans is increasingly polarizing the situation. I an extremely anxious that in this explosive situation, violence may be breakout. I can do nothing to prevent this".

सितम्बर 1992 में डेंग शियाओपेंग तथा ज़ियांग जेमिन को दलाई लामा द्वारा प्रेषित मेमोरेंडम में अतीत में तिब्बत व चीन को दो अलग राज्यों के रूप में स्पष्ट करते हुए मांचू तथा मंगोल शासकों से तिब्बत के विशिष्ट संबंधों का जिक्र करते हुए तिब्बत में विकास के चीनी आश्वासनों के खोखलेपन का उल्लेख किया । तिब्बत छोड़ने की अपनी परिस्थितियों का उल्लेख करते हुए

उन्होंने यू.एन.ओ. के 1959, 1961 तथा 1965 के उन प्रस्तावों का भी जिक्र किया जिनके तहत तिब्बत के लोंगो के मानवाधिकारों तथा आत्मनिर्णय के सिद्धांतों को स्वीकृत किया गया है । साथ ही चीन को संयुक्त राष्ट्र प्रस्तावों की अवज्ञा का दोषी ठहराते हुए प्रस्ताव के अन्त में दलाई लामा ने तिब्बत के पक्ष में कड़े शब्दों में अपनी बात स्पष्ट करते हुए कहा कि "यदि चीन आज तिब्बत को अपने साथ रखना चाहता है तो उसे इसके लिए आवश्यक परिस्थितियां उत्पन्न करनी होंगी । ....यदि तिब्बतियों को उनके मूल अधिकार प्राप्त हो जाते हैं तो वे चीन के साथ रहने के लिए तैयार है।"

10 अगस्त 1993 को भारतीय नीति विशेषज्ञों के नई दिल्ली में सम्पन्न सम्मेलन के दौरान दलाई लामा ने तिब्बत मुद्दे पर भारत सरकार की उदासीनता पर खेद व्यक्त करते हुए चीन द्वारा तिब्बत में विकास के नाम पर जनता पर किये जा रहे अत्याचारों का जिक्र करते हुए भारत से इस मुद्दे पर और अधिक समर्थन की मांग की । साथ ही चीन से स्वतंत्रता के संदर्भ में मध्यम मार्ग के अनुसरण का विचार सामने रखा अर्थात् न तो चीन से पूर्ण प्रथक्कता न ही वर्तमान चीनी नियन्त्रण को जारी रखना ।

चीन द्वारा स्ट्रासवर्ग प्रस्ताव की अस्वीकारोक्ति से तिब्बती स्वतन्त्रता की आशा पूर्णतः धूमिल पड़ गई । वर्तमान चीनी सरकार दलाई लामा की वापसी पर तो चर्चा करना चाहते है परन्तु तिब्बत के भविष्य के दर्जे पर कोई वार्ता नहीं करना चाहते । अब तिब्बत के भविष्य पर विचार उसी स्थिति में संभव है जब चीन में असंतुष्टों की सरकार सत्ता में आए और वह तिब्बत को चीन की माईनोरिटी न मानकर उसके पृथक अस्तित्व को स्वीकार करे । पंच बिन्दु शान्ति समझौता तथा स्ट्रासवर्ग प्रस्ताव दलाई लामा की तरफ से प्रस्तुत शान्ति प्रस्ताव थे । चीनी पक्ष तो तिब्बत की समस्या को अलग से कोई समस्या मानता ही नही, उसके लिए तिब्बत की समस्या मातृभूमि चीन की असंतुष्ट इकाई की समस्या है जिसका निदान थोड़ी बहुत रियायते देकर संभव है और इसलिए वार्ताओं के संचालन में तिब्बती पक्ष के मंत्री के समतुल्य चीन के माइनोरिटी कमीशन का एक सामान्य कर्मचारी हिस्सा लेता रहा है ।

चीन की वर्तमान कम्युनिस्ट सरकार के साथ निर्वासित तिब्बती सरकार के किसी सकारात्मक समझौते की उम्मीद न के बराबर है । बल–छल पूर्वक कब्जाए गए एक सम्प्रभु राज्य के लिए वह क्षण भयानक अपमान का रहा होगा जब उसने स्वतंत्रता के स्थान पर अपने अवैध शासक की अधीनता मे अन्तरिम स्वायत्ता को स्वीकार किया होगा परन्तु तिब्बत की विडम्बना तो

ये रही है कि उसे अपने लालची शासक से यह अधिकार भी प्राप्त नहीं हुआ । चीन के कम्युनिष्ट विरोधी नेता यदि सत्ता में आते हैं तो भी इस बात की कोई उम्मीद नहीं कि वे तिब्बत के इतिहास सिद्ध सम्प्रभु राज्य के दर्जे को बहाल करेंगे । असन्तुष्टों व तिब्बत के स्वातंत्र्य आग्रहियों के मध्य संबंध सिर्फ मानवाधिकार एवं वर्तमान सरकार के विरोध तक ही सीमित रहेंगे । इस सम्बन्ध में यदि तिब्बत की निर्वासित सरकार को अंतर्राष्ट्रीय समुदाय का समर्थन मिल जाए तो सम्भावना की किरण अवश्य दिखाई देती है । परन्तु सवाल उठता है कि इस दिशा में तिब्बत में रहकर स्वतन्त्रता के लिए अथाह यातनाएं झेल रहे तिब्बतीजनों की कुर्बानियों के मद्दे नज़र निर्वासित तिब्बती सरकार क्या कदम उठाती है ? यह भी संभव है कि चीन दलाई लामा के तिब्बत वापस आने के ऐवज में तिब्बत में तथाकथित धार्मिक स्वतन्त्रता की मात्रा में वृद्धि करके तिब्बत राज्य के दर्जे के राजनीतिक सवाल को दबाने का प्रयत्न करे । ऐसी स्थिति में यह पूर्णतया निर्वासित तिब्बती सरकार के विवके पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार तिब्बती राज्य के मुद्दे को जीवित रखते हुए अंतर्राष्ट्रीय समुदाय की जागरूक समझ इस मुद्दे पर निर्मित करे और चीन पर निरन्तर दबाव बनाए रखे ।

2. सन् 1987 के तीन चीन विरोधी प्रदर्शन :–मार्च 1980 में तिब्बत में केन्द्रीय चीनी सरकार द्वारा प्रथम कार्यशाला का उद्घाटन तिब्बत मे उदारवादी नीतियों के क्रियान्वयन के घोषित लक्ष्य के साथ किया गया । मई 1980 के दौरान पार्टी सेक्रेटरी हू–याओबंग तिब्बत की यात्रा पर गए । उन्होंने तिब्बतियों के निम्न आर्थिक स्तर पर चिंता व्यक्त करते हुए अगले तीन से पांच वर्षों तक कृषि और पशुपालन को करमुक्त रखने, उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन तथा तिब्बती संस्कृति, शिक्षा, विज्ञान एवं पर्यटन के उत्थान के लिए कई सिफारिशों की घोंषणा की । इस बीच निर्वासित तिब्बती सरकार और बीजिंग के मध्य प्रतिनिधि राजनय का दौर चलता रहा । विश्व मीडिया के सम्मुख अपनी उदारवादी छवि को तिब्बतियों के धार्मिक क्रियाकलापो के प्रति सहिष्णुता के रूप में प्रदर्शित करने के उद्देश्य से 1986 में लगभग 20 वर्षों के लम्बे अंतराल के बाद चीन ने ज़ोखांग मंदिर में लामाओं को पवित्र मोनलम उत्सव मनाने की अनुमति प्रदान की परन्तु यह सब तिब्बती जनमानस के भीतर छिपे तनाव–उद्वेग का शमन करने के लिए पर्याप्त नहीं था । 19 सितम्बर 1987 को द्रेपंग मोनेस्ट्री के लामाओं द्वारा दलाई लामा के प्रति निष्ठा व्यक्त करने और तिब्बती मुद्दे को जीवन्त रखने के विचार से ल्हासा में विरोध प्रदर्शन किया गया । 1 अक्टूबर को ''चीनी राष्ट्रीय दिवस'' के अवसर पर द्वितीय चीन विरोधी प्रदर्शन का पटाक्षेप अन्ततः प्रदर्शनकारियों की

गिरफ्तारियों, निर्मम पिटाई एवं सजा के परिणामों के साथ हुआ । 1987 की विरोध श्रृंखला का तीसरा प्रदर्शन 6 अक्टूबर को सम्पन्न हुआ । इन समस्त विरोध प्रदर्शनों में तिब्बत की स्वतंत्रता के प्रति तिब्बती जन सामान्य की लगन और निष्ठा तो निहित थी ही इनके द्वारा अंतर्राष्ट्रीय समुदाय का ध्यान भी तिब्बत के मुद्दे के प्रति आकृष्ट हुआ । अगले पांच वर्षों तक इन विरोध प्रदर्शनों ने अन्य प्रदर्शनकारियों का मार्गदर्शन किया।

<u>27 सितम्बर 1987 का विरोध प्रदर्शन :–</u> सन् 1987 के तीन चीन विरोधी प्रदर्शनों की पृष्ठभूमि समकालीन घटनाओं एवं अतीत की प्रताड़ना के मिले जुले परिणाम से निर्मित हुंई थी । 24 सितम्बर 1987 को ल्हासा के स्पोर्ट्स स्टेडियम में 11 तिब्बतियों को सजा सुनाई गई जिनमे से दो को मृत्यु दण्ड दिया । 15 हजार तिब्बतियों को इस रैली में भाग लेने के लिए बाध्य किया गया जहां ल्हासा के वाइस मेयर ने एकता और स्थायित्व की अपील के साथ तिब्बतियों को चार प्रमुख सिद्धांतों के प्रति प्रतिबद्ध रहने की चेतावनी दी गई । ये चार सिद्धांत हैं :–

1. साम्यवादी दल का नेतृत्व, 2. समाजवादी मार्ग, 3. मार्क्सवादी, लेनिनवादी एवं माओवादी विचार, 4. सर्वहारा का अधिनायकत्व ।

इस प्रकार की प्रताड़ना रैली में उपरोक्त सिद्धांतो और आदर्शों का प्रयोग दलाई लामा के समर्थन में उत्पन्न अंतर्राष्ट्रीय समझ पर आदर्शों का आवरण टालना मात्र था । 25 सितम्बर 1987 को ल्हासा के स्थानीय दूरदर्शन पर दलाई लामा की अमेरिका यात्रा का एक मिनट की अवधि का समाचार प्रसारित हुआ । दलाई लामा की उपरोक्त यात्रा के विरूद्ध और तिब्बत में चीनी नीति के समर्थन के सम्भावित प्रयासों के विरूद्ध तिब्बती जनमानस में दलाई लामा के प्रति श्रद्धायुक्त समर्थन उत्पन्न किया । इसी श्रद्धा का उद्वेलित परिणाम 27 सितम्बर 1987 के प्रथम चीन विरोधी प्रदर्शन के रूप में सामने आया । इन्ही कुछ दिनों के दौरान कुछ आम तिब्बतीजन द्रेपंग तथा ल्हासा के आस–पास के मठों में चढ़ावे और दलाई लामा के लिए प्रार्थना करने हेतु आते जाते रहे। ऐसा अक्सर हुंआ करता था परन्तुं कुछ तो समकालीन घटनाओं के प्रभाव और कुछ दलाई लामा की यात्रा से तिब्बत के प्रति उत्पन्न अंतर्राष्ट्रीय समझ से प्रोत्साहित होकर द्रेपंग मठ के लामाओं ने वारखोर में एकत्रित होने का निश्चय किया । 27 सितम्बर 1987 के दिन रविवार को दिन निकलने से पूर्व वे अपनी यात्रा आरम्भ कर वारखोर पहुंचे । लगभग 9:00 बजे उन लामाओं ने वारखोर की परिक्रमा करते हुए तिब्बती ध्वज लहराकर तिब्बत की स्वतंत्रता एवं दलाई लामा की दीर्घायु के लिए नारे लगाने शुरू कर दिये । लगभग सौ तिब्बतियों ने उनका साथ दिया ।

65

बारखोर की तीन परिक्रमाएं पूर्ण करने के पश्चात् वे जोखांग मंदिर से होते हुए तिब्बत स्वायत्त शासी क्षेत्रीय सरकार के दफ्तरों की तरफ गए जहां पुलिस के हस्तक्षेप के बाद पांच तिब्बतियों सहित 21 लामाओं को गिरफ्तार कर लिया गया । चीनी पक्ष द्वारा आरोप लगाया गया कि विरोध प्रदर्शन दलाई लामा के उकसाने पर किया गया जबकि निर्वासित तिब्बती सरकार की ओर से इस प्रदर्शन के अकस्मात् आयोजन पर आश्चर्य मिश्रित प्रतिक्रिया व्यक्त की गई । 29 सितम्बर 1987 को तिब्बत स्वायत्तशासी क्षेत्रीय सरकार की ओर से क्षेत्रीय दल प्रणाली के अधिकारियों ने तिब्बत में धर्म पर चीनी पक्ष की नीति को लागू करने वाले कई संगठनों जैसे क्षेत्रीय जनवादी राजनीतिक सलाहकार कॉन्फ्रेन्स, यूनाईटेड फ्रन्ट, कार्यविभाग, राष्ट्रीय एवं धार्मिक मामलों के लोकल ब्यूरो तथा बुद्धिष्ट संगठनों के प्रतिनिधियों की सभा आहूत की । धार्मिक व्यवसाय से संबंद्ध लोगों को निर्दिष्ट किया गया कि वे मातृ भूमि की एकता के लिए, राष्ट्रीयताओं के एकत्व के लिए विभाजक प्रदर्शनकारियों के विरूद्ध एक नए समाजवादी तिब्बत के निर्माण के लिए विरोध प्रदर्शनकारियों का विरोध एवं आलोचना करें । चीनी पक्ष ने तथाकथित धार्मिक सदाशयता का परिचय देते हुए यह स्पष्ट किया कि चीन की वर्तमान धार्मिक सहिष्णुता की नीति जारी रहेगी । परन्तु अन्य प्रदर्शन न किए जाने की चेतावनी भी दी ।

1 अक्टूबर 1987 का द्वितीय विरोध प्रदर्शन :– यह चीन विरोधी प्रदर्शन हिन्सक प्रवृत्ति का रहा । ल्हासा के पांच कि.मी. उत्तर में स्थित "सेरा" मठ के 23, जोखांग मंदिर के 8 तथा नेचुंग मठ के 3 लामाओं और लगभग 50 तिब्बतियों ने तिब्बती झंडा फहराते हुए तिब्बत की स्वतंत्रता के नारे लगाते हुए बारखोर की तीन परिक्रमाएं पूरी कीं । चतुर्थ परिक्रमा पर पुलिस ने हस्तक्षेप किया, प्रदर्शनकारियों को बुरी तरह पीटा गया । लगभग 30 प्रदर्शनकारी तिब्बतियों के साथ सभी लामाओं को गिरफ्तार कर लिया गया । इन गिरफ्तारियों के विरोध में लगभग 2000 तिब्बती प्रदर्शनकारियों ने जिनमें बच्चे व महिलाएं भी शामिल थी पुलिस स्टेशन पर पथराव किया, पुलिस की गाड़ियां जला दी गईं व पुलिस स्टेशन को भी आग लगाने की कोशिश की गई । कूल मिलाकर हिंसक संघर्ष की स्थिति बन गई । प्रातः 9:00 बजे प्रदर्शन आरम्भ हुआ, 11:00 बजे के करीब पुलिस की तरफ से भीड़ पर गोलाबारी हुई जो बीच में थोड़ी देर रूकने के बाद 3:00 बजे शाम तक चलती रही । कई तिब्बती मारे गए । पुलिस के जाने के बाद तिब्बती जनता ने पुलिस स्टेशन लूट लिया, महत्वपूर्ण कागजात जला दिये गये, पुलिस गाड़ी में आग लगा दी गई । इसी दिन रात में कर्फ्यू लगा दिया गया । आगामी कुछ दिनों में बीजिंग द्वारा स्वचालित हथियारों से

लैस सशस्त्र सैनिकों के कई दल ल्हासा के तिब्बती बहुल क्षेत्रों में तैनात कर दिये गए । इस प्रकार के हिंसक संघर्षों की रिपोर्टें विदेशी पर्यटकों एवं ,खोजी पत्रकारों के माध्यम से शेष विश्व तक पहुंची । इससे चीनी अत्याचारों के प्रतिरोध में किए जा रहे तिब्बती संघर्ष को एक नई छवि, नया कलेवर प्राप्त हुआ । तिब्बती मुद्दे के प्रति एक नई संचेतना जागृत हुई ।

6 अक्टूबर 1987 का तृतीय प्रदर्शन :– द्रेपंग एवं सेरा मठों से चीन विरोधी प्रदर्शन हो चुकने के बाद ल्हासा के 32 कि.मी. पूर्व में स्थित गांडेन मठ के लामाओं ने प्रदर्शन का आयोजन किया । 2:30 बजे के करीब 50 लामाओं ने 27 सितम्बर को गिरफ्तार किये गये 21 लामाओं की रिहाई के लिए तिब्बत स्वायत्तशासी सरकार के दफ्तरों के बाहर विरोध प्रदर्शन किया । उन्होंने तिब्बती स्वतंत्रता के लिए नारे लगाये । प्रदर्शन 2:30 बजे से 4:30 बजे तक लगभग 2 घण्टे चला । तत्पश्चात् सशस्त्र पुलिस बल निःशस्त्र प्रदर्शनकारियों को बैल्ट, रायफलों, धातु की छड़ियों से मारते हुए ले गया और उन्हे दो दिन बाद्र छोड़ा गया ।

1987 के उपरोक्त तीनों विरोध प्रदर्शनों के चलते विश्वमीडिया तथा अंतर्राष्ट्रीय समुदाय का ध्यान तिब्बत के प्रति आकृष्ट हुआ । यूरोप, अमेरिका, संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकार आयोग ने तिब्बत मुद्दे पर पहलकदमी की । इतना ही नहीं 1989 में तिब्बती संघर्ष के संचालक दलाई लामा को अंतर्राष्ट्रीय नोबल शांति पुरस्कार से सम्मानित भी किया गया जिससे इस बात की सम्भावना जड़ पकड़ती है कि भविष्य में चीन तिब्बत में मानवाधिकार हनन के मुद्दे पर न सिर्फ अकेला पड़ सकता है बल्कि उसे अंतर्राष्ट्रीय बिरादरी के दबाव का भी सामना करना पड़ सकता है । पिछले 40 सालों में तिब्बत स्थित तिब्बतियों ने चीन के अवैध कब्जे को लेकर अनेक विरोध प्रदर्शन आयोजित किए जिनमें तोड़ फोड़, सैबोटाज, सशस्त्र विरोध प्रदर्शन आदि शामिल हैं । परन्तु 1987 के सांकेतिक विरोध प्रदर्शनों में बारखोर जैसे धार्मिक स्थल का प्रयोग करके तिब्बती जन ने यह स्पष्ट कर दिया है कि भौगोलिक और धार्मिक दोनों ही दृष्टियों से तिब्बती एवं चीनियों में कोई मेल सम्भव नहीं ।

3. खोरा विरोध एवं तिब्बत बंद :– "खोरा" (bskor ba) मूलतः एक तिब्बती शब्द है । यह तिब्बती बौद्धवाद में प्रायः किसी मंदिर या पवित्र स्थान की सार्वभौम परिक्रमा के लिए प्रयुक्त किया जाता है । "ओम मनी पद्में हम" के सस्वर वाचन के साथ सम्पन्न खोरा तिब्बती बौद्धवाद के उन कुछ धार्मिक क्रियाकलापों में से एक है जो वर्तमान तथा भूतकाल के जन्मों में किये गए दुष्कर्मों के प्रभाव से मुक्ति दिलाकर एक अच्छे पुनर्जन्म और भविष्य में प्राणी सम्पूर्ण मुक्ति के लिए मार्ग

प्रशस्त करते है। इस प्रकार खोरा तिब्बती जनमानस का एक पवित्र संस्कार है । पवित्र बारखोर स्थल की चतुर्दिक परिक्रमा तिब्बतियों का प्रतिदिन का प्रातः एवं सायं कालीन नियम है । ल्हासा के जोखांग मंदिर के चारों तरफ परिक्रमा विशेष धार्मिक महत्व की हुआ करती है जिसे करने तीर्थ यात्री दूर–दूर से आते हैं । खोरा वस्तुतः एक ऐसी सार्वभौम परिक्रमा है जिसमें धनी–निर्धन, उच्च–निम्न, अग्रिम–पिछड़े का कोई भेदभाव नहीं रहता, खोरा में हर व्यक्ति एक दूसरे के पीछे है सभी एक क्रम में–धैर्य पूर्ण समानता का अच्छा उदाहरण है खोरा । स्वास्तिक की दिशा में की जा रही खोरा परिक्रमा बारखोर के व्यस्त ट्रेफिक के दौरान भी चलती रहती है । यदि किसी कार्य के लिए किसी को वापस लौटना होता है तो धार्मिक सम्मान का पालन करता हुआ बारखोर का लगभग (0.75 कि.मी.) का चक्कर लगाते हुए उस तरफ आता है । वस्तुतः बारखोर की एण्टी क्लाक वाइस परिक्रमा बड़ा धार्मिक अनादर समझी जाती है । चीनी प्रायः अपने साम्यवादी विचार के चलते बारखोर का उल्टा चक्कर लगाते हुए देखे जा सकते हैं । एक अक्टूबर के तिब्बती विरोध प्रदर्शन के दौरान भी उन्होंने ऐसा ही किया था ।

तिब्बत में चीनी सांस्कृतिक क्रांति के दौरान प्रत्येक धार्मिक क्रियाकलाप के सार्वजनिक प्रदर्शन पर प्रतिबंध लगाया गया था । 1980 के दशक में तिब्बतियों ने धार्मिक परम्पराओं का पुनः सार्वजनिक रूप से परिपालन शुरू किया । 1987 के विरोध प्रदर्शन के समय चीनी नीति किसी भी धार्मिक परम्परा के उस सीमा तक पालन की अनुमति देने की थी, जहां तक उससे चीनी सत्ता पर कोई दुष्प्रभाव न पड़े । 27 सितम्बर 1987 के चीन विरोधी प्रदर्शन में ड्रेपंग मठ के लामाओं ने खोरा की धार्मिक परम्परा का सफलतापूर्वक प्रयोग तिब्बतियों में राष्ट्रीय अस्मिता का भाव जागृत करने के लिए किया । खोरा की परम्परागत मुद्रा में दलाई लामा के सुदीर्घ जीवन की कामना, तिब्बती ध्वज और तिब्बत की स्वतन्त्रता के लिए उद्घोषों को सम्मिलित करके उन्होंने वस्तुतः तिब्बती राष्ट्रवाद का विजय उद्घोष किया ।

वर्तमान में ल्हासा की बस्ती मुख्य रूप से दो क्षेत्रों–तिब्बती बहुल क्षेत्र व बसाई गई चीनी जनसंख्या के क्षेत्र में विभाजित है । 1987 के तीनों विरोध प्रदर्शन बारखोर,जो खोरा का केन्द्र बनता है तथा जोखांग मंदिर से आरंभ होकर तिब्बत क्षेत्रीय सरकार के कार्यालयों तक आयोजित किए गए । प्रदर्शनों का यह रवैया राष्ट्रवाद में अतिउत्साहित तिब्बतियों को तिब्बत में लाकर बसाई गई चीनी जनसंख्या से पृथक एक ऊँचा दर्जा प्रदान करता है – ऐसे जागरूक नागरिकों का दर्जा जो अपने पराधीन देश को स्वतंत्र देखने का सपना संजोए है। बारखोर के निकट

आयोजित विरोध प्रदर्शनों में तिब्बती जनसामान्य ने यह स्पष्ट कर दिया कि वे किस प्रकार वैयक्तिक धार्मिकचर्या का उपयोग राष्ट्रीय प्रतीकों का प्रयोग करके विद्रोह के स्वर मुखर करने में कर सकतें हैं । सरकारी कार्यालयों के सामने विरोध प्रदर्शन का तिब्बतियों का उद्देश्य संभवतः यह जानने का था कि कितनी धार्मिक स्वतत्रता की अनुमति उन्हे प्राप्त और क्या राष्ट्रीयताओं एवं अल्प संख्यकों के लिए चीन द्वारा घोंषित तथा कथित ''विशेष उपचारों'' की सहूलियत उन्हे हासिल है ? बारखोर के चतुर्दिक आयोजित खोरा विरोध ने न सिर्फ बारखोर को तिब्बतियों के अपने क्षेत्र के रूप में प्रतिष्ठित किया है वरन् इससे तिब्बतियों ने विरोध प्रदर्शन का अपना अलग तरीका खोज निकाला है – धार्मिक चर्या में राष्ट्रीय प्रतीकों के उपयोग द्वारा राष्ट्रवाद का उन्नयन।

6 अक्टूबर 1987 के विरोध प्रदर्शन के दौरान प्रदर्शनकारियों ने किसी राष्ट्रीय प्रतीक का प्रयोग नहीं किया मात्र सरकारी कम्पाउन्ड में 27 सितम्बर के प्रदर्शनकारियों की शान्तिपूर्ण रिहाई की मांग की । खोरा विरोध में सामान्य तिब्बतीजनों के चीन के विरोध के लिए वैयक्तिक धार्मिक क्रियाकलाप के सामूहिक हित में प्रयोग के विचार को सम्प्रेषित किया ।

मार्च 1989 को तिब्बत में मार्शल लॉ लागू होने से पूर्व 1987 कें तीन चीन विरोधी प्रदर्शनों के पश्चात् जनवादी चीनी सरकार ने तिब्बती सहकारी सूचना केन्द्र बन्द करके और पर्यटकों के तिब्बत प्रवास पर अनेक शर्ते लगाकर तिब्बत को शेष विश्व के लिए ''बन्द'' कर दिया । तिब्बत ल्हासा से आने वाली सूचनाओं का प्रवाह बाधित हो गया क्योंकि इन सूचनाओं के स्रोत पश्चिमी पर्यटक यात्रियों द्वारा तिब्बतियों से प्राप्त जानकारी तथा उनके द्वारा पर्यवेक्षण से प्राप्त सूचनाएं व प्रदर्शनों के छुपकर लिए गए फोटोग्राफ हुआ करते थे ।

1 अक्टूबर 1987 के विरोध प्रदर्शन के बाद अनेक तिब्बतियों को गिरफ्तार कर लिया गया। कई घायल तिब्बती गिरफ्तारी और पूछताछ के भय से सरकारी अस्पताल नहीं गए। प्रदर्शन में पुलिस की गोलियों से मृत व्यक्तियों के शव 10 अक्टूबर तक पुलिस कस्टडी में रखे गए । अन्ततः विदेशी पत्रकारों को 24 घण्टों के भीतर ल्हासा छोड़ देने के बाद वे शव कुछ पैसे लेकर तिब्बतियों को अन्तिम संस्कार के लिये दे दिये गये । विशेष चेतावनी दी गई कि शवों को सीधे अन्तिम संस्कार के लिये ले जाया जाए । अन्य प्रदर्शन न करने की चेतावनी भी दी गई । अगले कई सप्ताह तक गिरफ्तारियों का सिलसिला चलता रहा । करीब 600 तिब्बती गिरफ्तार किये गये। गिरफ्तारी का आधार उन वीडियो फिल्मों व फोटोग्राफों को बनाया गया जो विरोध प्रदर्शन

के दौरान चीनी रिपोर्टरों और पुलिस ने इकट्ठे किए थे । विरोध प्रदर्शनों के दौरान पुलिस द्वारा की गई गोला बारी को चीनीपक्ष ने स्वीकार नहीं किया ।[1]

चीनी टेलीविजन द्वारा पत्थर फैकती हुई भीड़ और प्रदर्शनकारियों द्वारा जलाए गए पुलिस स्टेशन का व्यापक प्रसारण किया गया ।[2] पुलिस द्वारा लामाओं की शारीरिक प्रताडना और गिरफ्तारियों का कोई उल्लेख न होकर सिर्फ इतना स्पष्ट किया गया कि कुछ लामा अपने रूटीन शैक्षिक कार्य के लिए पुलिस स्टेशन आए थे । 1 अक्टूबर को संघर्ष में पांच विदेशियों को भीड़ में फोटों लेने के कारण गिरफ्तार करके उनके पासपोर्ट और कैमरे जब्त कर लिये । चीनियों द्वारा इस संघर्ष के बाद सूचनाओं के प्रवाह को बन्द कर दिया गया परन्तु पश्चिमी पर्यटकों द्वारा तिब्बत पर क्रूर चीनी शासन के दमन की रिपार्टें एक तरह से शेष विश्व के लिए तिब्बत के विषय में सूचनाओं का प्रमुख स्रोत बन गई । 1985 में पर्यटकों को व्यक्तिगत तौर पर तिब्बत यात्रा की अनुमति दे दी गई । इस संदर्भ में ल्हासा स्थित तिब्बतियों द्वारा चलाये जा रहे ट्रेवलर्स को–आप की भूमिका सराहनीय रही । ये केन्द्र एक तरह से तिब्बती सूचना केन्द्रों के रूप में भी कार्य करते थे । विदेशी पर्यटकों द्वारा दान में प्राप्त पुस्तके और स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं द्वारा दान में दी गई दवाएं उनके कार्य संचालन में सहायक हुआ करती थी परन्तु 1 अक्टूबर के प्रदर्शन के बाद प्रतिक्रियावादी साहित्य रखने के आरोप में उन्हे भी बन्द कर दिया गया । इस दौरान ल्हासा आए विदेशी पर्यटकों के कमरों व पासपोर्टों की तलाशी के बाद उन्हे 16 अक्टूबर तक ल्हासा छोड़ने की चेतावनी दी गई । तिब्बत की दूर संचार एवं तार व्यवस्थाएं निष्क्रिय कर दी गई । ल्हासा के अन्दर और बाहर जाने वाले बसें रद्द कर दी गईं । 15 विदेशी पत्रकारों को इस आधार पर 9 अक्टूबर तक ल्हासा छोड़ने की चेतावनीं दी गई कि उन्होंने तिब्बत के ''खुले क्षेत्रों'' की यात्रा के लिए दस दिन पूर्व अनुमति क्यों नहीं ली थी । पश्चिमी पर्यटकों पर विद्रोह को उत्तेजित करने के आरोप लगाए गए । इस सब के बावजूद विश्व मीडिया के सामने चीन तिब्बत की स्थिति को सामान्य तथा तिब्बत को शेष विश्व के लिए खुला प्रचारित करता रहा जबकि वास्तविकता तो यह थी कि चीन ने तिब्बत के खुलेपन को सहजता से साम्यशाही कड़ी बेड़ियों में जकड़ दिया था ।

सन् 1988 में चीनी पर्यटन कम्पनियों के दबाव के तहत समूह पर्यटन के लिए तिब्बत जाने

---

1. ''बीजिंग शिन्हुआ'', अंग्रेजी संस्करण, 2 अक्टूबर 1987 ।

2. मण्डारिन की बीजिंग टेलीविजन सेवा, 4 अक्टूबर 1987 ।

की अनुमति दे दी गई । मार्च 1989 में तिब्बत में मार्शल लॉ लागू होने तक पर्यटकों को वहां घूमने की अनुमति प्राप्त थी । परन्तु विदेशी पत्रकारों को अनुमति काफी पूछताछ के बाद दी जाती थी और किसी भी जनप्रदर्शन के समय तिब्बत में रूकने के लिए उनके लिए बीजिंग से विशेष पूर्व अनुमति प्राप्त करना अत्यावश्यक था ।,वस्तुतः 1980 के दशक में तिब्बत को शेष विश्व के लिए खोलने की चीनी जनवादी सरकार की नीति के तहत तिब्बतियो को चीन द्वारा चलाए जा रहे विचारधारागत अभियानों से मुक्ति मिली परन्तु 1987 के विरोध प्रदर्शनों के बाद चीनी नीति विदेशियों के प्रति उपेक्षा और संदेह में परिणित हो गयी । तिब्बतियों पर चीनी शासन का दमन चक्र अत्यधिक तीव्रता से चल पड़ा और एक बार पुनः तिब्बत शेष विश्व के लिए बन्द हो गया ताकि विद्रोह को दबाने के लिए सामाजिक नियन्त्रण की सम्पूर्ण प्रणाली का प्रयोग तिब्बती समाज पर किया जा सके और बाहरी दुनिया को ऐसा लगे कि तिब्बत के हालात स्वतः ही सामान्य हो रहे हैं और तिब्बतियों के स्वतंत्रता के लिए संघर्ष के महान राजनीतिक लक्ष्य को मातृभूमि से पृथक होने की मंशा रखने वाले मुट्ठी भर अलगाववादियों की सनक का आवरण पहनाया जा सके ।

<u>4 मोनलम दंगे–5 मार्च 1988 </u>:– मार्च 1980 में तिब्बत में प्रथम कार्यशाला के उद्घाटन के साथ अतिवामवाद के उत्साह में तिब्बत के सांस्कृतिक रूप को मद्देनजर रखे बिना अपनाई गई चीनी सरकार की नीतियों के पुनरावलोकन का विचार सम्मुख आया । सांस्कृतिक क्रांति के दौरान उपजे तिब्बती आक्रोश के मद्दे नज़र चीन सरकार की तिब्बत विषयक नीति में कुछ नर्मी अनुभव की गई । मई 1980 मे चीन की साम्यवादी पार्टी के तत्कालीन सेक्रेटरी हू–याओ बांग की तिब्बत यात्रा के दौरान भी जनवादी चीनी सरकार की बीस वर्ष पुरानी नीति के स्थान पर तिब्बती संस्कृति के प्रति सम्मान प्रकट करने तथा तिब्बती किसानों व चरवाहों को करों में रियायत देने की उदारवादी नीति के दर्शन हुए । इन सब बातों से ऐसा प्रतीत हुआ मानो तिब्बत स्वायत्ता के मार्ग पर आगे बढ़ रहा हो परन्तु चीन की वास्तविक आकांक्षा अब भी आवरण में बन्द थी । सन् 1980 से 1990 के मध्य का समय तिब्बत के इतिहास में राष्ट्रवाद के उत्थान व चीनी दमन चक्र के पारस्परिक घात–प्रतिघातों का समय रहा । तिब्बती राज व्यवस्था की आंतरिक प्रेरणा शक्ति के रूप में धर्म व दलाई लामा के महत्व को समझना अत्यन्त आवश्यक है । सन् 1980 से 1990 के बीच उभरे तिब्बती राष्ट्रवाद के धर्म एवं धार्मिक कारक काफी हद तक उत्तरदायी रही। चाहे बात 1987 के चीन विरोधी प्रदर्शनों की हो या मार्च 1988 के मोनलम उत्सव की या फिर 8 मार्च 1989

के दंगों के बाद तिब्बत पर मार्शल लॉ लागू करने की घटना इन सब के पीछे तिब्बत स्थित धार्मिक मठों के लामाओं का उत्साही राष्ट्रवाद निहित रहा है । 6 मिलियन तिब्बतियों के लिए प्राण न्योछावर करना वे अपना पावन धार्मिक कर्तव्य मानते हैं क्योंकि अन्ततः लोक हित में प्राणों का उत्सर्ग करना यही तो महात्मा बुद्ध का उपदेश है । उनके लिए स्वतंत्र तिब्बत का सीधा संबंध बौद्ध धर्म के संरक्षण तथा विस्तार से है । इस परिपेक्ष्य में तिब्बत में धार्मिक उत्सवों का समय तिब्बती राष्ट्रवाद के प्राकट्य का समय होता है ।

चीन ने अपनी तथा कथित उदारवादी एवं धार्मिक संहिष्णुता की नीति के प्रदर्शन के लिए 5 मार्च 1988 को मोनलम उत्सव के आयोजन की घोषणा की। इस उत्सव का अयोजन 24 फरवरी से 5 मार्च अर्थात 10 दिनों तक होना था। इस उत्सव के आयोजन के पीछे चीन की मंशा विश्व को ल्हासा की स्थिति ही सामान्यतः एवं स्थितियों पर चीन के नियंत्रण की अवस्था से परिचित कराने की थी। परन्तु तीन प्रमुख मठों के लामाओं ने चीन द्वारा आयोजित किये जाने वाले इस उत्सव के बहिष्कार का निर्णय लिया। 5 मार्च 1988 के दिन घटित घटनाक्रम में तिब्बतियों द्वारा हान वंशीय नागरिकों पर की गई हिंसा ने तिब्बती राष्ट्रवाद के उग्र स्वरूप को स्पष्ट किया। अंततः इस महत्वपूर्ण उत्सव के लामाओं द्वारा बहिष्कार के कारण चीन की उदारवादी धार्मिक नीति पर प्रश्न चिन्ह लगता देखकर चीनी नेतृत्व ने इस उत्सव के आयोजन के लिए लामाओं का समर्थन प्राप्त करने के लिए गिरफ्तार किये गये तिब्बती प्रदर्शनकारियों को रिहा करने का निर्णय किया। परन्तु चीनी पक्ष सफल नहीं हुआ। अंततः इस उत्सव के आयोजन के लिए तिब्बत की चीनी सरकार ने धार्मिक मठों में रहने वाले गैर पंजीकृत बौद्ध भिक्षुओं पर दबाव डालना शुरू किया साथ ही 15 फरवरी की प्रेस ब्रिफिंग में लामाओं से "अच्छा उदाहरण " पेश करने की अपील की। गैर पंजीकृत भिक्षुओं के अतिरिक्त सेरा, द्रेपंग एवं गांडेन मठों के लामाओं ने चीन द्वारा आयोजित मोनलम उत्सव में भाग न लेकर बहिष्कार जारी रखा। जनवादी चीनी गणराज्य की सरकार द्वारा जोखांग मंदिर में चल रहे उत्सव के दूरदर्शन प्रसारण की व्यवस्था के साथ आयोजन 4 मार्च तक शांतिपूर्ण ढंग से जारी रहा। समारोह में उपाधियां वितरित किये जाने के बाद द्रेपंग के लामा ने तिब्बती स्वतंत्रता का उद्घोष करना आरंभ कर लिया। इसके पश्चात् चीनी पक्ष द्वारा ल्हासा स्थित चीनियों को सावधान रहने की चेतावनी के साथ जोखांग मंदिर के बाहर पुलिस तैनात कर दी गई। उधर प्रमुख तिब्बती नेता यूलू दावा जीरिंग को रिहा न करने के कारण विभिन्न मठों के लामाओं मे रोष व्याप्त था। 5 मार्च 1988 को मोनलम के अंतिम दिवस

जोखांग स्थित मैत्रेय की प्रतिमा के बारखोर परिक्रमा से वापस होकर पुनः जोखांग मंदिर में स्थापित किये जाने के बाद गांडेन मठ के लामा पार्टी सेक्रेटरी रेडी के पास पहुंचे व यूलू दावा जीरिंग की रिहाई की मांग की जिसके लिए चीनी पक्ष वचनबद्ध था परन्तु आयोजन के बाद चीनी पक्ष के यूलू दावा की रिहाई से मुकरने के कारण लामाओं में रोष व्याप्त हो गया। लामाओं व चीनी अधिकारियों के बीच हुए वाद–विवाद के दौरान तिब्बत की स्वतंत्रता के नारे लगायें गये। 200 के लगभग बौद्ध लामाओं ने बारखोर की परिक्रमा की। उनके जोखांग मंदिर में पहुँचने पर जनवादी सैन्य पुलिस ने उन पर अश्रु गैस व लाठियों से प्रहार कर दिया। इस बीच जोखांग मंदिर के चारो ओर उपस्थित लामाओं की सशस्त्र पुलिस बल द्वारा घेराबंदी कर दी गई। इस पर लामाओं ने पुलिस पर पत्थर फेंकने शुरू कर दिये। इस बीच अनेक तिब्बती लामाओं के साथ आ गये। द्वितीय परिक्रमा के समय चीनी पुलिस ने उन्हें रोकने की असफल कोशिश की परन्तु इस समय तक तिब्बती जन समूह काफी उत्तेजित हो चुका था। इस बीच साम्यवादी पार्टी के डिप्टी सेक्रेटरी रेडी व अन्य अधिकारी जोखांग परिसर में स्थित उन कमरों में जा छिपे जो कम्युनिस्ट केडरों द्वारा राजनीतिक शिक्षण के लिए प्रयोग में लाये जाते थे। 12:30 बजे जनवादी सैन्य पुलिस द्वारा अश्रु गैस का प्रयोग करके जन समूह को तितर–बितर करके उन्हें जोखांग से मुक्त कराया गया। चीनी सैनिकों ने जोखांग मंदिर में प्रवेश करके लामाओं पर प्रहार करना आरंभ कर दिया। कुछ लामाओं को चीनी सैनिकों ने मंदिर की छत से नीचे फेंक दिया। अस्तु 5 मार्च को मोनलम के अंतिम दिन हुए इस बर्बर कांड में मृत तिब्बतियों की वास्तविक संख्या बता पाना असंभव कार्य है। अप्रैल 1988 में दिये गये एक टेलीविजन साक्षात्कार में पंचेन लामा ने इस संघर्ष में सिर्फ 5 व्यक्तियों के मारे जाने की पुष्टि की जबकि कुछ पाश्चात्य पत्रकारों ने यह संख्या काफी अधिक बताई हैं।[1]

इस हिंसा के बाद जोखांग मंदिर में उपस्थित जख्मी एवं मृतप्रायः लामाओं को चार ट्रकों में भरकर ले जाया गया। इस बीच ल्हासा के तिब्बती बहुल इलाके में जनवादी सैन्य पुलिस के साथ तिब्बतियों का संघर्ष जारी रहा। तिब्बती जन समुदाय चीनी सैनिकों द्वारा जोखांग की पवित्रता भंग किये जाने के कारण काफी उत्तेजित था। उत्तेजना का यह ज्वार इतना तीव्र था कि खम्पा जो कि वर्ष के कुछ समय के लिए पूर्वी तिब्बत से ल्हासा आते है और सामान्यतया ल्हासा के स्थाई निवासी नहीं है उन्होंने भी इस जनविरोध में बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया। संभवतः तिब्बत के

इतिहास में यह पहला मौका था जबकि तिब्बत के हानवंशीय चीनी लोग तिब्बती जन विरोध का शिकार बने। चीनी नागरिकों की सम्पत्ति को भी नुकसान पहुँचा।

यहां यह तथ्य उल्लेखनीय है कि मोनलम उत्सव तिब्बत के नववर्ष को इंगित करता है, यह महात्मा बुद्ध की गैर बौद्ध उपदेशकों पर विजय का प्रतीक है। ऐसा समझा जाता है कि दुर्बुद्धि राजा रेमसम इस समय धर्मगुरू दलाई लामा से पराजित होकर राज्य छोड़कर भाग गया था।

यह अवसर एक तरह से आध्यात्मिक सत्ता की सुवास से राज्य व राजनीति को पवित्र शुद्ध व सुगंधित करने का था परन्तु जब चीन ने इस अवसर के कूटनीतिक दुरूपयोग का प्रयत्न किया तो तीनों महत्वपूर्ण मठों के लामाओं द्वारा इसका खुलकर विरोध किया गया। परन्तु चीन ने अपने अवसरवादी चरित्र के कारण इससे निपटने के इन्तजाम जनवरी 1988 के दौरान ल्हासा में जनवादी सैन्य पुलिस तैनात करके पहले ही कर लिये थे। तिब्बती जन एवं चीनी सैनिकों के बीच हुई इस पहली सीधी मुठभेड़ में चीनी आधिकारिक स्रोत में पीपुल्स आर्म्ड पुलिस के एक जवान की मृत्यु व 28 जवानों की घायल होने की सूचना दर्ज कराई गई। मोनलम दंगों के दौरान हुई हिंसा एवं हत्याओं के लिए 4 तिब्बतियों को दोषी ठहराया गया उनमें से एक तिब्बतन विश्वविद्यालय का छात्र लोबसांग तेनजिंग था जिसे मृत्यु दंड दिया गया। इस छात्र को बाद में तिब्बती छात्रों ने "वर्ष के सर्वोत्तम छात्र" का सम्मान प्रदान किया। 3 अन्य घोषित अभियुक्तों में ग्याल्तसेन चोपेल, जीरिंग डोन्डुप तथा सोनम वांग्डू आदि थे। अगस्त 1988 में विश्वविद्यालय के छात्रों द्वारा किये गये प्रदर्शन के कारण इन तीनों पर चलाये गये मुकदमे मुल्तवी कर दिये गये। 9 जनवरी 1989 को पुनर्आरंभ सुनवाई में आरोपियों के कुछ रिश्तेदारों की उपस्थिति में कार्यवाही आरंभ की गई। सभी आरोपियों को बारखोर व मोनलम दंगों में भीड़ को भड़काने का दोषी पाया गया। परन्तु अभियुक्तों ने इसे अपराध नहीं माना और न ही अन्य तिब्बती साथियों का नाम ही बताया।

इस प्रकार 5 मार्च 1988 को घटित मोनलम ने जहां एक ओर तिब्बती जनजीवन में व्याप्त धर्म व राजनीति की अन्योन्याश्रियता को स्पष्ट किया। वहीं तिब्बती राष्ट्रवाद के शंखनाद में निहित धार्मिक ध्वनि की अनुगूंज भी स्पष्टतः कर्णगोचर हुई।

(5) द्रेपंग मेनेफेस्टो – लोकतंत्र का आशय :– 27 सितम्बर 1987 के बारखोर प्रदर्शन में भागीदार रहे द्रेपंग मोनेस्ट्री के लामाओं ने सन् 1988 में एक ग्यारह पृष्ठीय पैम्फलेट प्रकाशित

किया जिसे नाम दिया गया, "तिब्बत के बहुमुल्य लोकतांत्रिक संविधान का अर्थ" । 1987 के प्रदर्शन के बाद हुई गिरफ्तारियों के कारण तिब्बतीजन की आत्मा आक्रोशित थी। जनवरी 1988 में जेल से मुक्ति के तुरंत बाद द्रेपंग लामाओं ने पर्चे प्रकाशित कराने शुरू कर दिये। संक्षेप में द्रेपंग लामाओं द्वारा प्रकाशित साहित्य का लक्ष्य तिब्बत के दूरस्थ इलाकों में तिब्बती जन को राजनीतिक रूप से शिक्षित करना था। 1963 के दलाई लामा द्वारा निर्मित संविधान पर आधारित इस मेनीफेस्टो का लक्ष्य लोकतंत्र का आशय स्पष्ट करते हुए तिब्बतियों को भविष्य में तिब्बत का लोकतांत्रिक शासन सम्हालने योग्य बनाना था। इसे तिब्बती जन के राजनीतिक जागरण के लिए राष्ट्रवादी तिब्बतियों द्वारा किया गया एक प्रयास कहा जा सकता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा को आधार बनाया गया। ध्यातत्व है कि 1963 में दलाई लामा की धर्मशाला स्थित निर्वासित सरकार ने समानता आधृत जिस संविधान की रचना की थी वह भी 1948 की मानवाधिकार की घोषणा की भावना से ओतप्रोत था। भेदभाव के बिना समानता (d bye' byed med pa'I 'dra mnyam') के मूलमंत्र से अनुप्राणित 1963 का संविधान भाषा, लिंग, जन्मस्थान, धर्म, जाति, क्षेत्र एवं सम्पत्ति के आधार पर भेदभाव का निषेध करता है धारा–8, सभी नागरिकों के लिए अभिव्यक्ति एवं विचार की स्वतंत्रता, सभा एवं संगठन निर्माण की स्वतंत्रता, भ्रमण की स्वतंत्रता धारा– (17, 18 और 20) की व्यवस्था करता है। इस प्रकार द्रेपंग मेनीफेस्टो तिब्बत के प्रति जनजागरण एवं एक सामंती समाज के लोकतांत्रिक व्यवस्था की ओर अग्रसर होने की तिब्बती भावना का परिचायक बन गया है।

द्रेपंग मेनीफेस्टो की विविध धाराओं पर दृष्टिपात करने से पूर्व एक–दो बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है यथा द्रेपंग मेनीफेस्टो यद्यपि धार्मिक एवं पंथ निरपेक्ष सिद्धांतों से युक्त लोकतत्र को केन्द्रीय विचार के रूप में स्वीकार करता है तथापि यह मेनीफेस्टो भविष्य के दलाईलामा अथवा उनके द्वारा नियुक्त मंत्रियों की केबिनेट के राजनैतिक दायित्व पर प्रकाश नहीं डालता। प्रतीत होता है कि द्रेपंग मेनीफेस्टो तिब्बत के समाज को पुरातन समाज की सामंतवाद सरीखी बुराईयों से मुक्त रखना चाहता है जिसमें सामंतों एवं मठ संपत्ति पर लोग वंश परंपरा के आधार पर अधिकार जमाते थे एवं सम्पत्ति समाज के कुछ आभिजात्य वर्ग तक भी सीमित थी। द्रेपंग मेनीफेस्टो स्वतंत्र लोकतांत्रिक तिब्बत में लामाओं की किसी भूमिका को स्वीकार नहीं करता। जहां चीन के राजनीतिक शिक्षण शिविरों में तिब्बत के पुराने सामन्तवादी समाज व रूढ़ि वादी विचारधारा को चीन के तिब्बत सुधार कार्यक्रमों में बाधा के रूप में प्रचारित किया जाता रहा है

वहीं द्रेपंग मेनीफेस्टो में स्वयं तिब्बत में चीनी शासन को वहां समकालीन परंपरा के लोकतांत्रिक मानदण्डों की स्थापना में बाधक बनाकर प्रस्तुत किया गया है। चीनियों की तिब्बतियों के लिए प्रयुक्त शब्दावली को सन् 1988 में प्रकाशित एक पोस्टर में उल्टे चीनियों के लिए ही प्रयुक्त किया गया। अब तक चीनियों द्वारा तिब्बतियों के लिए प्रयुक्त "प्रतिक्रियावादी" शब्द का प्रयोग अब राष्ट्रवादी तिब्बतियों द्वारा तिब्बत की लोकतांत्रिक प्रगति में बाधक बन रहे चीनी कम्यूनिस्टों के लिए प्रयुक्त किया गया। चाहे शब्द इम्पीरियलिज्म हो या डेमोक्रेसी या पीपुल्स गवर्नमेंट इन सभी पर एक गहरी चीनी छाप दिखाई देती है। वस्तुतः डेमोक्रेसी शब्द का तिब्बती भाषा में आविर्भाव चीनी साम्यवादी विचारधारा के फलस्वरूप ही हुआ। डेमोक्रेसी अर्थात "dmangs gtso' में निहित 'dmangs' तिब्बती जनसमुदाय की बिना किसी भेदभाव के शासन में सहभागिता को स्पष्ट करता है। द्रेपंग मेनीफेस्टो भविष्य के तिब्बत की राजनीतिक व्यवस्था की ओर संकेत करता है। एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था जो तिब्बती जन समुदाय की आशा आकांक्षाओं, आवश्यकताओं की आपूर्ति में सक्षम हो, जो लोकतांत्रिक, भेदभावरहित और रूढ़ि वादिता से मुक्त हो। इस तरह की व्यवस्था की स्थापना तभी हो सकती है जबकि शासन में जनता की सहभागिता या तो प्रत्यक्ष हो या प्रतिनिधियों के माध्यम से । सन् 1963 में तिब्बत की निर्वासित सरकार द्वारा निर्मित संविधान एवं उपरोक्त सरकार की कार्यप्रणाली एक ऐसे ही संगठन को स्पष्ट करती है जिसमें जन समुदाय की सहभागिता स्पष्टतः सामने आये। चाहे संगठन के सदस्य निर्वाचित हो या मनोनीत उनका उद्देश्य तिब्बती जन की आवश्यकताओं को स्पष्ट करना होना चाहिए। न सिर्फ राजनीतिक मामलों में तिब्बतियों की स्वतंत्रता का समर्थन बल्कि जाति, धर्म, भाषा, प्रदेश, वित्त, लिंग एवं सामाजिक मूल पर आधारित भेदभाव का विरोध करना सन् 1963 के संविधान का मूलभूत उद्देश्य है। द्रेपंग मेनीफेस्टो इस मायने में उपरोक्त संविधान का समर्थन करता है। यह तिब्बत के पुरातन समाज तथा इसकी रूढ़ता से एक स्पष्ट विभेद प्रकट करता है। निश्चित रूप से यह एक ऐसे नवीन तिब्बती समाज की व्यवस्था पर बल देता है जिसमें सामंती उत्तराधिकार एवं मठ परिसंपत्तियों के लिए कोई स्थान नहीं होगा। द्रेपंग मेनीफेस्टो ने स्वतंत्र एवं लोकतांत्रिक तिब्बत में लामाओं एवं मठों की राजनीतिक भूमिका को स्पष्टतः अस्वीकार किया गया है। मेनीफेस्टो बौद्ध धर्म का विरोध नहीं करता बल्कि मानव मात्र की समानता एवं अहिंसा जैसे नैतिक सिद्धांतों के आधार पर इसे विश्व के वर्तमान संकटों के समाधान में संलग्न प्रगतिशील विचारधारा के रूप में स्वीकार करता है। द्रेपंग मेनीफेस्टो धर्म को अनुकरणीय नैतिक सिद्धांतों के रूप में तो स्वीकारता

है परन्तु राजनीतिक धर्मीकरण को पूर्णतः अस्वीकार करता है। कुल मिलाकर द्रेपंग मेनीफेस्टोंधर्म एवं धर्म निरपेक्षता के सामजस्य का प्रयास है यह एक ऐसे लोकतांत्रिक राज्यको आदर्शमानता है जो समानता, भाईचारे एवं धर्म के सकारात्मक प्रयोग पर आधृत हो।

(6) अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार दिवस – 10 दिसम्बर 1988 व उसके बाद :– 3 दिसम्बर 1988 को जोखांग मंदिर के सामने हजारों की संख्या में तिब्बती जमा हुए एवं दलाई लामा लिखित "सत्य की प्रार्थना" का गांन करते हुए उन्होंने तिब्बत के रक्षकों से असभ्यों को हिमप्रदेश से बाहर निकालने का आव्हान किया। इसी क्रम में आगे 10 दिसम्बर का महत्वपूर्ण दिन आया। 10 दिसम्बर 1988 वह अवसर था जबकि संयुक्त राष्ट, मानवाधिकार घोषणा की 40 वीं वर्षगांठ मना रहा था। चीन अधिकृत तिब्बत के मूल निवासियों के लिए इस दिन का महत्व यह था कि अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के इस दिन कुछ विरोध प्रदर्शनों का आयोजन करके वे चीन के नियंत्रण में अपनी दुर्दशा के प्रति विश्व समाज का ध्यान आकृष्ठ करना चाहते थें। मानवाधिकार घोषणा की वर्षगांठ वह सुअवसर था जबकि विश्व जनमत को अपने मानवाधिकारों के प्रति जागृत करके तिब्बती जन समुदाय चीन को उसकी वास्तविक स्थिति से वाकिफ करा सकता था। तिब्बत की राष्ट्रीय आन्दोलन को अन्तर्राष्ट्रीय लोकतंत्र एवं मानवाधिकार विषयक आन्दोलन से जोड़कर दिखाने का यह अच्छा अवसर था। इसके साथ ही तिब्बतियों का यह आन्दोलन तभी सफल हो सकता था जबकि इसका जनाधार व्यापक हो। इसलिए इसमें सामान्य जनता के अलावा लामाओ एवं मठों की सहभागिता भी आवश्यक थी। ल्हासा के आस–पास के तीन बड़े मठ एवं कुछ छोटे मठ भी इस आंदोलन के लिए जनप्रबोध के कार्य में जूट गये। आन्दोलन के प्रति विश्व समाज की सहानुभूति प्राप्त करने के उद्देश्य से आन्दोलन के अहिंसात्मक एवं शांतिपूर्ण स्वरूप पर बल दिया गया। काफी बड़ी मात्रा में पर्चे बांटे गये, जगह–जगह पोस्टर चिपकाऐं गये। 9 दिसम्बर की शाम एवं 10 दिसम्बर की सुबह तक विरोध प्रदर्शन की तैयारियों को अंतिम रूप दिया जा चुका था। दूसरी तरफ चीनी पक्ष भी इन विरोध प्रदर्शनों से पूरी तरह अनजान नहीं था। 9 दिसम्बर की रात चीनी सैनिकों से भरे 20 ट्रक ल्हासा में तैनात कर दिये गये। इसके अतिरिक्त सरकारी तिब्बती कर्मचारियों को 10 दिसम्बर की दोपहर को कार्य स्थानों पर ही ठहरने का आदेश दिया गया ताकि वे प्रदर्शन आन्दोलन में हिस्सा न ले सके। तिब्बत घूमने गये पर्यटकों के वीजा की अवधि को और अधिक विस्तार नहीं दिया गया। स्कूली बच्चें को भी 10 दिसम्बर के कार्य दिवस के बाद घर जाने की इजाजत नहीं दी गई। कुल मिलाकर तिब्बती जन समुदाय की अलग–अलग

"बैरीकेटिंग" कर दी गई। जोखांग मंदिर के आस–पास चीनी फौज की कड़ी तैनाती कर दी गई। अतः एन वक्त पर योजना बदलते हुए जोखांग मंदिर के स्थान पर रामोचे पर प्रदर्शन का निर्णय लिया गया। डेढ़ दो घंटे के अन्तराल पर करीब 11 बजे 30–40 लामाओं के समूह ने बारखोर की ओर प्रस्थान किया। इनके पीछ–पीछे तिब्बतियों की विशाल भीड़ भी आगे बड़ी। जोखांग के मुख्य स्थल पर पहुँचने के पहले ही चीनी फौज ने स्वचालित राईफलों और अश्रु गैस से तिब्बती प्रदर्शनकारियों पर हमला बोल दिया। हिंसा के इस तांडव में कई प्रदर्शनकारी शहीद हुये, घायलों को ट्रकों में भरकर चीनी फौज ने अज्ञात स्थान के लिए रवाना कर दिया। ल्हासा स्थित विदेशियों पर प्रतिबंध लगा दिये गये ताकि वे आन्दोलन का विवरण शेष विश्व को उपलब्ध न करवा सके। इसके बावजूद इस आन्दोलन को ल्हासा स्थित कई विदेशियों ने न सिर्फ देखा बल्कि उसका विवरण और फोटोग्राफ भी बाहरी दुनियों को उपलब्ध कराये।

बारखोर के उत्तरी पश्चिम छोर पहुंचने के बाद लामाओं की अगुवाई में भीड़ दो भागों में बंट गई। एक समूह चार सेरा लामाओ के नेतृत्व में ध्वज फहराते हुए बारखोर की परिक्रमा की दिशा में आगे बढ़ा तो दूसरा घड़ी की विपरीत दिशा से बारखोर की परिक्रमा करने लगा। तिब्बती लामाओं के नेतृत्व में यह जुलूस ऐसा प्रतीत होता था मानो किसी महान उद्‌देश्य के लिए आत्म त्याग करने के लिए स्वतंत्रता के पुजारी बढ़े चले जा रहे हों। एक ओर इस सारी कार्यवाही को जहां तिब्बती जन का उत्साह समर्थन दे रहा था वहीं दूसरी ओर पीपुल्स आर्म्ड पुलिस ने धार्मिक राष्ट्रीय समर्पण से ओत–प्रोत इन तिब्बती आन्दोलनकारियों पर हिंसक हमला बोल दिया । यह पहला अवसर था जबकि बिना किसी चेतावनी के तिब्बतियों की भीड़ पर हिंसक चीनी प्रकोप वरसा। अनेक प्रदर्शनकारी घायल हुए, अनेक की मृत्यु हुई। कुछ घायल अवस्था में इधर उधर भागे । कुल मिलाकर चीनी पुलिस की अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार दिवस पर तिब्बतियों की इस दमनात्मक कार्यवाही द्वारा यह स्पष्ट हो गया कि चीन की तथाकथित प्रगतिशील छवि तिब्बत के परिप्रेक्ष्य में एक ऐसा घिनौना मुखोटा है, जो मानवाधिकार एवं लोकतंत्र के एकदम विरूद्ध है जहां मानव की गरिमा एवं उसके जीवन के अधिकार का कोई मूल्य नहीं है।

शांतिपूर्ण तिब्बती जन आन्दोलन और उसके प्रति चीनी रूख दोनो ने विश्व के सामने एक बात स्पष्ट कर दी कि चीन का साम्राज्यवादी अड़ियल स्वभाव इतनी आसानी से तिब्बती राष्ट्रवाद के सम्मुख नहीं झुकेगा। 11 दिसम्बर 1988 को चीनी सरकार ने 10 दिसम्बर की घटनाओं के प्रति अपना दृष्टिकोण व्यक्त करते हुए चीनी पक्ष की कार्यवाही को तिब्बती प्रदर्शनकारियों की हिंसा को

रोकने का साधन बताया। और स्पष्ट किया कि पत्थर तथा शराब की बोतलें फोड़ती हुई हिंसक तिब्बती भीड़ पर काबू पाने के लिए पुलिस द्वारा चलाये गये वारनिंग शॉट से एक लामा से मृत्यु हुई व 13 अन्य घायल हो गये।1

इस घोषणा से स्थिति बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है कि चीनी पक्ष सदैव तिब्बती प्रदर्शनकारियों के प्रति इसी प्रकार का रूख अपनायेगा।

18 दिसम्बर 1988 को बीजिंग के "सेन्ट्रल नेशनलिटीज इन्स्टीट्यूट" के तिब्बती छात्रों ने अहिंसक प्रदर्शनकारियों की भीड़ पर हमले के विरोध में तियेन– आन–मन चौक पर प्रदर्शन किया। यद्यपि वे तिब्बती स्वतंत्रता के पक्ष में खुले तौर पर कुछ नहीं बोले परंतु तिब्बती आन्दोलन के प्रति उनकी सहानुभूति इस प्रदर्शन के द्वारा स्पष्ट हुई। इसके बाद 30 दिसम्बर 1988 को तिब्बत यूनिवर्सिटी के शिक्षकों एवं छात्रों द्वारा एक प्रदर्शन आयोजित किया गया जिसमें न तो तिब्बती ध्वज फहराया गया न ही पूर्ववर्ती 10 दिसम्बर के विद्रोह के समान बारखोर व जोखांग को रैली का मुख्य स्थान चुना गया बल्कि इसमें तिब्बती भाषा, धर्म एवं संस्कृति की संरक्षा को मुख्य मुद्दा बनाया गया। कुल मिलाकर यह एक नियंत्रित प्रदर्शन रहा परन्तु चीनी अथोरिटी द्वारा इसे भी विदेशियों के वर्जित रखा गया।

10 दिसम्बर 1988 के विरोध प्रदर्शन द्वारा तिब्बत के प्रति विश्व जनमत कितना जागरूक हुआ यह एक अलग विषय है परन्तु इसके बाद चीनी प्रशासन ने मातृभूमि की एकता के लिए वृह्द स्तर पर राष्ट्रभक्ति शिक्षण अभियान चलाये। इनके दौरान यह स्पष्ट किया गया कि दंगे भड़काना और तिब्बत की स्वतंत्रता को समर्थन देना कानून विरूद्ध है और इसलिए दंडनीय भी। शिक्षण अभियान में प्रमुख बल उन समूहों के शिक्षण पर दिया जाना तय किया गया जो बकौल चीनी प्रशासन के प्रदर्शनों में दोषी पाये गये परन्तु जो स्वयं को दोषी नहीं मानते।[2]

वर्क यूनिट्स (कार्यशालाओं) ने प्रदर्शन में भाग लेने वालों के लिए सार्वजनिक तौर पर माफी मांगने के लिए दबाव डाला गया। इसके अतिरिक्त प्राथमिक एवं मीडिल स्कूलों के छात्रों को दलाई लामा एवं तिब्बत की स्वतंत्रता पर अपने विचार व्यक्त करने को कहा गया।

---

1. बीजिंग शिन्हुआ (अंग्रेजी संस्करण) 11 दिसम्बर 1988, स्रोत – "सर्किल ऑफ प्रोटेस्ट, पॉलीटिकल रिट्यूल्स इन द टिबेटन अपराइजिंग" द्वारा रोनाल्ड पी.श्वार्ट्ज।
2. मंडारिन की ल्हासा तिब्बत प्रादेशिक सेवा का प्रसारण, 16 दिसम्बर 1988

और फिर उनके देश भक्ति शिक्षण को प्रकारान्तर से उनके विचारों को एक दिशा विशेष में मोड़ने का कार्य किया गया। विद्यालयों में प्रश्नावलियों के माध्यम से छात्रों से तिब्बत के मातृभूमि से अलगाव की असंभाव्यता तथा तिब्बत की आजादी के इतिहास विरूद्ध होने के तथ्य पर विचार व्यक्त करने को कहा गया साथ ही अभिभावकों को बच्चों के राजनीतिक विचारों के लिए जिम्मेदार ठहराया गया।[1]

कुल मिलाकर चीनी प्रशासन ने वृद्धिगामी तिब्बती राष्ट्रवाद के विरूद्ध एक ऐसा विचार धारात्मक अभियान छेड़ने का प्रयास किया जिसमें अभिभावकों व छात्रों को मोहरा बनाया गया।

3 जनवरी 1989 को मिडिल स्कूल (1) में चिपकाए गये नोटिस में यह घोषणा की गई कि प्रत्येक यूनिट में राजनीतिक शिक्षण हेतु एक केडर नियुक्त किया जायेगा जो संघर्ष के वास्तविक स्वरूप से छात्रों को अवगत करायेगा साथ ही प्रत्येक विद्यालय स्टूडेंट लायजन केडर की नियुक्ति करेगा। छात्रों को इस बात की हिदायत दी गई कि वे न तो उपद्रव की घटना में भाग ले और न ही उन्हें देखें। यदि उन्होंने ऐसा किया तो न सिर्फ उन्हे स्कूल से निकाल दिया जायेगा बल्कि पब्लिक सिक्यूरिटी डिपार्टमेंट को भी उनके इस दुष्कृत्य के लिए सूचित किया जायेगा। प्रत्येक यूनिट छात्रों व उनके अभिभावकों के साथ मीटिंग करेगी जिसमें पार्टी की नीति, इतिहास, कानून एवं पब्लिक सिक्यूरिटी ब्यूरो की घोषणाओं का अध्ययन किया जायेगा। अवकाश के दौरान घटने वाली घटनाओ के विषय में भी स्टूडेंट लायजन केडर को सूचित करने की हिदायत दी गई। इसी नोटिस में विद्यालयों द्वारा छात्रों को सोशल इन्वेस्टीगेशन के तहत तिब्बत की शांतिपूर्ण मुक्ति तथा पिछले 30 वर्षो के दौरान तिब्बत में चीनी सरकार की उपलब्धियों, कम्यूनिस्ट पार्टी की राष्ट्रीयता विषयक नीति, राष्ट्रीयता के विकास से संबंधित कार्यो पर प्रोजेक्ट तैयार करने के लिए भी निर्दिष्ट किया गया।

कुल मिलाकर चीनी पक्ष का पूरा प्रयास मातृभूमि की एकता व स्थिरता स्थापित करने के लिए तिब्बती छात्रों की विचारधारा में मूलभूत परिवर्तन लाना था जो कि सफल नहीं हुआ। इन प्रकरणों के कुछ समय बाद "तिब्बत यूथ एसोसिएशन" अस्तित्व में आये। ऐसे संगठनों ने तिब्बती राष्ट्रवाद को नवीन आयाम प्रदान किया। तिब्बतियों के समान अधिकार, तिब्बतियों के आत्मनिर्णय, तिब्बतियों की अपनी भाषा के प्रयोग का अधिकार आदि कुछ ऐसे विचार थे जो 10 दिसम्बर 1988 के विरोध प्रदर्शन के परिणामस्वरूप और अधिक मजबूत हुये।

(7) त्रिदिवसीय दंगे – प्रतीकों की भूमिका (मार्च 1989) :– तिब्बती राष्ट्रवाद अपने बहुविध रूपों में व्यक्त होता रहा है। चीनी एवं तिब्बती पक्ष में संघर्ष यद्यपि सम्प्रभुता एवं राष्ट्रीय अस्मिता को लेकर है तथापि धर्म इस संघर्ष की धरा भूमि है। मार्च के महिने में आने वाले उत्सवों एवं संघर्षों की वर्षगांठ के अवसर पर होने वाले तिब्बती चीनी संघर्ष तिब्बती राष्ट्रवाद को ऊर्जा प्रदान करते हैं।

10 दिसम्बर 1988 के आन्दोलन के बाद 7 फरवरी को तिब्बती नव वर्ष पर जोखांग मंदिर के सामने पुनः विरोध प्रदर्शन आयोजित किया गया। इसी प्रकार 19 फरवरी एवं 22 फरवरी को पुनः विरोध प्रदर्शन हुये। स्थिति यह थी कि फरवरी के पूरे महिने ल्हासा में भारी संख्या में पीपुल्स आर्म्ड पुलिस तैनात रही। बावजूद इसके 1 मार्च 1989 को छुपसांग ननरी की आठ ननों एवं लामाओं द्वारा बारखोर की तीन परिक्रमायें की गई। 2 मार्च को जांगखंग ननरी की 37 ननों द्वारा विरोध प्रदर्शन का आयोजन किया गया। प्रदर्शनों की इसी श्रृखंला में 4 मार्च को 13 ननों व कुछ लामाओं ने स्वतंत्रता के लिए नारे लगाते हुए बारखोर की परिकमायें की। द्वितीय परिक्रमा में 75 तिब्बती भी उनके साथ हो गये। चीनी सुरक्षा गार्डों के होते हुए भी प्रदर्शन शांतिपूर्ण ढंग से निपट गये। पुलिस की ओर से किसी प्रतिरोध का सामना नहीं करना पड़ा।

रविवार 5 मार्च 1989 – प्रदर्शन का प्रथम दिवस :– इस दिन दोपहर के करीब 6 ननों, 3 लामाओं के साथ मिलकर कुछ तिब्बती युवाओं ने बारखोर की परिक्रमा आरंभ की। वे हाथ में पेपर पर बना तिब्बती राष्ट्र ध्वज लेकर स्वतंत्रता के नारे लगा रहे थे साथ ही प्रदर्शन के शांतिपूर्ण होने की दुहाई देते हुए हिंसा का प्रयोग न करने का आह्वान भी करते जा रहे थें। पास स्थित पुलिस स्टेशन की छत पर हथियार लिये कुछ ऑफिसर भी खड़े थे । देखते ही देखते सैकड़ों की तादात में तिब्बती जन पूर्वजनसमूह से आ मिले और पुलिस स्टेशन की तरफ बढ़े। बिना किसी चेतावनी के पुलिस स्टेशन के फायरिंग शुरू ओ गई। भीड़ तितर–बितर हुई, कुछ लोग घायल हुये परन्तु मृत कोई नहीं हुआ। इस बीच पीपुल्स आर्म्ड पुलिस के 50 जवानों की यूनिट जोखांग के सामने मैदान पर तैनात कर दी गई। अश्रु गैस के गोले छोड़े गये । कई और तिब्बती गोलियों का शिकार बने । जोखांग स्क्वायर पर पुलिस की तैनती के बाद वहां पहुंचने में असमर्थ तिब्बतियों की भीड़ एक बार पीछे हटी और पुनः बारखोर तक पहुंचने का प्रयत्न किया गया। पीपुल्स आर्म्ड पुलिस ने उन्हे "डेकयी शारलम" तक सीमित रखने का प्रयास किया। इस समय प्रदर्शन हिंसात्मक हो गया। लगभग 3 बजे शाम तक तिब्बती जन पुनः गलियों में इकट्ठे हो गये। इस

भीड़ में युवा तिब्बती और वे पर्यटक भी शामिल थे जो तिब्बत के दूसरे हिस्सों से ल्हासा घूमने आये थें। लगभग पुलिस के 100 जवानों ने डेकयी शारलम के बीच तिब्बतियों की घेराबंदी कर दी। लगभग 3:15 बजे पीपुल्स आर्म्ड पुलिस ने स्वचालित हथियारों से प्रदर्शन कारियों पर हमला बोल दिया तथा काफी दूर तक उनका पीछा किया गया। लगभग 5:30 बजे आर्म्ड पुलिस पुनः अग्रसित हुई । कई तिब्बती नागरिकों को घरों में जाकर जान से मार दिया गया। पुनः 7 से 7:30 बजे के बीच तिब्बतियों के निवास स्थल की गलियों में भंयकर गोलीबारी की गई। कई तिब्बतियों को पुलिस ने पकड़ा और बुरी तरह पिटाई की। इसी दौरान रामोचे मंदिर के पास स्थित तिब्बतन रेस्टोरेन्ट में आर्म्ड पुलिस द्वारा उठा पटक और हिंसा की गई जिसमें 50 लोग घायल हो गए । इस घटना के ठीक बाद प्रदर्शनकारियों ने देकयी शारलम् स्थित चीनी दुकानों व रेस्टोरेन्ट से सामान निकाल–निकाल कर गलियों में जलाना शुरू कर दिया । इस प्रकार पीपुल्स आर्म्ड पुलिस द्वारा की गई हिंसात्मक कार्यवाही के बदले तिब्बतियों ने बदले की कार्यवाही की ।

<u>सोमवार, 6 मार्च 1989 का घटना क्रम–प्रदर्शन का द्वितीय दिवस</u> :– 6 मार्च का घटनाक्रम बेहद हिंसात्मक रहा । यह पहला अवसर था जब ल्हासा में विरोध प्रदर्शन के दौरान तिब्बतियों द्वारा चीनी नागरिकों को निशाना बनाया गया । दकयी शारलम के इलाके में चीनी नागरिकों पर क्रुद्ध भीड़ में हमला कर दिया । यद्यपि तिब्बती नागरिको द्वारा व्यक्तिगत तौर परह चीनी नागरिकों को शरण प्रदान की गई तथापि चीनी दुकानों एवं संपंति को नष्ट कर दिया गया तिब्बती प्रदर्शनकारी उन सामान्य जनों को भी प्रदर्शन मे हिस्सा लेने के लिए बाध्य कर रहे थे जो अब तक भीड़ का हिस्सा नहीं बने थे । इसके अतिरिक्त पीपुल्स आर्म्ड पुलिस द्वारा भी प्रदर्शनकारियों पर हमला किया गया । इस संदर्भ में चीनी पक्ष द्वारा जारी रिपोर्ट के अनुसार 2:00 बजे शाम को लगभग तीन सौ तिब्बती प्रदर्शनकारियों ने बारखोर के दक्षिणी क्षोर से दुकाने व संपत्ति जलाते हुए दंगाफसाद शुरू किया ।

शाम 7:00 बजे के बाद पीपुल्स आर्म्ड पुलिस द्वारा देकयी शरलम् के इलाके में स्वाचालित हथियारों एवं अश्रु गैस के गोलों के साथ मार्च किया । 8:00 बजे के करीब जोखांग मंदिर के सामने स्थित बिल्डिंगों पर पत्थर से हमला करती हुई 50 तिब्बती प्रदर्शनकारियों की भीड़ पर पुलिस ने फायरिंग कर दी जिसमें कुछ प्रदर्शनकारी मार डाले गए । रात 8:30 बजे पुनः पीपुल्स आर्म्ड पुलिस द्वारा फिर से एकत्रित हुए प्रदर्शनकारियों पर हमला कर दिया गया । इसके बाद

रातभर आर्म्ड पुलिस द्वारा तिब्बती नागरिकों के घरों में घुसकर मार–पीट एवं गोली–बारी की गई । रात भर में अनेक गिरफ्तारियां की गई ।

मंगलवार, 7 मार्च 1989–प्रदर्शन का तृतीय दिवस :– तिब्बती पक्ष की तीव्रता और सरगर्मी अपेक्षाकृत सीमित रही । देकयी शारलम में लगभग 400 लोगों की भीड़ जमा हुई । बहुत सारे चीनियों की साईकिलों में आग लगा दी गई परन्तु शीघ्र ही चीनी सुरक्षाबलों के आगमन की अफवाह के साथ ही गोली बारी की आवाज में तिब्बती युवाओं को घरों में शरण लेने के लिए बाध्य कर दिया । प्रदर्शन अधिक उग्र रूप धारण नहीं कर पाया ।

इस प्रकार त्रिदिवसीय प्रदर्शन की श्रंखला हमला और प्रतिरक्षा, हिंसा और बचाव के चक्रों से होती हुई समाप्त हो गई परन्तु इसकी राख में मार्शल लॉ के फीनिक्स दबे हुए थे । 7 मार्च की दोपहर को ही प्रीमियर ली पेंग एवं स्टेट काउंसिल के आदेशानुसार तिब्बत में मार्शल लॉ की घोंषणा कर दी गई । 7 मार्च की शाम को पीपुल्स लिबरेशन आर्मी ल्हासा के महत्त्वपूर्ण हिस्सों में तैनात कर दी गई । रातभर तिब्बतियों के घरों मे तलाशी, गिरफ्तारियां एवं मार–पीट की वारदातें होती रहीं ।

उपरोक्त प्रदर्शनों के विषय में चीनी प्रतिक्रिया बहुत तीक्ष्ण रही । प्रदर्शनकारियों पर अलगाववादी होने का तथा प्रदर्शनों के दौरान उपस्थित पश्चिमी पर्यटकों पर विद्रोह का हिस्सा होने तथा विद्रोह की रूपरेखा तय करने का आरोप लगाया गया ।[1] इसके अतिरिक्त प्रदर्शनों के दौरान उपस्थित विदेशी पर्यटकों के कारण प्रदर्शनकारियों पर नेपाल, रूस, अमेरिका तथा ताईबान से संबंध होने का भी आरोप लगाया गय़ा । ये सारे आरोप स्पष्ट करते है। कि चीनी पक्ष द्वारा 5,6 तथा 7 मार्च 1989 के विरोध प्रदर्शनों को सामान्य रूप से न लेकर आने वाले 10 मार्च के लिए तिब्बतियों की पूर्व तैयारी के रूप में लिया यही कारण था कि 7 मार्च के प्रदर्शन के ठीक बाद ल्हासा में मार्शल लॉ घोंषित कर दिया गया । यांग मिंग फू का यह कथन जनवादी चीनी सरकार के निर्णय को तो स्पष्ट करता ही है साथ ही यह भी स्थापित करने का प्रयास करता है कि तिब्बती प्रदर्शन दलाई लामा व तिब्बत की निर्वासित सरकार के इशारे पर किये गए तथा प्रदर्शनों पर चीन सरकार का कड़ाई का रूख स्वयं तिब्बतियों के जीवन व सम्पत्ति की रक्षा के लिए उठाया गया था –"The Dalai Lama and his government-in-exite made use

---

1. मंडारिन की ल्हासा तिब्बत प्रादेशिक सेवा, 16 मार्च 1989, स्रोत–"सर्किल ऑफ प्रोटेस्ट, पॉलिटिकल रिट्यूअल इन द तिबेतन अपराइजिंग" द्वारा श्वार्ट्ज.रोनाल्ड.पी, 1996

of the opening up of Tibet to send People across the border to plot a large scale riot in Lhasa on 10th March. To prevent violence and save the lines & Property of the Tibetan people the central government decided to impose Martial law in Lhasa, thus disrupting their plan for a large scale riot. We confirmed that they had shipped many weapons into Tibet, and sent in some people who had undergone special training in japan."[1]

इस सम्पूर्ण घटनाक्रम में एक अन्य बात काफी महत्वपूर्ण रही वह था संघर्ष के दौरान प्रतीकों का महत्व । अधिकतर विरोध प्रदर्शनों का केन्द्र बिन्दु जोखांग मंदिर रहा । धर्म एवं राज्य, धर्मनीति एवं राज्य नीति को मिलाकर देखने की तिब्बती परम्परा ने तिब्बती राष्ट्र से उत्पन्न प्रत्येक संघर्ष के केन्द्र में धार्मिक स्थल को केन्द्र बिन्दु बनाया । 1988 के मोनलम उत्सव के दौरान लामाओं ने प्रदर्शन करते हुए लकड़ी के भारी दरवाजे अन्दर से बन्द कर लिये । यह कृत्य इस विचार की गहन अभिव्यक्त था कि तिब्बती जनसमुदाय अपनी धार्मिक आस्थाओं को चीनी नियन्त्रण से स्वतंत्र रखना चाहता था । इसी प्रदर्शन के दौरान 10:30 बजे प्रदर्शनकारियों ने स्थानीय चीनी अधिकारियों को मंदिर के प्रांगण में बने छोटे कमरों में बन्द कर दिया । यह कार्य इस विचार का स्पष्ट करता है कि चीनी साम्राज्यवाद तिब्बत के आध्यात्मिक साम्राज्यवाद के अधीन है । महत्व व गरिमा की दृष्टि से तिब्बत की महिमा व गौरव महत्वपूर्ण है ।

इसी प्रकार मार्च 1990 में चीनी सेना द्वारा जोखांग के निकट सेना व टैंकों के जमावड़े से भी यही बात स्पष्ट होती है कि तिब्बती राजनीति का हृदय धार्मिक स्थल है और सर्वाधिक संवेदनशील धार्मिक स्थल जोखांग है । इससे चीनियों का यह विश्वास भी ध्वनित होता है कि जोखांग या नोरबूलिंका पर उनका अधिकार समूचे तिब्बत पर उनके अधिकार के बराबर है । टेंकों की जोंखांग मंदिर पर तैनाती से यह बात भी प्रतीक रूप में स्पष्ट कर दी गई कि एक दशक पूर्व आरम्भ की गई उदारवादी चीनी विचारधारा का अन्त हो चुका है । यही कारण है कि पीपुल्स आर्म्ड पुलिस तथा पीपुल्स लिब्रेशन आर्मी ने जोखांग पर तैनाती के समय मंदिर की चौकसी परिक्रमा की दिशा में न करके घड़ी की विपरीत दिशा मे की । यदि वे चौकसी घड़ी की दिशा में

---

1. Beizing Zhongguo xinwen she, 21March 1989, in FBIS, 22 March 1989:23

चलकर करते तो यह तिब्बतियों के बारखोर के समकक्ष समझा जाता जो महात्मा बुद्ध के प्रति श्रद्धा का प्रतीक होता । इससे चीनी साम्राज्यवाद की अधिकार भावना स्पष्ट नहीं हो पाती।जनवादी चीन सरकार के सम्मुख मुख्य समस्या दलाई लामा के प्रति तिब्बती जनसमुदाय की अपारनिष्ठा और तिब्बत की स्वतंत्रता के मुद्दे से एक साथ निपटने की हो । दुविधा यह कि यदि तिब्बतियों की सामान्य धार्मिक परम्पराओं पर प्रशासन अंकुश लगाता है तो यह तथा कथित धार्मिक सहिष्णुता की नीति के विरूद्ध ,होगा और यदि मोनलम आदि परम्पराओं को जारी रखा जाता है तो अंततोगत्वा धर्म के ये प्रतीक तिब्बतियों की राष्ट्रवाद की धारणा को और अधिक बलवती बना देंगे ओर निश्चित रूप से जनवादी चीनी सरकार ऐसा नहीं चाहेगी ।

11 अक्टूबर 1989 को “Iha-rgyal” के पारम्परिक आयोजन के अवसर पर हजारों तिब्बतियों ने मिलजुल कर भुने हुए जौ के आटे जिसे जाम्पा भी कहा जाता है, को हवा में भगवान बुद्ध को समर्पित करते हुए पूरा किया । इस अवसर पर उपस्थित आर्म्ड पुलिस के जवान व अधिकारी इसे सामान्य धार्मिक नीति के रूप में देखते रहे जबकि वास्तविकता यह थी कि तिब्बती जन दलाई लामा को शांति के लिए प्रदत्त नौबल पुरस्कार के हर्ष में यह उत्सव मना रहे थे । जब चीनी पक्ष को अपनी गलती का अहसास हुआ तो वर्क यूनिट्स तथा कार्यालयों मे ज़ाम्पा व ज्यूनिपर की शाखांए जलाने वाले तिंब्बतियों के विरूद्ध अभियान छेड़ने के लिए अपातकालीन बैठकें बुलाई गई । अभिभाषणों के दौरान लोगों को अपना अपराध स्वीकारने के लिए बाध्य किया गया ।[1] दिसम्बर में प्रशासन की तरफ से ज्यूनिपर शाखाओं का प्रचलन तथा जाम्पा चढ़ाने की प्रथाओं को गैर कानूनी मानते हुए इन्हे राजनीतिक अपराध घोंषित किया गया । इसके लिए कम से कम तीन साल के कारावास की सजा भी निर्धारित कर दी गई । इस दौरान अनेक गिरफ्तारियां भी की गई । 14 अक्टूबर 1989 को बारखोर ने चीन के विरूद्ध नारे बाजी करने के लिए दो तिब्बतियों को तथा मिंचुगरी ननरी की चार नगों को केन्द्रीय ल्हासा में गैर कानूनी प्रदर्शन करने के आरोप में सजा सुनाई गई ।[2] लोबजांग ड्रोलमा एवं वांग ज्लट्रिम को 15 अक्टूबर 1989 को केन्द्रीय ल्हासा में प्रतिक्रिया वादी नारे लगाने के आरोप में सजा सुनाई गई । सजा के तौर पर इन सभी को दो या तीन सालों के लिए सश्रम पुनर्शिक्षा के लिए भेजा गया ।

---

1. "टिबेट : गवर्नमेन्ट थ्रीटेन्स टू शूट डिमान्ड्सट्रेटर्स", टी.आई.एन., न्यूज अप डेट, लंदन, 6मार्च 1990 ।
2. जियांग रिबाओ (टिबेट डेली), ल्हासा 18 अक्टूबर 1989

चीनी राष्ट्रपति जियांग जेमिन की भारत यात्रा (सन् 1996) के दौरान तिब्बती प्रदर्शनकारियों ने चीन के विरूद्ध प्रदर्शन आयोजित किये । तिब्बती स्वतंत्रता के लिए नारे लगाए तथा गिरफ्तारियां दीं ।

सन् 1991 में चीनी प्रधानमंत्री ली पेंग की भारत यात्रा के समय भारत स्थित तिब्बतियों द्वारा चीन के विरोध में प्रदर्शन आयोजित किए और तिब्बत की आजादी के लिए विश्व का ध्यान आकर्षित किया। इसी प्रकार अन्य प्रमुख चीनी नेताओं की भारत यात्रा के दौरान तिब्बती प्रतिरोध सामने आया। सन् 1992 तथा सन् 1994 में चीनी विदेश मंत्री कियेन किचेन की भारत यात्रा तथा सन् 1995 में चीनी प्रतिरक्षा मंत्री जनरल ची. हाओतियन तथा चीनी पोलिटिकल कन्सलटेटिव कान्फ्रेन्स के चेयनमेन श्री कियाओ शी की भारत यात्रा के दौरान विरोध प्रदर्शन करके तिब्बतियों ने भारत चीन के बीच होने वाले ऐसे सभी समझौतों को नकार दिया जिनमें तिब्बती पक्ष की हिस्सेदारी न हो ।

सन् 1996 में चीनी राष्ट्रपति जियांग जेमिन की भारत यात्रा के दौरान तिब्बती प्रदर्शनकारियों ने चीन के विरूद्ध प्रदर्शन आयोजित किए । तिब्बती स्वतंत्रता के लिए नारे लगाए तथा गिरफ्तारियां दीं । तिब्बती प्रदर्शनकारी इतने अधिक उत्तेजित थे कि कुछ युवक कठोर सुरक्षा व्यवस्था को पार करते हुए जेमिन के होटल के अन्दर तक प्रविष्ट हो गए। इन प्रदर्शनों में तिब्बती महिलाओं ने भी बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया यद्यपि इस दौरान तिब्बत कम्यून पार्टी, तिब्बती यूथ कांग्रेस, चिन्ड्रन ऑफ गॉड हिमालया, वेस्टर्न बुद्धिस्ट सेंटर, फ्रेन्ड्स ऑफ टिबेट सरीखे संगठनों पर प्रतिबंध लगा दिया गया था ।

भारत मे रह रहे तिब्बती शरणार्थियों की दृष्टि में 1996 की चीनी राष्ट्रपति की भारत यात्रा के पीछे तीन कारण निहित थे :-

प्रथम– तिब्बत की आजादी के सवाल पर बढ़े विश्व जनमत के कारण चीन का स्वयं को असुरक्षित महसूस करना ।

द्वितीय–तिब्बत का चीन के साथ होना दर्शाना जिसके लिए वे तिब्बत स्वायत्तशासी क्षेत्र के प्रधान नोरबू तथा चीनी शासन के एक मात्र तिब्बती मंत्री दार ज़ी को साथ लाए थे ।

तृतीय–भारत के साथ–साथ अन्य पड़ोसी देशों की यात्रा करके विश्व को यह दर्शाना कि भारत की उनकी लिए कोई खास अहमियत नहीं है।[1]

इससे स्पष्ट होता है कि तिब्बती जनता चीन के अवसरवादी स्वभाव से भलीभांति वाकिफ है यही कारण है कि मात्र चीनी नेताओं की भारत यात्रा के दौरान ही नहीं अपितु अनेक विश्वमंचों से भी तिब्बती नेता एवं जनता तिब्बती समस्या को उठाते रहते हैं। सन् 2008 में बीजिंग में आयोजित ओलंपिक खेलों के लिए चीन की मेजबानी का अनेक तिब्बती संगठनों द्वारा तिब्बत मे चीन द्वारा जारी मानव अधिकार उल्लंघन एवं पर्यावरण व मानवता के प्रति दुराभाव के कारण तीव्र विरोध किया गया।

जून 2003 की श्री बाजपेयी की चीन यात्रा एवं यात्रा के दौरान तिब्बत स्वायत्त शासी क्षेत्र को चीन का हिस्सा स्वीकार किए जाने का अनेक तिब्बती जन संगठनों द्वारा तीव्र विरोध किया गया। "तिब्बत यूथ कांग्रेस नामक संगठन के 62 वर्षीय सदस्य पासंग जीवांग के विचार में बाजपेयी ने "तिब्बत को प्लेट में रखकर चीन को खिला दिया।" तिब्बेतन यूथ कांग्रेस ज्वाइंट सेक्रेटरी डोल्मा शोएफेल का तर्क था कि बाजपेयी ने "तिब्बत को चीन के हाथों बेच दिया।"

'सेन्ट्रल तिबेतन वूमेन्स एसोशिएशन' की प्रमुख जीरिंग येशी तिब्बतियों को शरण देने के प्रति भारत की आभारी होते हुए भी श्री बाजपेयी के इस कृत्य को अच्छा नहीं मानती ।[2] तिब्बती जन मात्र तिब्बत के प्रति भारतीय दृष्टिकोण को ही उनकी आशाओं के विपरीत नहीं मान रहे हैं अपितु वे चीन से भारत को भी सावधान रहने के लिए चेतावनी देते हैं।

तिब्बतियों के दृष्टिकोण से बिल्कुल अलग राय व्यक्त करते हुए तिब्बती जन प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष सामदांग रिम्पोछे के मत में तिब्बत के विषय मे भारत अब भी अपनी पुरानी नीति पर ही कायम है और जो भी मतभेद सामने आए वे चीनी समाचार एजेंसी शिन्हुआ द्वारा किए गए गलत प्रचार के कारण उत्पन्न हुए हैं तथा दलाई लामा से भारत के सम्बन्ध अब भी अच्छे हैं ।

उपरोक्त परिदृश्य के अन्तर्गत कहा जा सकता है कि तिब्बती मुद्दे हेतु चीन के प्रति तिब्बती जन प्रतिरोध निरन्तर जारी है। तिब्बती राष्ट्रवादी संगठनों तथा तिब्बत की निर्वासित सरकार द्वारा इस मुद्दे पर विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के सरकारी तथा गैर सरकारी संगठनों एवं

---

1 जनसत्ता नई दिल्ली 2 दिसम्बर 1996 'एक चुनौती है तिब्बत' ।

2 आउट लुक, 7 जुलाई 2003 'होल इन द रूफ' द्वारा शीला रेड्डी ।

जनता का ध्यान का आकृष्ट करने के प्रयत्न प्रतिरोध एवं राजनय के दोनों माध्यमों से निरन्तर जारी है ।

तृतीय स्कन्ध

भारत की विदेश नीति व तिब्बत

(सन् 1947 से वर्तमान समय तक)

तृतीय स्कन्ध

भारत की विदेश नीति व तिब्बत

(सन् 1947 से वर्तमान समय तक)

इस अध्याय के अन्तर्गत भारत में विभिन्न राजनैतिक दलों की सरकारों की तिब्बत के प्रतिनीति का विश्लेषण करते हुए चीन के प्रति भारती विदेश नीति के रूख पर ध्यान केन्द्रित किया जायेगा। जैसा कि प्रथम अध्याय के अन्तर्गत स्पष्ट किया जा चुका है कि तिब्बत पर ''चीनी सुजरेण्टी'' के विचार को भारत सरकार ने अपनी पूर्ववर्ती ब्रिटिश सरकार से विरासत में प्राप्त किया जो कि तिब्बत पर रूसी साम्राज्य लिप्सा के प्रभाव को कम करने के लिए उठाया गया कदम था । 15 अगस्त 1947 को भारतीय स्वतंत्रता की प्राप्ति के बाद पं. नेहरू के प्रधान मंत्रित्व में बनी नेहरू सरकार ने चीन के साथ मित्रता की तथा तिब्बत के प्रति पहले से जारी नीति का ही अनुसरण किया । इस सन्दर्भ में इस अध्याय में विषय वस्तु के रूप में सरकारी दस्तावेजों, श्वेत पत्रों तथा संधियों का उपयोग किया जायेगा ।

नेहरू युगीन नीति –

तिब्बत का मुद्दा भारत की नेहरू युगीन विदेश नीति का जटिल मुद्दा है । क्षेत्रीय एवं वैश्विक शांति के पुरोधा, राष्ट्रों के पारस्परिक सम्मान के शिक्षा सूत्र 'पंचशील' के अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में प्रयोग कर्ता, साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद विरोधी पं. नेहरू ने किस प्रकार साम्यवादी चीन द्वारा तिब्बत की स्वतंत्रता का अपहरण स्वीकार कर लिया ? किस प्रकार उन्होंने तिब्बत पर चीनी सुजरेण्टी को मान्यता प्रदान कर दी ? तिब्बत के मुद्दे को यू.एन.ओ. मे उठाए जाने पर भारत ने प्रस्ताव का समर्थन क्यों नही किया ? इत्यादि प्रश्न पं. नेहरू के प्रधान मंत्रित्व काल में तिब्बत के प्रति भारत की नीति को लेकर उठाए जाते रहे हैं । तिब्बत के प्रति भारत की नीति विषय में गहन एवं यथार्थ ज्ञान तत्कालीन भारतीय व जनवादी चीनी गणराज्य की सरकार के मध्य स्थापित पत्र व्यवहार, प्रेस रिलीजों तथा भारत सरकार द्वारा प्रकाशित श्वेत पत्रों के माध्यम से प्राप्त होता है । भारत ने आरम्भ से ही चीन के साथ मित्रता की पैरवी की है । भारतीय विदेश मंत्रालय द्वारा भारत स्थित चीनी दूतावास को 2 अगस्त 1958 को प्रेषित नोट मे यह स्पष्ट किया गया 'भारत सरकार भारत व चीन के मध्य दोस्ताना संबंधों को विशेष महत्व प्रदान करती है ।.......... भारत की सरकार तिब्बती क्षेत्र को जनवादी चीनी गणराज्य के हिस्से के रूप में मान्यता प्रदान करती है । .

........................भारत सरकार अपने क्षेत्र के किसी भी हिस्से को किसी भी विदेशी सरकार के खिलाफ आन्दोलन चलाने की अनुमति कभी नहीं देगी, चीनी जनवादी गणराज्य की मित्रवत् सरकार के विरूद्ध तो बिल्कुल नहीं । भारत सरकार ने सभी तिब्बतियों के सम्मुख यह तथ्य स्पष्ट कर दिया है कि उन्हे उसी स्थिति में भारत में निवास की अनुंमति है जब तक वे शांतिपूर्वक अपना जीवन यापन करते है।' आगे इसी नोट मे यह भी स्पष्ट किया गया कि पूर्व में भेजे गए चीनी नोट में जिन व्यक्तियों तथा संगठनों को चीन के विरूद्ध भड़काऊ कार्यवाहियाँ करने के लिए दोषी ठहराया गया है वे जांच के बाद निर्दोष पाए गए हैं तथा 'तिब्बतन एसोसिएशन' व 'इण्डियन तिब्बतन एसोसिएशन' जैसे संगठन कलिम्पौग में तिब्बतियों की धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक दिनचर्या से जुड़े हुए हैं, व उनका चीन के विरूद्ध राजनीतिक दुष्प्रचार से कोई लेना देना नहीं है। "तिब्बतन मिरर" नामक मासिक पत्र के भविष्य में भारत चीन संबंधों के खिलाफ लिखने पर उपयुक्त कार्यवाही करने का आश्वासन दिया गया । भारत से लगे तिब्बती बार्डर से तिब्बती प्रतिक्रियावादी, अमेरिका तथा कुओमिन्तांग शासन के समर्थकों द्वारा हथियारों व गोली बारूद की तस्करी की आशंका से भारत ने साफ इन्कार करते हुए चीन को विश्वास दिलाया कि भारतीय परिक्षेत्र से उसके खिलाफ कोई कार्यवाही नहीं करने दी जायेगी ।[1]

भारत के मित्रतापूर्ण व्यवहार का चीन ने गलत अर्थ लगाते हुए उसे भारत का दब्बूपन समझा । दलाई लामा के पलायन को सम्राज्यवादियों तथा विदेशी प्रतिक्रियावादियों के षडयंत्र का हिस्सा मानते हुए तिब्बती विद्रोह को दबाने के लिए पीपुल्स लिब्रेशन आर्मी के दमनात्मक उपायों का सहारा लिया गया । इस प्रकार भारतीय नेतृत्व द्वारा पूर्ण रूपेण समर्पित होते हुए तिब्बत पर चीन के कब्जे को मान्यता प्रदान कर दी। दूसरी तरफ चीनी पक्ष द्वारा तिब्बत को चीन की सम्प्रभुता के अंतर्गत मानते हुए "तिब्बत लोकल अथोरिटी" के विदेशी राज्यों से संधियां व वार्ता करने के अधिकार को अमान्य घोंषित कर दिया ।[2]

ल्हासा स्थित भारतीय काउंसलेट जनरल की सुरक्षा तथा चीनी पक्ष की तरफ से तिब्बत स्थित भारतीय नागरिकों को कोई नुकसान न पहुंचाने के आश्वासन के पश्चात् एक बार पुनः

---

1. श्वेत पत्र नं.1– भारत सरकार के विदेश मंत्रालय द्वारा भारत स्थित चीनी दूतावास को प्रेषित नोट, 2 अगस्त 1958

2. श्वेत पत्र नं.4, पृष्ठ 14– पीकिंग के विदेश मंत्रालय द्वारा चीन स्थित भारतीय दूतावास को प्रेषित नोट 3 अप्रैल 1960

तिब्बत के मुद्दे को चीन का आंतरिक मामला बताते हुए किसी भी प्रकार के बाह्य हस्तक्षेप का विरोध कया ।[1]

अंतर्राष्ट्रीय विधि का पालन करते हुए भारत द्वारा दलाई लामा को दी गई शरण को किसी भी प्रकार से चीन के विरूद्ध कार्यवाही करार नहीं दिया जा सकता था । इसी आशय का पत्र भारतीय विदेश सचिव द्वारा 26 अप्रैल 1959 को चीनी राजदूत को जारी किया गया । इसमें तत्कालीन परिस्थितियों का उल्लेख करते हुए बीजिंग स्थित नेशनल पीपुल्स कांग्रेस द्वारा भारत सरकार के खिलाफ साम्राज्यवादी एवं विस्तारवादी होने के आरोपों का उत्तर देते हुए यह स्पष्ट किया गया कि भारत का तिब्बत की आंतरिक घटनाओं में हस्तक्षेप करने का कोई इरादा नहीं है। इसके साथ ही यह भी स्पष्ट किया गया कि दलाई लामा को भारत से चीन के विरूद्ध कोई राजनीतिक गतिविधि संचालित करने की अनुमति नहीं दी जायेगी ।[2]

भारत की उपरोक्त नीतिगत स्पष्टता के बावजूद चीन ने भारत को निरन्तर अपने आंतरिक मामलो में हस्तक्षेप करने का दोषी ठहराया । ''सीटों के सदस्य देशों फिलीपीन्स, थाइलेण्ड, पाकिस्तान को चीन का प्रमुख शत्रु न मानते हुए अमेरिकी साम्राज्यवाद से शत्रुता जाहिर करते हुए भारत को चेतावनी देते हुए स्पष्ट किया गया,'' "Friends! It seems to us that you too can not have two fronts. Is it not so? It it is here then lies the meeting point of our to sides. Will you please think it over? Allow me to take this opportunity to extend my best regards to Mr. Jawahar lal Nehru, The leader of India".[3]

इस मुद्दे पर अपनी नीति स्पष्ट करते हुए 23 मई 1959 के अपने पत्र में भारतीय विदेश सचिव ने चीनी आरोपों का कड़े शब्दों में स्पष्टीकरण दिया, "They have avoided interference with Chinese inernal affairs. They will continue this policy but this must not be understood to mean that the government of India will disregard or vary any of their policies under the pressure of outside.

1.श्वेत पत्र नं. 1 चीन के उपविदेश मंत्री द्वारा भारतीय राजदूत को प्रदत्त वक्तव्य, 22 मार्च 1959

2.श्वेत पत्र नं. 1 भारतीय विदेश सचिव द्वारा चीनी राजदूत को प्रदत्त वक्तव्य 26 अप्रैल 1959

3.श्वेत पत्र नं. 1 चीनी राजदूत द्वारा भारतीय विदेश सचिव को प्रदत्त वक्तव्य 16 मई 1959

पंडित नेहरू यद्यपि एशियाई मित्रता के भाव से प्रेरित थे तथापि भारत के चीन के साथ सीमा विवाद के प्रति वे उदासीन रहे हों ऐसा नहीं था । ''चाईना पिक्टोरियल'' में छापे गए गलत नक्शों का मामला उठाते हुए सरकार ने अपने श्वेत पत्र में स्पष्ट किया कि इसके पूर्व उसे चीन के साथ इस तरह के सीमा विवाद का आभास नहीं था । "No border questions were raised at that time and we were under the impression that there were no border disputes between our two respective countries. In fact we thought that sino Indian agreement which was happily concluded in 1954 had settled all outstanding problems between our two countries."[1]

दूसरी तरफ चीन सीमा विवाद कै प्रति अत्यधिक रूढ़ होता जा रहा था । चीनी पक्ष की तरफ से ऐतिहासिक ''मेकमोहन लाइन' को तिब्बती हिस्से के प्रति आक्रमण की नीति से प्रेरित मानते हुए इसे गैर कानूनी करार कर दिया गया ।[2]

भारत चीन के इस झूठे बर्ताव से कतई प्रसन्न नहीं था । चीनी प्रधानमंत्री को लिखे गए पत्र में पं. नेहरू ने स्पष्ट किया कि यद्यपि 1913–14 के शिमला समझौते के दौरान चीनी प्रतिनिधि सीमाओं के सन्दर्भ में असन्तुष्ट थे तथापि ऐसा आन्तरिक व बाह्य तिब्बत तथा चीन की सीमाओं के सन्दर्भ में था न कि भारत और तिब्बत की सीमाओं या मैकमोहन लाइन के सन्दर्भ में । पं. नेहरू का स्पष्ट मत था कि सीमा के सन्दर्भ में चीनी हठधर्मिता दोनों देशों के मैत्री संबंधों को खत्म कर सकती है ।[3]

एक ओर चीन की साम्राज्यवादी प्रवृत्ति शनैः–शनैः भारतीय सीमाओं के अतिक्रमण को व्यग्र हो रही थी तो दूसरी तरफ चीनी नेतृत्व अपनी करतूतों पर पर्दा डालने के लिए भारतीय सेनाओं को तिब्बत को कमजोर समझकर उसकी सीमाओं के अतिक्रमण का दोषी करार दे रहा था । तिब्बत स्थित चीनी सैन्य अधिकारियों के लद्दाख, सिक्किम, भूटान तथा भारत के उत्तरपूर्वी क्षेत्र

---

1. श्वेत पत्र नं. 1, पृष्ठ 48 ''भारतीय प्रधानमंत्री द्वारा चीन के प्रधानमंत्री को लिखे गए पत्र का अंश, 14 दिसम्बर 1958'', नई दिल्ली ।
2. श्वेत पत्र नं. 1 पृष्ठ 53 ''चीन के प्रधानमंत्री द्वारा भारतीय प्रधानमंत्री को लिखे गए पत्र का अंश, 23 जनवरी 1959, बीजिंग ।
3. श्वेत पत्र नं. 1, 56–57 भारतीय प्रधान मंत्री द्वारा चीनी प्रधानमंत्री को लिखे गए पत्र का अंश, 22 मार्च 1959, नई दिल्ली ।

की ओर अग्रसर होने के दावों और इन क्षेत्रों के कई प्रदेशों को अपने नक्शों में दर्शाने से असंतुष्ट भारतीय नेतृत्व द्वारा स्पष्ट किया गया कि यह चीन द्वारा पूर्व में किए गए सीमा समझौतों का खुला उल्लंघन है और यह भी कि मैकमोहन रेखा के दक्षिण रहने वाली जनजातियाँ मोंबास, डफ़लस, मिरिस, एबोर्स, मिशमिश आदि असम की जनजातियों से साम्यता रखती हैं तथा अतीत के विभिन्न समझौतों के अनुसार उनके प्रशासन का दायित्व भारत स्थित ब्रिटिश सरकार का था जो जन जातियों को अधिकाधिक स्वायत्ता देकर मात्र उनके गंभीर झगड़ों का निपटारा किया करती थी । इस प्रकार इन क्षेत्रों मे भारत की सैन्य बढ़त का कोई प्रश्न ही नहीं उठता । यह भी स्पष्ट किया गया कि सन् 1911, 1912, 1913 में इन क्षेत्रों के व्यापक सर्वेक्षण के बाद 1914 का शिमला समझौता किया गया अतः मैकमोहन लाइन तिब्बेत पर जबरदस्ती थोपी नहीं गई थी बल्कि समुचित स्वीकृति का परिणाम थी । इस प्रकार तिब्बत के दक्षिणी सीमा क्षेत्र पर भारतीय प्रशासन पर कोई नई चीज नहीं न ही यह भारत की तिब्बत के प्रति साम्राज्यवादी नीति को स्पष्ट करता है । चीन की नीति सदैव तिब्बत को वृह्‌द मातृभूमि की एक इकाई घोंषित करने की रही है । उसने तिब्बत पर अपने अतिक्रमण को ''तिब्बत की मुक्ति प्रक्रिया'' का नाम दिया । तिब्बत में मानवाधिकार उल्लंघन को लोकतांत्रिक सुधारों की संज्ञा दी गई । भारत पर तिब्बती विद्रोहियों को अस्त्र–शस्त्र उपलब्ध करवाने का आरोप लगाया गया जबकि दलाई लामा के पलायन के बाद भारत में शरण लेने वाले तिब्बतियों के लिए सर्वप्रमुख शर्त यह रखी गई थी कि वे बिना अस्त्र–शस्त्रों के रहेगे तथा भारत भूमि से चीन के विरूद्ध किसी प्रकार की गतिविधि में संलग्न नही होगें ।[1]

यह भी स्पष्ट किया गया कि तिब्बतियों को निर्वासित सरकार चलाने की अनुमति भी नहीं दी गई है।[2]

परन्तु राजनीतिक गतिविधियों पर प्रतिबंध के बावजूद तिब्बती शरणार्थियों को नागरिक स्वतंत्रता के अधिकार से वंचित नहीं किया गया । इसका गलत अर्थ लगाते हुए चीन ने भारत पर तिब्बतियों द्वारा चीन के विरूद्ध आयोजित मीटिंगों व प्रदर्शनों के मद्‌देनजर उसके आंतरिक

---

1. श्वेत पत्र नं.2 पृष्ठ 43 ''भारतीय प्रधानमंत्री द्वारा चीनी प्रधानमंत्री को लिखे गए पत्र का अंश'' 26 सितम्बर 1959, नई दिल्ली ।

2. श्वेत पत्र नं. 6, पृष्ठ 195 ''भारत के विदेश मंत्रालय द्वारा भारत स्थित चीनी दूतावास को प्रदत्त नोट, 11अप्रैल 1962, नई दिल्ली ।

मामलों में हस्तक्षेप का आरोप लगाया । यद्यपि भारत की नेहरू सरकार ने सदैव यह स्पष्ट कियाकि भारत सरकार तिब्बत पर चीन की सम्प्रभुता स्वीकार करती है और इसलिए चीन को अंतर्राष्ट्रीय कानून का पालन करना चाहिए ।[1]

तिब्बत पर चीनी कब्जे के बाद यद्यपि चीन द्वारा भारत के पक्ष में अनेक आश्वासन दिये गए परन्तु उसकी कथनी व करनी में बहुत अन्तर रहा । सन् 1954 में भारत चीन के मध्य सम्पन्न व्यापारिक समझौते के बावजूद तिब्बत मे भारतीय व्यापारियों की भ्रमण की स्वतंत्रता का अतिक्रमण करते हुए उन पर प्रतिबन्ध लगाए गए ।[2] चीन द्वारा तिब्बती मुद्रा के अवमूल्यन के कारण तिब्बत स्थित भारतीय व्यापारी आर्थिक रूप से संकटग्रस्त हो गए । इस संदर्भ भारत ने एक बार पुनः चीन के सम्प्रभु अधिकार को मान्यता देते हुए चीन से भारतीय व्यापारियों के साथ पुरानी कीमतों पर व्यापार करने की अनुनय की ।

भारतीय श्वेत पत्रों में तिब्बत को "Tibet region of China" के द्वारा व्यक्त किया गया है । तिब्बत पर चीनी कब्जे के बाद वहां बसे लद्दाखी लामाओं तथा कश्मीरी मुस्लिमों की नागरिकता के विषय में भारत द्वारा चीन को अपने नागरिकता नियमों से अवगत कराते हुए स्पष्ट किया गया कि ऐसे सभी व्यक्ति भारतीय नागरिक हैं जिनका स्वयं या उनके माता–पिता का जन्म भारत में हुआ हो, विदेशों मे रहने वाले ऐसे व्यक्ति जिनका स्वयं या माता–पिता का या दादा–दादी में से किसी एक का जन्म अविभाजित भारत में हुआ हो वे सब उस देश के भारतीय दूतावास या काउंसलर प्रतिनिधि के माध्यम से नागरिकता हेतु पंजीकरण करा सकते हैं परन्तु उपरोक्त मे से कोई भी व्यक्ति यदि स्वेच्छापूर्वक भारतीय नागरिकता प्राप्त करना चाहता है तो उसका स्वागत है अन्यथा प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छानुसार कोई भी नागरिकता प्राप्त कर सकता है ।[3]

तिब्बत मे बसे भारतीय मूल के लोंगों को चीनी नागरिकता लेने के लिए बाध्य किए जाने

---

1. श्वेत पत्र नं. 6, पृष्ठ 217 "भारतीय विदेश मंत्रालय द्वारा भारत स्थित चीनी दूतावास को प्रदत्त नोट" 17 जुलाई 1962, नई दिल्ली ।
2. श्वेत पत्र नं. 2, पृष्ठ 87 "भारतीय दूतावास के काउंसलर द्वारा चीन के विदेश मंत्रालय को प्रदत्त नोट," 17 सितम्बर 1959 ।
3. श्वेत पत्र नं. 2, पृष्ठ 88, 91 "भारतीय विदेश मंत्रालय द्वारा भारत स्थित चीनी दूतावास को प्रदत्त नोट," 24 सितम्बर 1959, नई दिल्ली ।

के प्रयास का भारत द्वारा तीव्र विरोध किया गया । भारत ने लद्दाखी लामाओं तथा कश्मीरी मुस्लिमों की भारतीय नागरिकता का हवाला देते हुए ऐसे व्यक्तियों को चीनी नागरिक मानने के चीन के प्रयास को अंतर्राष्ट्रीय कानून व परम्पराओं के विरूद्ध घोंषित किया ।[1]

तिब्बत में रहने वाले भारतीय मूल के लोगों के विरूद्ध चीन द्वारा प्रताड़ना के मामलों पर भी भारत द्वारा रोष व्यक्त किया गया ।[2]

इस प्रकार नेहरू युगीन तिब्बती नीति में एक तथ्य स्पष्ट होता है कि यद्यपि भारतीय नेतृत्व ने तिब्बत पर चीनी अधिपत्य को सहजता एवं गैर कूटनीतिक रूख अपनाते हुए मान्यता प्रदान कर दी तथापि तिब्बत मे रह रहे भारतीय मूल के लोगों की सुरक्षा के लिए भारत की तत्कालीन सरकार ने रक्षात्मक रूख अपनाया । मामला चाहे तिब्बत स्थित व्यापारिक प्रतिनिधियों का हो या भारतीय सैनिको का, लद्दाखी लामाओं, कश्मीरी मुस्लिमों या अन्य भारतीय लोगों का तत्कालीन नेहरू सरकार तिब्बत स्थित भारतीयों के प्रति संवेदनशील रही । भारतीय विदेश मंत्रालय द्वारा चीनी दूतावास को 12 सितम्बर 1962 को सौपे गए नोट में भारत सरकार ने चीन सरकार से तिब्बत स्थित भारतीयों की चल अचल संपत्ति के समतुल्य मुआवजा देने की भी अपील की । 31 अक्टूबर 1962 को चीनी दूतावास को भारत सरकार ने याटुंग स्थित इण्डियन ट्रेड एजेन्सी की इमारत एवं अन्य संबंधित संपत्ति पर भारत सरकार के स्वामित्व से अवगत कराया ।

11 जुलाई 1962 को भारतीय विदेश मंत्रालय द्वारा चीनी दूतावास को प्रेषित पत्र में एक बार पुनः दलाई लामा को भारत से चीन के विरूद्ध राजनीतिक गतिविधि सम्पन्न न करने की शर्त पर शरण देने की भारतीय नीति को दोहराया गया । साथ ही तिब्बत को स्वायत्त दर्जा देने के लिए भी चीन से गुजारिश की गई ।

28 सितम्बर 1962 को चीनी सैनिक भारतीय परिक्षेत्र में स्थित ढ़ोला चैक पोस्ट तक पहुंच गए । 29 सितम्बर 1962 को भारतीय विदेश मंत्रालय द्वारा भारतीय क्षेत्र लौंग्जू में 11 सशस्त्र एवं 6 सामान्य चीनियों के घुस आने पर भारत ने इसे चीन द्वारा सीमा की शांत स्थिति भड़काने का प्रयत्न बताया । इस संदर्भ में महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि सीमा विवाद संबंधी अधिकांश अतिक्रमण

1. श्वेत पत्र नं. 4, पृष्ठ 57, 58 ''भारत के विदेश मंत्रालय द्वारा भारत स्थित चीनी दूतावास को प्रदत्त नोट,'' 13 अप्रैल 1960, नई दिल्ली ।

2. श्वेत पत्र नं. 4, पृष्ठ 67 ''भारत के चीन स्थित राजदूत द्वारा चीन के उपमंत्री को प्रदत्त नोट,'' 14 जुलाई 1960, बीजिंग ।

चीन द्वारा किए गए परन्तु भारत को उनका दोषी ठहराया गया ।

नेहरू युगीन तिब्बती नीति दलाई लामा को शरण देने, उनकी राजनीतिक गतिविधियां सीमित रखने, चीन के विरूद्ध दुष्प्रचार मे हिस्सा न लेने देने, भारतीय नागरिकों की तिब्बत स्थित चल अचल संपत्ति की रक्षा करने, नागरिकता संबंधी दावों पर अपने दृष्टिकोण से विचार करने से संबंधित रही । परन्तु आलोचक नेहरू युग की तिब्बती नीति को नेहरू जी की असफलता मानते हैं । उनके अनुसार साम्यवादी चीन की गलत क्षमताओं के आकलन पर आधारित नेहरू युगीन तिब्बती नीति असफल सिद्ध हुई । एक ओर तिब्बत पर चीनी सुजरेन्टी स्वीकार कर भारत ने अपनी उत्तर पूर्वी सीमाएं सदैव के लिए असुरक्षित कर दी दूसरी ओर स्टालिंन ने रूजवेल्ट तथा चर्चिल से वार्ता करके न सिर्फ मंगोलिया को चीन के हाथ जाने से बचाया बल्कि उसके उत्तराधिकारियो ने पीकिंग के सहयोग से उसे संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता भी दिलवाई और इस प्रकार अपनी दक्षिणी सीमा तथा ट्रांस साइबेरियन रेल मार्ग को सुरक्षित रखा । तिब्बत के संदर्भ में भी नेहरू युगीन नीति ऐसी ही होनी चाहिए थी । सर्वप्रथम भारतीय स्वतंत्रता के ठीक बाद उन्हे तिब्बत की स्वतंत्रता को मान्यता देनी थी तथा संयुक्त राष्ट्र संघ में चीन की सदस्यता के स्थान पर तिब्बत की सदस्यता का मुद्दा उठाना था । ऐसा करना हमारे यथार्थ राष्ट्रीय हित में होता क्योंकि इससे भारत एवं चीन के मध्य विस्तृत तिब्बत बफर राज्य के रूप में स्थापित होता जिससे न तो भारत चीन के मध्य सीमा विवाद जैसी कोई बात होती न ही सम्भवतः भारत को उत्तरपूर्वी सीमा पर फौज तैनात करने में प्रतिवर्ष करोड़ो रूपये खर्च करने पड़ते । इसके अतिरिक्त भारत को क्षेत्र में एक समान सांस्कृतिक परम्परा वाले देश के रूप में तिब्बत का समर्थन भी प्राप्त होता रहता है ।

3. लाल बहादुर शास्त्री युगीन नीति :

पंडित नेहरू की मृत्यु के उपरांत श्री लालबहादुर शास्त्री को उनके उत्तराधिकारी के रूप में चुना गया । यद्यपि अवधि की दृष्टि से श्री शास्त्री का कार्यकाल सीमित रहा तथापि इस कार्यकाल के दौरान चीन को उसी की भाषा में समझाने का प्रयत्न किया गया । भारत सरकार द्वारा सिक्किम प्रदेश का उपयोग चीन पर आक्रमण करने के लिए करने के चीनी पक्ष के आरोप का प्रत्युत्तर संसद में देते हुए श्री शास्त्री ने स्पष्ट किया कि "जब से चीनी सरकार ने चीन भारत सीमा संबंधी समस्या खड़ी की है तब से भारत सरकार ने इस बात का पूरा प्रयत्न किया है कि यह प्रश्न शांतिपूर्ण ढ़ग से और सम्मानपूर्वक हल हो जाए ।" अक्टूबर नवम्बर 1962 में सीमा पार के चीन

के अकारण आक्रमणों के बाद भी भारत सरकार ने बराबर इस नीति का अनुसरण किया कि यह प्रश्न ऐसे शांतिपूर्ण तरीके से हल किया जाए कि दोनो सम्बद्ध पक्षों के सम्मान की रक्षा हो । साथ ही यह भी स्पष्ट किया गया कि सीमावर्ती फौजे पूर्व व मध्य मे अंतर्राष्ट्रीय सीमा को तथा पश्चिमी सेक्टर में वास्तविक नियंत्रण रेखा को सीमा मानती है और इस संदर्भ में उनके द्वारा सीमा उल्लंघन का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता फिर भी यदि चीन को ऐसा लगता है तो भारत इस संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय प्रेक्षक की व्यवस्था करने को तैयार है । 20 सितम्बर 1965 को संसद के समक्ष दिए गए वक्तव्य में स्पष्ट किया गया कि, "चीन एशियाई देशो का संरक्षक होने का बहाना कर रहा है जो कि चीन के अनुसार भारत द्वारा धमकाए जा रहे हैं । इसलिए चीन का वास्तविक उद्देश्य एशिया में अपने लिए प्रभुत्व का स्थान बनाना है जिसे एशिया का कोई भी आत्म सम्मान वाला राष्ट्र स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है । ....हम चीन के इस दावे को अस्वीकार करते हैं कि वह हमें इस बारे मे कुछ बताए कि हमं कश्मीर के बारे मे जो कि भारत का अभिन्न अंग है, क्या करना चाहिए व क्या नहीं । इन छोटे–छोटे मामलों पर जो हमारे मतभेद हैं उन्हे शांतिपूर्ण तरीके से सुलझाने के लिए हम अब भी तैयार हैं ।"

यह वक्तव्य चीन की एशियाई महत्वाकांक्षा पर प्रकाश डालता है जिसके तहत साम्राज्यवादी प्रसार की प्रवृत्ति के अनुरूप उसने तिब्बत पर जबरदस्ती कब्जा कर लिया था और अब निरन्तर सिक्किम, अरूणांचल समेत अन्य भारतीय इलाकों में घुसने का प्रयत्न कर रहा था । इसी वक्तव्य में यह भी स्पष्ट किया गया "कोई इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकता कि कोई सरकार किसी दूसरी सरकार को इस आधार पर धमकी दे कि उसके ढ़ोर उठा लिये गए हैं अथवा इस आधार पर ही इस देश में जिन हजारों तिब्बतियों ने शरण ली है उनमें से दो या चार को उनकी इच्छा के विरूद्ध यहां रोका जा रहा है ।"

भारत ने इस संदर्भ में तिब्बती शरणार्थियों के प्रति पूर्व की सहानुभूतिपूर्ण नीति का पालन करते हुए उनके निवास तथा कारोबार की व्यवस्था जारी रखी ।

24 सितम्बर 1965 को पीकिंग के विदेश मंत्रालय द्वारा चीन स्थित भारतीय दूतावास को सौपे गए पत्र में तिब्बती संकट पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए चीन ने स्पष्ट किया "केवल चार नहीं कई हजार तिब्बती हैं जिन्होंने अपनी मातृभूमि छोड़कर तिब्बत में शरण ली है । शायद उनके कहने का मतलब ये है कि जब हजारों नहीं लौटाये जा रहे हैं तो चार आदमियों की क्या बिसात है ।............भारतीय पक्ष के ऊपर ये आरोप है कि वह उन चार लोगों और मवेशियों को लौटा

दे।" जहां तक उन हजारों लोगों का सवाल है जिन में दलाई लामा भी शामिल हैं वे भी शरणार्थी नहीं हैं । चीन के तिब्बत प्रदेश में भारत ने दास–मालिकों का जो विद्रोह उकसाया था अब वह असफल हो गया तो उन्हे बलात या प्रलोभन देकर भारत लाया गया । नाम को तो उन्हे भारत सरकार राजनीतिक शरण दे रही है लेकिन वास्तव में वह उनका प्रयोग निरन्तर चीन के विरूद्ध उखाड़ पछाड़ व तोड़ की कार्यवाही करने के लिए कर रही है । चूंकि आपने उन कई हजारों का उल्लेख किया है इसलिए हम यह आवश्यक समझतें हैं कि आप को यह बात याद दिला दी जाए कि आपके ऊपर यह हमारा ऋण है जिसे आपको उतारना होगा । ....जब तक भारत पाकिस्तान पर हमलावर है, जब तक वह काश्मीर की जनता को उसके आत्मनिर्णय के अधिकार से वंचित रखता है, चीन भारतीय आक्रमण के विरूद्ध पाकिस्तान का और आत्मनिर्णय के अधिकार के लिए न्यायसंगत संघर्ष करने वाली काश्मीर की जनता का समर्थन करेगा ।"

उपरोक्त नोट के प्रत्युत्तर में भारत ने जो वक्तव्य जारी किया उससे शास्त्री युगीन तिब्बती नीति के दर्शन होते हैं । 1अक्टूबर 1965 को विदेश मंत्रालय ने भारत स्थित चीनी दूतावास को प्रेषित नोट में स्पष्ट किया कि तिब्बती शरणार्थी भारत पर ऋण या भार स्वरूप नहीं है "बल्कि यह एक ऋण है जो चीन को तिब्बत के लोगों को अदा करना है क्योंकि उसने उनके लिए यह असम्भव कर दिया है कि वे स्वाधीनता व सम्मान के साथ स्वयं अपनी मातृभूमि में रह सकें ।........ .....चीनी सरकार को यह जानना चाहिए कि विद्रोह प्रलोभन देकर अथवा जबरन नहीं कराए जाते। विद्रोह वहीं होता है जहां अत्याचार होता है । तिब्बत के लोग बहुत बड़ी संख्या में इस बात के लिए विवश किए गए हैं कि वे अपना घर बार छोड़कर दूसरे देशों में शरण लें, उसके लिए और तिब्बत के उपद्रव के लिए भारत को दोषी ठहराना व्यर्थ है ।"

भारत ने स्पष्ट किया कि "तिब्बती समस्या चीन द्वारा उत्पन्न की गई है और वह चीन ही है जो इस समस्या के संदर्भ मे नित नये बयान जारी करता रहता है । कभी दलाई लामा को विद्रोहियों द्वारा साम्राज्यवादियों की सहायता से भागा हुआ बताता है तो कभी क्रांति के विरूद्ध गद्दाराना सशस्त्र विद्रोह की आग भड़काकर स्वयं विदेश भाग जाने वाला घोंषित करता है । भारत ने यह भी तिब्बतियों को अपने देश से बाहर जाकर भारत में चीन के कारण शरण लेनी पड़ी तो यह चीन के लिए कोई नामवरी की बात नहीं है ।"[1]

वस्तुतः विभिन्न प्रधानमंत्रियों के शासनकाल में भारत की तिब्बत विषयक नीति भारत

1. श्वेत पत्र नं. 12, पृष्ठ 60, 10 अक्टूबर 1965, नई दिल्ली ।

चीन सीमा विवाद के मुद्दों से अप्रभावित रही है । भारत द्वारा यदि तिब्बत पर चीनी सुजरेण्टी को स्वीकार करना उसकी विदेश नीतिगत असफलता रही थी तो बाद के वर्षों में तो भारत द्वारा तिब्बती मुद्दे का समर्थन उसकी विदेश नीति की विशेषता बनकर सामने आया ।

इंदिरा युगीन नीति– सन् 1967 से 1977 तक एवं सन् 1980 से 1984 तक :

भारत की तिब्बत विषयक नीति का मूल कलेवर सत्ता परिवर्तन से लगभग अप्रभावित रहता हुआ एक सामान्य मार्ग पर आगे बढ़ा है । 2 फरवरी 1967 को चीनी एम्बेसी को सौपे अपने ज्ञापन मे भारत ने चीन को मंचूरियाई साम्राज्यवादियों के उत्तराधिकारी के रूप में इंगित करते हुए तिब्बत की स्वायत्ता के पाशविक दमन तथा तिब्बत के नेताओं के साथ धोखे बाजी के लिए चीन की आलोचना की गई ।

2 जनवरी 1966 को पीकिंग विदेश मंत्रालय द्वारा विशेष रूप से तिब्बत के प्रश्न पर प्रस्तुत नोट में भारत पर तिब्बत को चीन का अंग न मानने, दलाई लामा को चीन के विरूद्ध राजनीतिक कार्यवाही करने की स्वतंत्रता देने, तिब्बती निर्वासित सरकार की स्थापना एवं तिब्बती संविधान की घोंषणा हेतु ''देशद्रोही दलाई के दल'' को सहायता एवं समर्थन देने का आरोप लगाया गया । जिसके प्रत्युत्तर में भारत सरकार ने 30 मई 1966 को प्रेषित नोट में अपनी तिब्बत विषयक नीति स्पष्ट करते हुए अनेक विचार व्यक्त किए जिन्हे क्रम वार इस प्रकार रखा जा सकता है :–

1. भारत पर तिब्बत समस्या के संदर्भ में जो आरोप लगाए गए है। वे निराधार हैं और इसलिए अस्वीकार्य हैं ।
2. भारत द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ में तिब्बती मुद्दे का समर्थन वहां निरन्तर जारी मानवाधिकारों के हनन को रोकने और इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र संघ चार्टर के घोंषित उद्देश्य शांतिपूर्ण विश्व व्यवस्था की स्थापना के लक्ष्य की दिशा में आगे बढ़ने के लिये किया गया था ।
3. तिब्बत की स्वायत्ता नष्ट करने के चीनी प्रयास का भारत द्वारा तीव्र विरोध किया गया । तिब्बत के सार्वजनिक जीवन के केन्द्र दलाई लामा व पंचेन लामा को अपमानित करने का भी भारत सरकार द्वारा विरोध किया गया।
4. भारत सरकार ने कश्मीर में आत्मनिर्णय के अधिकार को दिये जा रहे चीन के समर्थन को भारत के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप बताया और यह भी स्पष्ट किया कि तिब्बत के मुद्दे पर संयुक्त राष्ट्र प्रस्ताव का समर्थन करना किसी भी प्रकार चीन के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप को जन्म नहीं देता ।

5. 1 अक्टूबर 1965 के नोट का स्मरण कराते हुए भारत ने स्पष्ट किया कि तिब्बत में जो हो रहा है उसके लिए दलाई लामा या अन्य राष्ट्र उत्तरदायी नहीं हैं बल्कि चीन इसके लिये उत्तरदायी है । तिब्बत के लोग बहुत बड़ी संख्या में इस बात के लिए विवश किए गए है कि वे अपना देश छोड़कर दूसरे देशों में शरण लें ।

6. इसी नोट में तिब्बत व तिब्बतियों को अपना समर्थन जारी रखने के मुद्दे पर विचार व्यक्त करते हुए भारत सरकार ने स्पष्ट किया, "हम चीन सरकार को याद दिला देना चाहते हैं कि हम उन तिब्बती शरणार्थियों को सभी सुविधाएं देते रहेगे जिन्हे अपनी मातृभूमि छोड़ने के लिए मजबूर किया गया है तथा उनके दुःख दर्द व मुसीबतों को दूर करने की कोशिश करेंगें । दलाई लामा को भारत में रहते–रहते अब कई साल हो गए हैं । और वे अपना धार्मिक काम काज कर रहें हैं। हम उन्हे तथा उनके अनुयायियों को ये सुविधाएं बराबर देते रहेंगे ।[1]

इसी दौरान भारत एवं चीन के मध्य तिब्बत के नाथूला क्षेत्र से भारत के विरूद्ध द्वेष पूर्ण प्रचार करने एवं चीन के भारत पर ताईवान को चीन से पृथक करने व वहां फिर से संयुक्त राज्य अमेरिका का अधिकार स्थापित करने के आरोप लगाने के कारण सम्बन्ध खराब हुए । श्रीमती गांधी ने अपने प्रधानमंत्रित्व काल में चीन के साथ संबंध निर्धारण में यथार्थ पक्ष पर अधिक बल दिया । इंदिरा युग में एक लम्बे अंतराल के बाद संवाद की खिड़की खोली गई ।

सन् 1980 से 1984 के दौरान भारत द्वारा चीन में कुछ कूट नीतिक फेर बदल किए गए । श्रीमती गांधी के दूसरे कार्यकाल के दौरान चीन द्वारा तिब्बतियों के मानवाधिकारों के उल्लंघन पर भारत द्वारा विरोध दर्ज कराया गया । तिब्बती शरणार्थियों के विषय में भारत सरकार का रवैया सहानुभूतिपूर्ण एवं सहायतावादी रहा । भारत अपने इस विचार पर भी कायम रहा कि तिब्बत की समस्या अब चीन का आंतरिक मामला नहीं है बल्कि चीन द्वारा तिब्बत की स्वतंत्रता का अपहरण कर लिये जाने के बाद यह एक अंतर्राष्ट्रीय मुद्दा बन गया है जिस पर ध्यान दिये जाने की जरूरत है । तिब्बती धर्म गुरू दलाई लामा को तिब्बतियों के निर्विवाद नेता के रूप में मान्यता प्रदान की । इस समय तिब्बती शरणार्थियों को दी जाने वाली सभी सुविधाएं जारी रखी गयीं ।

जनता युगीन नीति :

सन् 1975 में आपातकाल लागू किए जाने तथा एक तरह से तानाशाही रवैया अपनाये जाने

1. श्वेत पत्र नं. 13, पृष्ठ 46, 47 "भारतीय विदेश मंत्रालय द्वारा भारत स्थित चीनी राजदूत को प्रदत्त नोट" 30 मई 1966, नई दिल्ली ।

के कारण भारतीय जनमत कांग्रेस के विरूद्ध हो गया । लम्बे आपातकाल के बाद हुए चुनाव में जनता पार्टी सत्ता मे आई । प्रताड़ना के आपातकाल से ऊबी भारतीय जनता ने जनता पार्टी का अपेक्षा कृत उदारवादी दल के रूप में स्वागत किया । जनता पार्टी में शामिल नेताओं की नीतियां तिब्बत समर्थक रहीं थीं । यही कारण है कि लोदी ग्यारी जैसे तिब्बती नेताओं ने तिब्बती मुद्दे पर परिवर्तित सत्ता की नीतियों को परखने तथा तिब्बती मुद्दे पर समर्थन हासिल करने के उद्देश्य से नई दिल्ली में तिब्बतियों की रैली आयोजित करने का आश्वासन मांगा । श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा इस परिप्रेक्ष्य में आश्वासन देने के साथ भावी प्रधानमंत्री मोरार जी देसाई द्वारा भी समर्थन दिलाने का वचन दिया । आचार्य कृपलानी द्वारा जूस पिलाकर तिब्बती अनशनकारियों का अनशन तोड़ा गया ।[1] जनता पार्टी के नेताओं विशेष रूप से जे.पी.नारायण का मानना था कि चीन के साथ भारत के मैत्रीपूर्ण संबंधों की नींव पर इस बात को स्वीकारने में हिचकिचाना नहीं चाहिए कि एक शक्तिशाली देश द्वारा अपेक्षाकृत कमजोर राष्ट्र पर आक्रमण किया गया तथा एक नया साम्राज्यवाद थोपा गया था जो पुराने साम्राज्यवाद की तुलना में ज्यादा खतरनाक था ।[2]

आचार्य कृपलानी द्वारा बफर राज्य की समाप्ति को अन्य पड़ोसियों के विरूद्ध आक्रमण मानते हुए इन राष्ट्रो द्वारा रक्षोपाय किये जाने पर बल देते हुए इस संदर्भ में इंग्लैड व जर्मनी के युद्ध का उल्लेख किया जो सिर्फ इस कारण हुआ था कि जर्मनी ने पोलेण्ड व बेल्जियम पर आक्रमण किया था।[3]

भारतीय जनसंघ की सन् 1959 में तिब्बत पर चीनी अतिक्रमण के समय स्पष्ट मान्यता थी कि "भारत को इस संदर्भ में अपने उत्तरदायित्व का पालन करते हुए नेहरू सरकार की चीन समर्पित नीति की आलोचना करते हुए तिब्बत की स्वतंत्रता के लिए प्रयास करना चाहिए क्योंकि ऐसा करना स्वयं भारत के हित में होगा"।

जनता पार्टी के शासन के दौरान तिब्बतियों के प्रति नर्म रूख के दर्शन अवश्य हुये पर वह

---

1. एवेडन, जान.एफ., "इन एक्जाइल फाम द लेण्ड ऑफ स्नो", द फाइट फार टिबेट, पृष्ठ 112, 113, पब्लिशर मिखेल जोसेफ लिमिटेड बेड फोर्ड स्क्वायर, लंदन, 1984
2. नारायण जे.पी. "इण्डियन लीडर्स ऑन टिबेट", पृष्ठ 18–42 डिपार्टमेन्ट ऑफ इन्फारमेशन एण्ड इन्टरनेशनल रिलेसन्स, सेन्ट्रल टिबेटन एडमिनिस्ट्रेशन, हिमांचल प्रदेश, 1998
3. आचार्य कृपलानी, जे.बी. "इण्डियन लीडर्स ऑन टिबेट" पृष्ठ 43–46 डिपार्टमेन्ट ऑफ इन्फारमेशन एण्ड इन्टरनेशनल रिलेशन्स, सेन्ट्रल टिबेटन एडमिनिस्ट्रेशन, हिमांचल प्रदेश, 1993

सब अनौपचारिक स्तर पर कायम रहा। औपचारिक स्तर पर भारत की तिब्बत विषयक नीति यथावत जारी रही। शरणार्थियों को भारत सरकार की तरफ से सहायता, सहयोग जारी रखा गया। दलाई लामा को तिब्बतियों के धर्म गुरू एवं निर्विवाद नेता के रूप में मान्यता यथावत जारी रही। समय–समय पर तिब्बत को लेकर चीन के साम्राज्यवादी दृष्टिकोण की आलोचना की जाती रही। सन् 1979 में चीन के साथ संबंध सुधारने के उद्देश्य से तत्कालीन विदेश मंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी बीजिंग यात्रा पर गये। इसी समय चीन ने वियतनाम के विरूद्ध सशस्त्र कार्यवाही आरंभ कर दी और इसे भारत के विरूद्ध सबक सिखाने के लिए ''सन् 1962 में की गई सैन्य कार्यवाही के समकक्ष'' करार दिया। भारत के लिए इससे अधिक अपमान और क्या हो सकता था। अस्तु श्री बाजपेयी यात्रा अधूरी छोड़कर भारत वापस आ गये।

इस युग भारत द्वारा तिब्बत को एक ऐसे राष्ट्र के रूप में मान्यता दी गई जिस पर चीन ने अवैध ढंग से कब्जा कर लिया था। तिब्बतियों के पृथक सांस्कृतिक, नृजातीय अस्तित्व को मान्यता प्रदान की गई जो तिब्बत में चीन के पाशविक दमन का शिकार हो रहा था।

राजीव गांधी युगीन नीति :– जनता पार्टी के अन्तर्विरोधों के चलते यह सरकार अधिक समय तक सत्ता में नहीं रही सकी। सन् 1980 में हुए आम चुनावों के बाद श्रीमती इंदिरा गांधी सत्तासीन हुई । उनका कार्यकाल अक्टूबर 1984 में सिख आंतकवादियों द्वारा उनकी निर्मम हत्या किये जाने तक जारी रहा। तत्पश्चात् उनके पुत्र श्री राजीव गांधी स्पष्ट बहुमत के साथ केन्द्र में कांग्रेस के नेता के रूप में उभरे।

राजीव गॉधी अपने प्रधानमंत्रित्व काल में चीन के साथ संबंधों के विषय में काफी सक्रिय रहे। सन् 1962 के युद्ध में चीन ने भारत की जितनी जमीन पर कब्जा कर लिया था वह आज भी उसके पास ही है। सन् 1989 तक भारत उस जमीन पर अपना दावा पेश करता रहा परन्तु 1989 में तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने बीजिंग जाकर एक समझौता किया जिसमें यह मान लिया गया कि भारत इस भूमि पर अपना दावा पेश नहीं करेगा। यह सब कुछ उसी तर्ज पर हुआ था जिस पर वर्षो पहले पंडित नेहरू ने लोकसभा में यह वक्तव्य दिया था कि भारत की जो भूमि चीन के पास है वह ऊसऱ है और उस पर कुछ नहीं होता। उसी बर्फीली बंजर भूमि को उनके नाती ने तस्तरी में रखकर चीन को सौंप दिया था। यह कहते हुए कि यह विवाद सुलझता रहेगा।[1] 1988 में राजीव गांधी की चीन यात्राा को भारत चीनी संबंधों में नये युग के सूत्रपात का

1. दैनिक जागरण 1 दिसम्बर 1996 नई दिल्ली।

नाम दिया गया। समझौते के फलस्वरूप कई समितियाँ और कमीशन बनाये गये इनमें सबसे महत्वपूर्ण था– भारत चीन समस्या का समाधान करने वाला कमीशन । चीन सीमा विवाद को लेन–देन के तरीके से निपटाना चाहता था जिसमें भारत की ओर से चीन के लिए भूमि का दान ही था चीन की तरफ से एवज में देने के लिए कुछ भी नहीं था। राजीव गांधी की चीन यात्रा व देंग शियाओ पेंग से उनकी मुलाकात को ''द्वितीय हेंड शेक'' का नाम दिया गया। राजीव गांधी के प्रधानमंत्रित्व काल में मेकमोहन रेखा की चौड़ाई को लेकर सवाल उठाये गये थे जिसके संदर्भ में भारत का दृष्टिकोण चीन के सामरिक कद से प्रभावित रहा। दोनो देशों के मध्य वार्ता में तिब्बत को चीन का आन्तरिक हिस्सा स्वीकार किया गया तथा चीन को इस बात का आश्वासन दिया गया कि भारत स्थित तिब्बतियों को चीन के विरूद्ध राजनीतिक कार्यवाहियों में हिस्सा नहीं लेने दिया जायेगा। अस्तु सन् 1988 में राजीव गांधी की चीन यात्रा से दोनो राष्ट्रों के बीच संबंधों के नये युग की शुरूआत भले ही हुई हो परन्तु इससे तिब्बतियों को कुछ भी हासिल नहीं हुआ। श्री गांधी की चीन चात्रा का महत्व 1991 में ली फंग की भारत यात्रा तथा बाद में जियांग जेमिन व नरसिम्हाराव की यात्राओं की पहल के रूप में ही है।

नरसिम्हाराव युगीन नीति :– दिसम्बर 1988 में राजीव गांधी की चीन यात्रा के समय से 1993 तक विश्व की राजनीतिक संरचना में काफी अन्तर आया। दक्षिण पूर्व एशिया के साथ भारत के ही नहीं चीन के भी संबंध सुधरे। ''धर्म'' कम्युनिष्ट देशों के लिए पहले जितना अछूत नहीं रहा। सन् 1988 की राजीव गांधी की चीन यात्रा भावनात्मक रूप से सफल रही परन्तु यथार्थरूप से नहीं। इस बीच अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को लेकर चीन की समझ में भी अन्तर आया। एक समय सोवियत संघ के विरूद्ध दक्षिण चीन के समुद्र में अमेरिका के साथ नौसेना अभ्यास करने वाले चीन ने सोवियतसंघ के विघटन के बाद हारभुज, जलडमरूमध्य में अमेरिका को नये प्रभु की उपाधि मिली। अस्तु बदले हुए कूटनीतिक समीकरणों के मध्य भारतीय प्रधानमंत्री नरसिम्हाराव ने चीन के साथ संबंध निर्धारण पर विचार किया। वस्तुतः नरसिम्हाराव सरकार की विदेश नीति संबंधी उपलब्धियाँ नगण्य थी। श्री राव ने इस परिपेक्ष में चीन यात्रा का मन बनाया कि उनके द्वारा पूर्व में की गई मध्य एशियाई यात्राओं की यह एक कड़ी होगी जो एशियाई देशों के बीच संबंधों को नई दिशा दे सकेगी। नरसिम्हाराव की चीन यात्रा के दौरान समझौते में राजीव गांधी द्वारा किये गये समझौते पर अंतिम मोहर लगा दी गई सीमा संबंधी समझौते में राजीव युगीन समझौते की भांति तिब्बती पक्ष को नजरअंदाज कर दिया गया। इस समझौते की एक भूल यह भी

रही कि इसमें अक्साई चिन, सिक्किम एवं अरूणांचल पर अलग–अलग बातचीत के प्रस्ताव पर स्वीकार कर लिया। इस दौरान चीन का यह मंतव्य भी स्पष्ट रहा कि भारत दलाई लामा को निष्कासित करें और बदले में सिक्किम की मान्यता ले।

नरसिम्हाराव के शासनकाल के दौरान सम्पन्न ली फंग की भारत यात्रा के समय तिब्बतियों ने ली फंग व चीन का विरोध करने के लिए प्रदर्शन तथा रैलियाँ आयोजित की । प्रदर्शनकारियों को सामान्य ढंग से गिरफ्तार कर लिया गया जैसा कि किसी भी घरेलू प्रदर्शन के दौरान सामान्य रूप से किया जाता है। परन्तु श्री राव ने कभी किसी अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर लामाओं की राजनीतिक गतिविधियाँ सीमित करने का आश्वासन किसी तीसरी शक्ति को नहीं दिया। इसके बाद सन् 1992 में श्री राव की अमेरिका यात्रा के दौरान दलाई लामा विरोधी तिब्बत समर्थक खेमे ने खाड़कुओ एवं जंगजुओ के साथ मिलकर भारत विरोधी प्रदर्शन किया।

अस्तु श्री नरसिम्हाराव के कार्यकाल के दौरान भारत की तिब्बती नीति सामान्य स्तर की रही।

संयुक्त मोर्चा युगीन नीति :– संयुक्त मोर्चा युगीन तिब्बती नीति पर चर्चा करने के पूर्व यह स्पष्ट करना जरूरी है कि भारत की विदेश नीति इस संदर्भ में कूटनीतिक यथार्थ पर नहीं बल्कि विरोधाभासों पर टिकी है। दलाई लामा को हम अपने यहां शरण भी देते हैं और उनकी स्वतंत्रता पर अंकुश भी लगाते हैं। तिब्बत के मामले पर भारतीय विदेश नीति की सोच भारतीय जनमानस की सोच न होकर नेताओं की व्यक्तिगत समझ पर आधारित है। तिब्बत विषयक नीति के विषय में श्री एच.डी.देवेगौड़ा का शासन विवादास्पद रहा। नवम्बर 1996 में रोम में आयोजित विश्व खाद्य सम्मेलन के दौरान प्रधानमंत्री एच.डी. देवगौड़ा ने चीनी प्रधानमंत्री ली फंग को आश्वासन दिया कि तिब्बती नेता दलाई लामा को भारत में रहते हुए राजनीतिक गतिविधियों की इजाजत नहीं दी जायेगी। देवगौड़ा द्वारा तिब्बतियों की राजनीतिक गतिविधियों पर अंकुश लगाने के निर्णय के बाद गुप्तचर ऐजेसिंयों ने उन संगठनों पर कड़ी नजर रखनी शुरू कर दी जो चीनी राष्ट्रपति जियांग जेमिन की यात्रा में गड़बड़ी पैदा कर सकते थे। उसी दौरान तिब्बत से लगे भारतीय इलाकों गुंजी, हिमांचल के धर्म शाला, बिहार के बोध गया, सारनाथ, दिल्ली में मजनु का टीला सरीखे स्थानों पर खुफिया चौकसी बढ़ा दी गई।

वस्तुतः दलाई लामा एवं उनके समर्थकों को भारत से चीन के विरूद्ध गतिविधियाँ संचालित करने की इजाजत आज तक किसी भारतीय सरकार ने नहीं दी है तथापि देवगौड़ा के उपरोक्त

बयान से दलाई लामा के समर्थक एवं परम्परागत तौर पर भारत की तिब्बत समर्थक लॉबी ने इस आधार पर देवगौड़ा की आलोचना में स्वर उंचे किये कि इससे चीन नये सीरे से आश्वस्त हो गया है। यह सत्य भी है कि इससे चीन के विस्तारवादी हौंसलों को शह मिली है।

प्रधानमंत्री देवगौड़ा चीन के साथ संबंधें के सुधार पर बल दे रहे थे तथापि तिब्बत सरीखे मुद्दों पर भारत का शांत रहना भविष्य के लिए खतरनाक हो सकता था।

चीनी राष्ट्रपति जियांग जेमिन की भारत यात्रा के दौरान सम्पन्न सैन्य समझौते को दो प्रमुख तिब्बती सरकारों ने यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया कि भारत और चीन बिना तिब्बती नागरिकों को शुमार किये सीमा विवाद पर विचार नहीं कर सकते ।

वस्तुतः भारत चीन के मध्य सम्पन्न किसी समझौते में तिब्बती पक्ष की अनुपस्थिति इस तथ्य को मान्यता प्रदान करती है कि तिब्बत चीन का हिस्सा है और भारत की देवगौड़ा सरकार ने एक बार फिर इसी तथ्य को मान्यता प्रदान कर दी।

श्री आई.के.गुजराल द्वारा प्रधानमंत्री पद ग्रहण करने के बाद भारत चीन संबंध निर्धारण पर बल तो दिया गया परन्तु चीन द्वारा अधिकाधिक शक्ति अर्जित करने एवं पाकिस्तान को निरंतर जारी चीनी सैन्य सहायता पर कड़ी प्रतिक्रियायें व्यक्त की गई। जहां तक तिब्बत विषयक नीति का संबंध है पूर्व प्रचलित नीतियों में कोई परिवर्तन नहीं लाया गया। दलाई लामा को तिब्बतियों का निर्विवाद नेता स्वीकार किया गया परन्तु इसका दर्जा शरणार्थी का ही रखा गया। तिब्बत को चीन का ही हिस्सा मानने की पुरातन धारणा को त्यागा नहीं गया। तिब्बतियों को चीन के विरूद्ध भारत भूमि से राजनीतिक गतिविधियॉं संचालित करने का निषेध रखा गया।

<u>भाजपा गठबंधन युगीन नीति :—</u> वर्तमान प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने सन् 1959 में लोकसभा में दिये गये वक्तव्य में स्पष्ट कर दिया था, "हम तिब्बत के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहते, परन्तु तिब्बत चीन का आन्तरिक हिस्सा नहीं है। चीन तिब्बत की स्वायत्ता का सम्मान करने के लिए बाध्य है। .... परन्तु यह समझौता तोड़ दिया गया है मेरा विश्वास है कि अब भारत एवं भारत सरकार को इस मुद्दे पर अपनी स्थिति पुनर्परीक्षित करनी चाहिए"।

4 सितम्बर 1959 को लोकसभा में दिये गये भाषण में श्री वाजपेयी ने स्पष्ट किया, "हम भारत सरकार की तिब्बत के प्रति नीति से आगाह होना चाहते हैं। क्या यह उदासीन बैठे रहने की नीति है? क्या यह अनिर्णय की नीति है? क्या यह असहायता की नीति है? .... मैं पहले ही

कह चुका हूं कि तिब्बती समस्या का समाधान सिर्फ दलाई लामा को शरण देने मात्र से नहीं हो सकता"। उपरोक्त संदर्भों में श्री वाजपेयी में चीन को संयुक्त राष्ट्र संघ में प्रवेश करवाने के लिए भारत द्वारा किये जाने वाले प्रयासों को व्यर्थ बतलाया।

वर्तमान समय में केन्द्र में श्री अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व में अनेक दलों के संयुक्त गठबंधन की सरकार सत्तारूढ़ है। निश्चित रूप से तिब्बत के मुद्दे पर श्री अटल बिहारी वाजपेयी या श्री जार्ज फर्नांडिस की जो राय है वह पूरे गठबंधन की राय नहीं हो सकती।

यह तथ्य भी ध्यातव्य है कि सत्ता से बाहर रहकर किसी मुद्दे पर विचार व्यक्त करने व नेतृत्व में आकर उन विचारों पर अमल करने में कई व्यवहारिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। सत्ता की अपनी विवशतायें होती है। यही कारण है कि इस गठबंधन के युग में भी पूववर्ती तिब्बती नीति ही जारी है। 16 जनवरी 2001 में चीनी जन कांग्रेस के अध्यक्ष ली फंग की भारत यात्रा के दौरान विपक्षीय समस्यायें सद्भावनापूर्ण ढंग से वार्ता के जरिये, परस्पर हितों का ध्यान रखते हुए हल करने, उच्च स्तरीय शिष्ठ मण्डलों के आदान प्रदान में तेजी लाने तथा आर्थिक क्षेत्र में मिलजुलकर काम करने विषयक समझौते पर हस्ताक्षर किये गये। इसी दौरान ली फंग की भारत यात्रा के दौरान ताज होटल पर तिब्बतियों की भीड़ ने हमला बोल दिया। तिब्बती प्रदर्शनकारियों से निपटने के लिए पहले से ही सी.आई.एस.एफ. को तैनात कर दिया गया था। सप्ताह भर पूर्व से क्षेत्र में धारा 144 लागू कर दी गई थी। ली फंग की यात्रा के दौरान तिब्बती मुद्दे पर प्रदर्शन कर रहे तिब्बती युवक–युवतियों पर पुलिस द्वारा हिंसा का प्रयोग किया गया। कई तिब्बतियों को गिरफ्तार किया गया।

इस प्रसंग से स्पष्ट होता है कि भारत सरकार अब भी भारत भूमि से तिब्बतियों को चीन के विरूद्ध किसी कार्यवाही में भाग न लेने देने की पुरानी नीति पर कायम है।

फरवरी 2001 में चीन सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त सत्रहवें करमापा लामा श्री उग्येन त्रिनले दोरजी तिब्बत के शुर्पु मठ से भाग कर भारत आये। उनके भारत आते ही चीन ने भारत से तिब्बती मामलों में हस्तक्षेप न करने तथा सत्रहवें करमापा लामा का किसी भी विदेशी ताकत को चीन विरोधी गतिविधियों में इस्तेमाल करने से रोकने का सुझाव दिया। चीन द्वारा द्विपक्षीय संबंधों के वृहत्तर हितों को ध्यान में रखकर मामले को सावधानी पूर्वक एवं बुद्धिमत्ता पूर्वक देखने का भी सुझाव दिया गया।[1] करमापा लामा को शरणार्थी का दर्जा देने से पूर्व भारत सरकार ने बीजिंग

1. दैनिक जागरण, नई दिल्ली, 7 फरवरी सन् 2001

सरकार को पत्रों के माध्यम से उन परिस्थितियों से अवगत कराया जिनके कारण करमापा लामा वहां से भागे थे। करमापा के सिक्किम स्थित रूमटेक मठ में जाने पर तथा उनके निवास को कॉगड़ा स्थानांतरित करने पर रोक लगाने के फैसले पर भी सरकार ने गहन बुद्धिमत्ता का परिचय दिया।[1] भारत स्थित तिब्बतियों के धर्म गुरू दलाई लामा द्वारा खुले तौर पर करमापा लामा को मान्यता दिये जाने के बाद ही भारत सरकार ने उन्हे शरणार्थी का दर्जा प्रदान किया।

अस्तु वर्तमान भारतीय जनता पार्टी गठबंधन युगीन तिब्बती नीति के विषय में अभी इतना ही कहा जा सकता है कि सरकार सतर्क मौन एवं एहतियात अपना कर एक ओर भारत चीन संबंधों को सम्हाल कर आगे बढ़ रही है तो दूसरी तरफ तिब्बत के मुद्दे को लेकर चीन के रूख में आ रहे बदलाव से भी पूरी तरह वाकिफ है। चीनी राष्ट्रपति जियांग जेमिन ने तिब्बत की स्वतंत्रता के अलावा बाकि सभी मुद्दों पर तिब्बती आन्दोलनकारियों से बात करने की इच्छा जताई है। भारत एक परम्परा के तहत तिब्बतियों को शरण देता रहा है है और करमापा लामा को शरण देकर उसने उसी परम्परा का पालन किया है। इस संदर्भ में भारत सरकार कूटनीतिक समझ का परिचय दे रही है।

वस्तुतः उपरोक्त सम्पूर्ण विवरण से एक तथ्य उभरकर सामने आता है कि भारत में सरकारें भले ही बदलती रही हों परन्तु तिब्बती मसले के प्रति भारत सरकार के रूख में कोई परिवर्तन नहीं आया। जनता पार्टी, जनता दल और संयुक्त मोर्चा की सरकारें जो कभी नेहरू की तिब्बती नीति की विरोधी रही थीं उन्होंने भी तिब्बत विषयक अपनी नीति में पूर्व परम्परा को ही जारी रखा। इस सन्दर्भ में अफसर शाही का चीन के प्रति ढुलमुल रवैया, चीन से बैर मोल न लेने की मनोवृति तथा अपनी अन्य समस्याओं में भारत की अतिव्यस्तता इत्यादि कारण भी उत्तरदायी रहे। जून 2003 में भारतीय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी बाजपेयी की बीजिंग यात्रा के दौरान भारत एवं चीन के मध्य सार्थक आर्थिक सहयोग की आवश्यकता पर बल देते हुए दोनों देशों के अर्थशास्त्रियों एवं अधिकारियों के संयुक्त अध्ययन दल के गठन की घोषणा की गई ताकि वर्तमान आर्थिक सहयोग की समीक्षा करते हुए सहयोग के नए क्षेत्रों का न सिर्फ पता लगाया जा सके अपितु दोनों देशों के मध्य बहु आयामी आर्थिक प्रगति के लिए व्यापक योजना तैयार की जा

1 नव भारत टाइम्स, नई दिल्ली, फरवरी 2001.

सके।[1] दोनों देशों के मध्य व्यापारिक प्रगति लाने के उद्देश्य से ही नाथुला दर्रे (प्राचीन सिल्क रूट) को लोगों तथा व्यापारिक उत्पादों के आवागमन के लिए खोला गया, सिक्किम स्थित चाँगू तथा तिब्बत स्वायत्त शासी क्षेत्र के रकिनगंग को सीमा व्यापार स्थल बनाने पर सहमति हुई।

वर्ष 2003 के कैनकुन सम्मेलन के दौरान भारत एवं चीन विकसित देशों के विरूद्ध लामबंद हुए। उपरोक्त दोनों तथ्यों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भारतीय विदेश नीति बदलते अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में चीन के नए नेतृत्व के साथ निकट संबंध बनाने तथा चीन के साथ व्यापारिक संबंधों के निर्धारण की ओर अग्रसर हुई है ।

श्री बाजपेयी ने बीजिंग यात्रा के दौरान तिब्बत के विषय में पुरातन सरकारों की नीति का अनुसरण करते हुए तिब्बत स्वायत्त शासी क्षेत्र को चीन गणराज्य को हिस्सा स्वीकार करते हुए यह भी स्पष्ट किया कि भारत में तिब्बतियों को चीन विरोधी गतिविधियां संचालित नहीं करने दी जायेंगी। वस्तुतः इस वक्तव्य की भाषाशैली तथा भारत सरकार द्वारा तिब्बत मसले पर प्रकाशित प्रथम श्वेत पत्र की भाषाशैली में कोई खास फर्क महसूस नहीं होता । जैसा कि भारतीय विदेश मंत्री यशवंत सिन्हा के बीजिंग यात्रा के दौरान जारी वक्तव्य से स्पष्ट हुआ (भारत चीन के मध्य बढ़ते संबंधों के मद्देनजर) दलाई लामा को भारत छोड़ने के लिए नहीं कहा जायेगा[2] भारत में दलाई लामा सहित हजारों तिब्बती शरणार्थियों को शरण दे रखी है परन्तु भारत भूमि से तिब्बतियों को चीन के विरूद्ध राजनीतिक गतिविधियां संचालित करने की अनुमति भारत की नेहरू सरकार से लेकर आज तक सत्तारूढ़ रही किसी भी सरकार ने नहीं दी इसी प्रकार भारत ने तिब्बत पर चीन के अधिपत्य सन् 1958 में स्वीकार कर लिया था। सन् 1965 में 'तिब्बत आटोनोमस रीजन' के गठन के बाद भारत द्वारा इस पर भी चीन के दावे को मान्यता प्रदान कर दी। सन् 1988 में भारतीय प्रधानमंत्री राजीव गांधी द्वारा पुनः चीन के तिब्बत पर कब्जे की मान्यता को पुष्ट कर दिया गया तो श्री बाजपेयी द्वारा तिब्बत मसले पर चीन के प्रति भारतीय विदेश नीति में किसी प्रकार के बदलाव का संकेत नहीं दिया है, गौरतलब है कि इस परिप्रेक्ष्य में भारतीय राजनीतिक नेतृत्व से एक पग आगे बढ़ते हुए भारत के बीजिंग स्थित राजदूत श्री शिवशंकर मैनन ने तो यहां तक वक्तव्य दे डाला कि "दोनों देशों के संबंधों मे तिब्बत मुददा नहीं रहा है। साफ तौर पर

---

1 जनसत्ता नई दिल्ली, 25 जून 2003, भारत में तिब्बतियों को चीन विरोधी गतिविधयां नहीं करने दी जायेंगीं ।

2 वार्ता 24 जून 2003,

हमारे लिए भारत और चीन के संबंधों में तिब्बत अब कोई मुद्दा नहीं है । मेरा मानना है कि यही वास्तविकता है।"[1]

"तिब्बत चीन का स्वायत्तशासी क्षेत्र है" तथा "भारत तिब्बत स्वायत्तशासी क्षेत्र को जनवादी चीनी गणराज्य के क्षेत्र का हिस्सा मानता है" इन दोनों वक्तव्यों में शब्दों का फेर बदल ही दृष्टिगोचर होता है । अन्तर्निहित धारणा में विशेष अन्तर नहीं है ।

ऐसा प्रतीत होता है कि भारतीय विदेश नीति चीन के साथ व्यापारिक संबंधों के निर्माण के अतिरिक्त चीन द्वारा सिक्कम को भारतीय राज्य के रूप मे मान्यता दिये जाने के लिए भी संधानित है। श्री बाजपेयी की यात्रा के पश्चात् प्रथक् राज्य के रूप में सिक्किम के दर्जे को चीन की सरकारी बेवसाइट से हटा दिया गया । परन्तु जैसा कि इस सन्दर्भ में चीनी पक्ष का भी विचार है कि इस तरह के मसले रातों रात हल नहीं किये जाते, भारत को भी चीन के प्रति अश्वस्त हो जाने की आवश्यकता नहीं है । भारत को चीन के मूलभूत अवसरवादी स्वभाव को जांचने परखने व फिर उससे सौदेबाजी करने की समझ विकसित करनी होगी। यद्यपि राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की सरकार ने तिब्बत के प्रति पूर्व भारतीय सरकारों की नीति का अवलंबन किया है तथापि तिब्बत मुद्दे के प्रति यह भारतीय विदेश नीति की असफलता का ही द्योतक है। इस संदर्भ में भारत को तिब्बत के प्रति इस तरह की नीति का परित्याग करके दृढ़ नीति का अवलंबन करना चाहिए क्योंकि चीन नर्म भाषा का जानकार नहीं है। यदि भारत चीन संबंधों के मद्देनजर भारत व्यापारी बेनने जा रहा है तो उसे व्यापारी की भाषाशैली एवं तकनीकों को सीखना ही पड़ेगा।

---

1 जनसत्ता 23 जून 2003, "बाजपेयी की यात्रा के दौरान उठ सकता है सीमा विवाद का मुद्दा ।"

चतुर्थ स्कन्ध

चीनी विदेश नीति एवं तिब्बत

चतुर्थ स्कन्ध

चीनी विदेश नीति एवं तिब्बत

किसी भी राज्य की विदेश नीति के निर्धारण में उसके शीर्षस्थ नेतृत्व की प्रभावशाली भूमिका होती है । चीनी विदेश नीति का निर्धारण करते समय यह तथ्य ध्यातव्य है कि ''देंग युग'' के बाद भी विदेश नीति नियमन पर चीनी नेताओं का नियंत्रण पूर्ववत ही है । किसी भी राज्य की विदेश नीति परिस्थितिगत निरंतरता एवं घरेलू तथा बाह्य परिवर्तन शील एवं स्थाईचर पर निर्भर करती है । किसी राष्ट्र की आंतरिक आवश्यकतायें, विश्वास, राष्ट्रीयहित तथा घरेलू नीतियाँ विदेश नीति निर्माण की प्रक्रिया को प्रभावित करती है। चीन के विषय में भी यही विचार लागू होता है। ऐसा प्रतीत होता है मानो भूमण्डलीकरण एवं वैश्वीकरण की प्रक्रिया के चलते आर्थिक अन्योन्याश्रियता ने चीनी विदेश नीति के ''सुरक्षा'' सरोकार को पीछे धकेल दिया है। एशियाई वित्तीय संकट के प्रबंधन में चीन ने जापानी अर्थव्यवस्था के मुकाबले आगे खड़े रहने का साहस जुटाया । पूर्वी एशिया में चीन की आर्थिक एवं कूटनीतिक भूमिका बढ़ती जा रही है । देंग शियाओं पेंग के समय से लीपेंग, जाओ झियांग तथा जू रोंगजी के समय तक का अन्तराल ब्यूरोक्रेट कम्युनिस्ट केडर से टैक्नोक्रेट नेताओं के कैडर तक के अन्तर को इंगित करता है। हाल के वर्षो में चीनी विदेश नीति का पूरा बल चीन को उत्तरदाई राष्ट्र के रूप में स्थापित करने पर रहा है। इसी परिप्रेक्ष में चाहे एशियाई वित्तीय संकट का दौर रहा हो या मई 1998 में भारत एवं पाकिस्तान द्वारा आण्विक परीक्षण का मसला, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपना कद ऊँचा करने में चीन ने चूक नहीं की। एशिया वित्तीय संकट के मद्दे नजर वीजिंग ने वाशिंगटन डी.सी. के साथ भी संबंधों के पुनर्निर्माण का लक्ष्य सामने रखा। उपरोक्त संकट के दौरान अवमूल्यनात्मक नीति न अपनाते हुये थाईलैण्ड, दक्षिण कोरिया, इण्डोनेशिया तथा हाँगकांग को सहायता समर्थन देना चीन द्वारा विश्व व्यापार संगठन के प्रति अपनी अर्हता को पुष्ट करने के उद्देश्य से किया गया था। चीन का लक्ष्य उपरोक्त नीति अपना कर क्षेत्र में ना सिर्फ अपनी वृद्धिशील आर्थिक भूमिका को स्पष्ट करना था, बल्कि यह भी कि अमेरिका उसे एक महत्वपूर्ण व्यापार प्रतिभागी के रूप में मान्यता दें। वस्तुतः ''अर्थ'' से उत्प्रेरित चीनी विदेश नीति का लक्ष्य भूमण्डलीकरण – वैश्वीकरण के इस युग में क्षेत्र में चीन को जापान एवं दक्षिण कोरिया के मुकाबले अधिक ऊँचाई पर स्थापित करना था।

क्षेत्रीय शक्ति संतुलन के परिप्रेक्ष्य में चीनी विदेश नीति की जागरूकता दृष्टव्य है । भारत एवं चीन दो क्षेत्रीय महाशक्तियाँ है। सन् 1962 के युद्ध के बाद दोनों के मध्य संबंध अच्छे नहीं रहें । वस्तुतः चीन कभी भी क्षेत्र में भारत की भूमिका अग्रणी नहीं देखना चाहता । एशिया के दृष्टिपटल पर प्रमुखता के साथ उभरना चीन की हार्दिक अभिलाषा रही है। सन् 1962 में यद्धपि चीन आक्रमणकारी था एवं भारत का रवैया प्रतिरक्षात्मक था बावजूद इसके चीन भारत को उसकी सुरक्षा के लिए धमकी मानता है। चीन भारत पर ना सिर्फ अपनी सीमाओं के अतिक्रमण के आरोप लगाता रहा है बल्कि तिब्बत को अपना प्रान्त घोषित करते हुए भारत द्वारा तिब्बतियों को मातृ भूमि चीन के विरूद्ध भड़काने का अनर्गल आरोप भी लगाता रहा है । चीन की सैन्य विज्ञान अकादमी के निर्देशक जनरल झाओ नान्की का कथन हिन्द महासागर के संबंध में चीनी महत्वाकांक्षा को इंगित करता है। "We are not prepared to let the Indian Ocean to become India's Ocean".

तियेन–आन–मन चौक नरसंहार के पश्चात् चीन तृतीय विश्व के साथ अपने संबंध निर्धारण में तेजी से सक्रिय हुआ । भारत ने सीमा विवाद के संदर्भ में नरमी अख्तियार करते हुए दोनों देशों के शीर्ष स्तरीय नेतृत्व की परस्पर वार्ताओं का मार्ग प्रशस्त किया जो अन्ततः राजीव गांधी की चीन यात्रा के रूप में प्रतिफलित हुआ । भारत ने चीन की विश्वव्यापार संगठन की सदस्यता का समर्थन किया तो चीन ने भारत की "एशियान सदस्यता" का तथापि सहयोग का यह रूप दोनों देशों के सैन्य व आर्थिक हितों की दूरी को पाटने में सफल नहीं हो सका। भारत एवं चीन अर्थ व्यवस्था के क्षेत्र में एक दूसरे के कड़े प्रतिद्वन्दी हैं। दोनों के ही बाजार विदेशी पूंजी निवेश को आकर्षित करते हैं, दोनों ही विश्व बाजार में वृहद स्तरीय वस्त्र निर्यातक है जिसके चलते दोनों देशों के मध्य सबंद्ध मित्रवत नहीं अपितु प्रतिद्वंदीवत है ।

चीनी विदेश नीति दक्षिण एशिया में चीन का प्रभाव क्षेत्र स्थापित करने के लिए एवं भारत की भूमिका घटाने के लिए पाकिस्तान एवं म्यांमार के साथ अच्छे संबंधों के निर्धारण पर बल देती है और यह तथ्य तिब्बत तथा सीमा विवाद के मुद्दे के साथ मिलकर चीन के साथ भारत के संबंधों में कड़वाहट घोल देता है। भारत द्वारा दलाईलामा को शरण देना एवं अनेक अवसरों पर पृथक–पृथक गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा तिब्बत की स्वतंत्रता के मुद्दे को उठाना और उसका भरपूर समर्थन करना चीन की आँख की किरकिरी बना रहता है। यद्धपि भारत सरकार इस मुद्दे

पर भारत के अभिव्यक्ति अधिकार सम्पन्न लोकतंत्र की दुहाई देते हुए "तिब्बत पर चीनी अधिकार" को बार–बार स्वीकार करती रहती है।

क्षेत्रीय राजनीति में भारत चीन संबंधों के बीच "भारत–चीन–पाक का त्रिकोण" एक अहम् भूमिका निभाता है। चीन की पाकिस्तान के साथ मित्रता चाणक्य की इस नीति पर आधृत है कि शत्रु का शत्रु मित्र होता है। यही कारण है कि 1964 में आरंभ हुए पाक–चीनी सुरक्षात्मक संबंध चीन द्वारा "काश्मीर मुद्दे" पर पाकिस्तान के समर्थन को बल प्रदान करते है। चीन पाकिस्तान को हथियारों का बड़ी मात्रा में निर्यात करता है। न सिर्फ 1964 के काश्मीर संकट के दौरान अपितु सन् 1990 में भी चीन द्वारा स्पष्ठ किया गया कि काश्मीर मुद्दे पर वह पाकिस्तान का ही समर्थन करेगा । हालांकि काश्मीर के आत्मनिर्णय के अधिकार के समर्थन के मुद्दे पर चीन का रवैया नकारात्मक रहेगा । क्योंकि यदि वह काश्मीरी जनता के आत्म निर्णय के अधिकार का समर्थन करेगा तो उसके पास उसके जिनजियांग प्रान्त को आत्म निर्णय का अधिकार न देने के पीछे कोई तर्क बचा नहीं रहेगा।

म्यांमार के साथ चीन के संबंध चीनी नेतृत्व की हिन्द महासागर विषयक महत्वाकांक्षा से जुड़े हुए है। दूसरी ओर म्यांमार के साथ भारत के संबंध सामान्य किस्म के ही हैं। चीन सदैव संयुक्त राष्ट्र संघ में म्यांमार का समर्थन करता है। वह म्यांमार को सैन्य साजो सामान का बड़ा निर्यातक है, पुनर्निर्माण एवं व्यापार के क्षेत्र में म्यांमार का बड़ा सहायक है। यद्धपि बर्मियों का एक वर्ग ऐसा भी जो चीन के साथ संबंधों को नये किस्म के उपनिवेशवाद की संज्ञा देता है। मलिक प्रभृति विद्वानों का मत है कि चीन की अस्त्र निर्यात एवं आर्थिक सहायता की नीति ने गुटनिरपेक्ष राज्य म्यांमार को चीन के "क्लाइंट स्टेट में परिणित कर दिया है।[1]

चीन द्वारा म्यांमार के माध्यम से हिन्द महासागर तक पहुंचने की महत्वाकांक्षा का परिचायक "इरावदी कोरीडोर प्रोजेक्ट" मार्ग चीन के युन्नान प्रान्त के कुनमिंग नगर से बर्मी बंदरगाह "भामो" के माध्यम से गुजरता हुआ इरावदी नदी के साथ यांगून तक पहुंचता है जहाँ से हिन्द महासागर में सैन्य अभियान चलाने का चीनी उद्देश्य भविष्य में सफल हो सकता है।

सन् 1967 में स्थापित दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों के संगठन "एशियान का निर्माण" दक्षिण

---

1. मलिक, 1995ए, पृष्ट 340

पूर्वी एशियाई क्षेत्र को साम्यवादी चीन के भय से मुक्त रखने के लिए किया गया था। निक्सन सिद्धांत के प्रतिपादन एवं इण्डो चाईना क्षेत्र से अमेरीकी सेना की वापसी के बाद क्षेत्र में आशंकित सोवियत हस्तक्षेप से भयाक्रांत दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों नें साम्यवादी चीन के साथ सामान्य संबंधों का निर्धारण आरंभ कर दिया । मलेशिया ने 1974 में, थाईलैण्ड व फिलिपिंन्स में 1975 में चीन के साथ संबंधों का सामान्यीकरण किया ।

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में सबल–निर्बल राष्ट्रों के बीच संबंध निर्धारण के सामान्यतः दो सिद्धान्त प्रयुक्त होते हैं प्रथम तो निर्बल राज्य के द्वारा सबल राज्यों की हाँ में हाँ मिलाने वाला तुष्टिकरण का सिद्धान्त द्वितीय निर्बल राष्ट्रों द्वारा एकजुट होकर संघ का निर्माण करके सबल राष्ट्र के विरूद्ध प्रतिकारी शक्ति का निर्माण करने का सिद्धान्त । भविष्य में साम्यवादी चीन के विस्तार से आशंकित होकर दक्षिण पूर्वी एशियाई ने राज्यों "एशियान" का निर्माण किया। यद्यपि एशियान के निर्माण के पीछे कुछ अन्य उद्देश्य भी थे। तियेन–अन–मन चौक नरसंहार एवं अन्य मानवाधिकार हनन मुद्दों के बावजूद एशियान देशों की सरकारों का रूख चीन विरोधी नहीं रहा है। चीन का बढ़ता हुआ आर्थिक वर्चस्व एशियाई देशों को पर्दे के पीछे की कूटनीति करने के लिए प्रेरित करता है। एशियान का यह स्पष्ट मत है कि उनकी घरेलू समस्याओं के भांति चीन की भी अपनी आंतरिक समस्यायें है और उनसे निपटने के चीनी तरीके आलोचना का विषय नहीं है। ज्ञातव्य है कि चीन तिब्बत को अपना आंतरिक मामला घोषित करता रहा है।

तिब्बत विषयक चीनी नीति को यदि कुछ शब्दों में व्यक्त किया जाय तो वह यह होगी कि "तिब्बत चीन का ही एक हिस्सा है, मातृ भूमि के बिछड़े बालक के रूप में उसका पुनः मुख्य भूमि चीन से मिलन हुआ है अतः "तिब्बत" स्वयं में कोई समस्या नहीं है, यदि तिब्बत के निवासियों एवं जनवादी चीनी गणराज्य के मध्य कुछ मतभेद है तो उनके लिए किसी बाहरी राज्य को चिंतित होने की आवश्यकता नहीं है। तिब्बत चीन का आंतरिक मामला है और उसमें हस्तक्षेप चीन के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप माना जायेगा जिसे सम्प्रभु चीनी जनवादी गणराज्य स्वीकार नहीं करेगा।" जनवादी चीन गणराज्य द्वारा सन् 1959 में दलाईलामा के भारत पलायन के बाद से आज तक जितने भी पत्र व्यवहार भारत सरकार के साथ हुए है उन सब में प्रकारान्तर से उपरोक्त विचारधारा ही अभिव्यक्त होती है। चीनी गणराज्य के प्रकाशनों में भी यह बात स्पष्ट रूप से सामने आयी है। "पीकिंग रिव्यू" के 3 अप्रैल 1964 के अंक में चीन ने भारत की विस्तारवादी आकांक्षाओं पर कटाक्ष करते हुए स्पष्ट किया "Tibet is an integral part of Chinese

territory, Tibetan rebels taking refuse in India are only a handfull of notorious serf owners thrown out by Tibetan people an it is solely China's internal affair that the Tibetan people have rid themselves of ruthless oppression. For the Indian Government to go back on its repeated assurances & openly support to the Tibetan rebels shows that it still harbours expansionists designs on Tibet. The Tibetan rebels simply are Indian Government tool."[1]

न सिर्फ तिब्बत को चीन का हिस्सा बताते हुए उसके आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप से भारत को मना किया गया। बल्कि तिब्बत पर चीन के अनाधिकृत कब्जे को तिब्बत की मुक्ति रूपायित करते हुए तिब्बत में चीन द्वारा किए गए विकास की उपब्धियों को भी चीन के गिनवाता रहा है। "The population of Tibet has increased by 10.4% in the past. 5 years since the abolition of serfdom through 1959 democratic reforms. -------------the improved life of the people , the rapid growth of agriculture and live stock breeding, and the wide spread distribution of grain and animals during the democratic reform in 1959. "[2]

तिब्बत की पीपुल्स कांग्रेस की प्रथम बैठक में तिब्बती स्वायतशासी क्षेत्र की स्थापना को राष्ट्रीयताओं पर चीनी कम्युनिष्ट पार्टी तथा माओत्सेतुंग की विचारधारा की शानदार विजय के रूप में स्पष्ट किया गया।[3]

23 मार्च 1964 को चीन के विदेश मंत्रालय द्वारा चीन स्थित भारतीय दूतावास को प्रदत्त नोट में पुनः यह स्पष्ट किया गया कि भारत दलाईलामा को अपनी धरती से चीन के विरूद्ध

---

1. वांगलिंग–''अनादर रिवीलेशन ऑफ इंडियन एक्सपेन्शनिज्म'' पिकिंग रिव्यू, पिकिंग वाल्यूम–6, नं. 14, 3 अप्रेल, 1964.
2. ''टिबेट्स पॉपुलेशन इनक्रिजिस'' एन.सी.एन.ए. अंग्रेजी संस्करण, ल्हासा, 20 अगस्त 1965
3. '' फर्स्ट पीपुल्स कांग्रेस ऑफ टिबेट मीट्स'' पिकिंग रिव्यू वाल्यूम–7, नं. 36, 3 सितंबर 1965.

अभियान चलाने से रोके, विस्तारवादी स्वप्न देखना बंद करें और चीन के आंतरिक मामलों में असहनीय हस्तक्षेप को लगाम दें।[1]

अस्तु न सिर्फ महाशक्तियों के साथ संबंधों के मामले में अपितु क्षेत्रीय राज्यों से संबंधों के विषय में भी चीन की स्थिति काफी मजबूत है। यही कारण है कि चाहे प्रकरण चीन द्वारा तिब्बत के अधिग्रहण को या मानवाधिकार उल्लंघन का या पर्यावरण प्रदूषण का चीन को किसी संगठित प्रतिरोध का सामना नहीं करना पड़ता। तियेन–आन–मन चौक नरसंहार तथा तिब्बती मानवाधिकारों के उल्लंघन पर संयुक्त राष्ट्रसंघ सरीखे अभिकरणों में विरोध तो दर्ज किया जाता है। परंतु उसके आधार पर कोई महाशक्ति चीन से संबंध समाप्त करने की बात सोच भी नहीं सकती।

1. <u>तिब्बत पर चीनी आधिपत्य– दावों की सत्यताः–</u>

सुदूरवर्ती इतिहास में 821 ईस्वी में तिब्बत तथा चीन के शासकों के मध्य सम्पन्न संधि के प्रावधान तिब्बत व चीन की सीमाओं को स्पष्ट करने के साथ तिब्बत के स्वतंत्र सम्प्रभु स्वरूप को भी इंगित करते हैं । इस संधि के प्रावधानों के अनुसार पूर्व की ओर स्थित प्रदेश चीन है तथा पश्चिम की ओर स्थित प्रदेश तिब्बत है। दोनों राज्यों में से कोई भी दूसरे पर आक्रमण नहीं करेगा। प्रस्तरों पर उत्कीर्ण यह संधि 821 ईस्वी में चीनी शासक के महल के सम्मुख, 822 ईस्वी में जोखांग मंदिर के सामने तथा 823 ईस्वी में दोनों देशों के मध्य सीमा पर स्थापित की गई थी। जोखांग (ल्हासा) के प्रस्तर के अलावा दो अन्य उत्कीर्ण शिलालेख अब अनुपलब्ध तथापि ऐतिहासिक साक्ष्य के रूप में यह शिलालेख चीन के तिब्बत पर ऐतिहासिक दावों की असत्यता उजागर करता है।[2]

तिब्बत विषयक चीनी नीति से यह पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है कि तिब्बत को चीनी वृहद क्षेत्र का एक हिस्सा तथा तिब्बती राष्ट्र को चीन का एक अल्पसंख्यक वर्ग घोषित करने की चीनी साम्यवादी पार्टी की नीति तिब्बत के स्वतंत्र अस्तित्व के विचार को प्रश्नचिन्ह के दायरें में ले आती है। "तिब्बत सदैव चीनी आधिपत्य में रहा है," "तिब्बत मातृभूमि का एक शिशु है जिसे मातृ भूमि

---

1. श्वेत पत्र नं. 11, पृष्ट 57, जनवरी 1964 से 1965
2. "टॉक्सिक टिबेट अण्डर न्यूक्लियर चाईना", पृष्ट 132, ए.पी.एच. पब्लिशिंग कार्पोरेशन नई दिल्ली 1996.

के क्रोड में होना चाहिए" इत्यादि कुछ ऐसे विचार है जो इतिहास को झुटलाते हुए चीन की साम्राज्यवादी मनोवृत्ति को "वैध अधिकार का आवरण" पहनाने का प्रयत्न करते है। इस संदर्भ में तिब्बत पर चीनी साम्यवादी कब्जे के उपरांत तिब्बत के परंपरागत समाज को साम्यवादी पेटर्न की समाज व्यवस्था में तब्दील करने प्रयत्नों को चीन द्वारा तिब्बत के विकास का नाम दिया गया। विचारधारात्मक अभियानों, कार्यशालाओं एवं सार्वजनिक सम्मेलन के प्रत्येक अवसर पर चीन द्वारा तिब्बत की मुक्ति एवं तथाकथित विकास कार्यो का राग अलापा जाता रहा है।

मानवाधिकार, पर्यावरण प्रदूषण, भाषा एवं साहित्य, जनसंख्या स्थानान्तरण एवं अन्य अनेक मुद्दो पर तिब्बत विषयक चीनी नीति भले ही बाह्य विश्व द्वारा आलोचना का पात्र बनती रही हो चीन ने सदैव इस विषय पर अपनी नीतियों के औचित्य को स्थापित किया है। तिब्बत में चीन के विरोध में होने वाले प्रदर्शनों के दौरान हुए नरसंहार पर चीनी टिप्पणीयाँ झूठ के आवरण से ढकी होती है, जिनमें वह व्यापक जन आंदोलन को "मुट्ठी भर प्रतिक्रिया वादियों द्वारा तिब्बत की प्रगति बाधा डालने के षड़यत्र" की संज्ञा देता है। "एशिया वाच", "एमनेस्टी इन्टरनेशनल " जैसी संस्थाओं की रिपोर्ट तिब्बत में जारी चीनी दमन को स्पष्ट करती है। इस संदर्भ में एमनेस्टी इन्टरनेशनल की रिपोर्ट इस प्रकार है– At least 200 civilians were killed by security forces in successive incidents, including violent riots between 1987 and 1990, when police and army units fired on demonstrators calling for Tibetan Independence."

न सिर्फ मानवाधिकार मुद्दे पर अपितु जनसंख्या स्थानांतरण की नीति पर भी चीन का अपना अलग दृष्टिकोण रहा है। "टिबेट डेली" के 1994 के एक अंक में तिब्बत में चीनी जनसंख्या की बसाये जाने के संदर्भ में देंग सियाओ पेंग का यह कथन दृष्टव्य है।"Tibet can not develop on its own. On the one hand with the Central Governments kind attention and economic support its should carry out some infrastracture projects to create conditions for economic development.--------------- in the area of man power we need to get large numbers of Han comrades in to Tibet so that they can impart scientific and technological know-how. And help Tibet

train scientific, technological and managerial personnel to speed up its economic development."

चीन की तिब्बत के संदर्भ में जनसंख्या नीति के उपरोक्त विकासात्मक स्वरूप का एक अपेक्षाकृत कठोर पहलू भी है जिसमें चीन को तिब्बत में तिब्बतियों को अल्पसंख्यक बनाये जाने का अपराधी घोषित किया जाता है। तिब्बती जनसंख्या पर जनसंख्या नियंत्रण के उपाय अपनाने के लिए की जाने वाली ज्यादतियाँ, आये दिन होने वाले तिब्बती नरसंहार, तिब्बती नस्ल के "हानवंशीयकरण" के प्रयत्न तिब्बत के विकास के लिए वहां चीनीओं के बसाये जाने की चीनी दावें की असलियत को उजागर करते है।

तिब्बत पर चीनी कब्जे के दौरान तिब्बत की महान सांस्कृतिक परंपरायें एवं धरोहर भी वंचना का शिकार हुई है। जैसा कि हीथर स्टोडार्ड का मत है, " सांस्कृतिक क्रान्ति के अंतिम चरण तक तिब्बत की संस्कृति नष्ट हो चुकी थी। ऐसा अनुमानित है कि तिब्बत की सांस्कृतिक विरासत का 95 प्रतिशत हिस्सा नष्ट किया जा चुका था।[1]

चीन की तिब्बत की पुरातन परंपराओं एवं संस्कृति के प्रति घृणा का ज्वार इतना उत्तेजित था कि मठों में प्रयुक्त धार्मिक लेख उधृत प्रस्तरों को फुटपाथों एवं सार्वजनिक शौचालयों में प्रयुक्त किया गया। परंतु चीन सबसे अलग तिब्बत के सांस्कृतिक स्वरूप की समाप्ति को तिब्बती जनता की सामंतवादी मनोधारणा से मुक्ति के रूप में रूपायित करते हुए इसे तिब्बत के तथाकथित विकास से जोड़ती है। पर्यावरण प्रदूषण के मुद्दे पर चीन विश्वमंच पर अपनी जागृति व्यक्त करता है। तिब्बत के विशाल भूक्षेत्र को अपने आण्विक परीक्षणों एवं आण्विक कचरा डंप करने के कूडेदान के रूप में प्रयुक्त करने का चीनी कृत्य भी जगजाहिर है। पाकिस्तान, भारत, बाग्लादेश, बर्मा, नेपाल, थाईलैण्ड, लाओस, कम्बोडिया, वियतनाम तथा चीन सभी की महत्वपूर्ण नदियों का स्रोत तिब्बत को वृहद हिमालयी क्षेत्र है। विश्व की लगभग आधी जनसंख्या का जीवन का अधिकार तिब्बत की पर्यावरणिक शुद्धता से जुड़ा है। इसके बावजूद तिब्बती वातावरण को अशुद्ध करने का चीनी प्रयास मानवता के विरूद्ध अपराध ही माना जावेगा।

---

1. हीथर स्टोडर्ड, "तिबेटन पब्लिकेशन्स एण्ड नेशनल आईडेन्टिटी," उद्धृत "रिफॉर्म्स एण्ड रेजिस्टेन्स इन टिबेट"–राबर्ट बर्नेट एवं शिरिन एकिनर, पृष्ट 121–123

2. तिब्बत के धार्मिक मानस के साम्यवादी पुनर्संस्कार के प्रयत्न :–

(विचारधारात्मक अभियानों की अलोचशीलता)

यद्यपि चीनी राजनीतिक व्यवस्था में विचारधारात्मक अभियान शुरू से ही महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण किये हुए है तथापि चीन में तियेन–आन–मन चौक पर हुए नरसंहार के बाद चीनी प्रशासक वर्ग में यह धारणा घर कर की चीन तथा तिब्बत में पुनः तीव्र विचारधारात्मक शिक्षा की आवश्यकता है। लगभग इसी समय पश्चिमी माडल के लोकतंत्र, राजनीतिक बहुलवाद, बहुदलीय लोकतंत्र, बुद्धिजीवियों के प्रभाव के चलते पूर्वी यूरोप तथा सोवियत संघ के विखण्डन की प्रक्रिया शुरू हो चुकी थी। चीन भी परोक्ष रूप से इन प्रवृत्तियों को अपने अस्तित्व के लिए खतरनाक मान रहा था । अस्तु इन प्रवृत्तियों तथा तिब्बत की व्यवस्था के लिए हानिकारक, विभाजक शक्तियों के विरूद्ध तीव्र समाजवादी विचारधारात्मक अभियान की आवश्यकता महसूस की गई। सन 1989 के बाद से कार्यशालाओं, विद्यालयों, कम्युनिष्ट पार्टी एवं सरकार अर्थात समाज के प्रत्येक स्तर पर राजनीतिक शिक्षण पर काफी जोर दिया गया। जनवरी 1992 में आरंभ किये गये समाज वादी विचारधारात्मक अभियान के अन्तर्गत 1 अप्रेल तक सम्पूर्ण तिब्बत में साम्यवादी कार्यकर्ताओं को भेज दिया गया। तिब्बत स्वायत्त क्षेत्र तथा तिब्बत के अन्य क्षेत्रों में उसी तरह का अभियान चलाय गया जैसा कि 1960–1970 के दशक में तिब्बत में चलाया गया था। ग्रामीण इलाकों में तीन प्रकार के देशभक्ति प्रेमों की चर्चा की गई। प्रथम– कम्युनिष्ट पार्टी के प्रति प्रेम, द्वितीय–समाजवाद के लिए प्रेम तथा तृतीय–सामूहिकीकरण के प्रति प्रेम। ग्रामीणों में 1960 के दशक के सामूहिकीकरण अभियान तथा सांस्कृतिक क्रान्ति के दौरान वर्ग संघर्ष की विचारधारा के प्रति भय एवं संशय का मिलाजुला भाव विद्यमान था। समाजवादी शिक्षण अभियान के तहत न सिर्फ रैलियाँ की गई बल्कि माओ की प्रशंसा के गीत भी गाये गये। कुल मिलाकर अभियान पुरा उद्देश्य एक ऐसे समाजवादी ढाचें का विकास करना था जो चीनी व्यवस्था से पूर्णतः मेल खाता हो । अभियानों में पार्टी और समूहों तथा कैडर व समूहों के बीच संबंधों को मजबूत करने पर बल दिया गया। यदि कोई तिब्बती उपरोक्त बातों का उल्लंघन करें तो इसके लिए लोक निंदा व जुर्माने का दण्ड निर्धारित किया गया। जैसा कि पहले भी स्पष्ट किया जा चुका है कि धर्म एवं तिब्बती राष्ट्रवाद परस्पर मिलेजुले रूप में विद्यमान रहे हैं। 1987–89 के बाद से धर्म एवं धार्मिक रीति–रिवाजों ने तिब्बती विरोध को स्थानीय स्तर की घटना से ऊपर उठाकर सार्वभौमिक अन्तर्राष्ट्रीय महत्व प्रदान किया। दूसरी तरफ तिब्बती धार्मिक रीति–रिवाजों की इस प्रेरणादायी

शक्ति से निपटने के लिए जनवादी चीनी सरकार ने कार्यशालाओं में तिब्बतियों को प्रशिक्षित करना आरंभ कर दिया। समाजवादी विचारधारात्मक शिक्षा का एक उद्देश्य विभाजक विरोधी अभियान चलाना भी था। जनवादी चीन सरकार की मान्यता थी कि तिब्बती जनसमुदाय में चीन विरोधी भावनाओं का बीज—वपन दलाईलामा समर्थक गुट द्वारा किया जा रहा है। यही कारण है कि समाजवादी विचारधारात्मक अभियानों के दौरान समाजवादी शिक्षण के अलावा मुख्य ध्यान तिब्बती आंदोलन के प्रभाव को कम करने या उसे कुचलने पर केन्द्रित किया गया। सन 1989 स्क्रीनिंग एवं खोजबीन अभियानों के दौरान तथा 1991 के ग्रीष्मकाल में आयोजित विरोध प्रदर्शनों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि विचारधारात्मक अभियानों के दौरान तिब्बती जनसमूह से विद्रोह के स्वर उठें।

जनवरी 1992 में समाजवादी विचारधारात्मक शिक्षा अभियान आयोजित करते हुए ग्याल्तसेन नोरबू ने लोगों के मस्तिष्क में देशभक्ति, समाजवाद तथा किसानों व चरवाहों के बीच सामूहिकीकरण की विचारधारा स्थापित करने के लिए शहरी एवं ग्रामीण इलाकों में विभाजक विरोधी अभियान चलाने की आवश्यकता पर बल दिया। 1992 में यद्यपि इन अभियानों की कठोरता में कुछ कमी आयी तथापि लामाओं, ननों एवं सामान्य तिब्बतीजन द्वारा चलाये जा रहे अभियान तीव्रता के साथ जारी रहें। विद्रोह के स्थिति से निपटने के लिए तिब्बतियों को धमकी दी गई कि यदि कोई व्यक्ति प्रदर्शन करते हुए या चीन विरोधी पोस्टर लगाते हुए पकड़ा गया तो उस पर जुर्माना या विद्यालय तथा काम धन्धे से बर्खास्तगी व राशन कार्ड के निरस्तीकरण इत्यादि कार्यवाहियाँ की जायेगी।

इस प्रकार समाजवादी शिक्षण अभियान जिसका उद्देश्य चीन की तथाकथित लोकतांत्रिक व्यवस्था को पश्चिमी प्रभाव व विखण्डन से बचाना था कालांतर में तिब्बतियों के विरोध प्रदर्शन को कुचलने व प्रदर्शनकारियों की मानसिकता में परिवर्तन लाने वाला कठोर विचारधारात्मक अभियान बन गया।

इन विचारधारात्मक अभियानों में तिब्बती जनता के मन मस्तिष्क को चीन द्वारा किये जा रहे सुधारों के प्रति आकृष्ट करने का प्रयत्न किया गया । इसके लिए उन्हे साम्यवाद संबंधी सिद्धांतो की शिक्षा प्रदान की गई तथा उनसे ये अपेक्षा की गई कि वे इन सिद्धांतों को अपने दिन—प्रतिदिन के कार्यों मे अमल में लाएं । उनके विचारों को साम्यवाद की तरफ आकर्षित करने के लिए कठोर ब्रेन वाश का आश्रय लिया गया ताकि सामन्ती परम्परा में जकड़े उनके मस्तिष्क

को साम्यवाद के तथा कथित प्रगतिशील पेटर्न की तरफ झुकाया जा सके ।

(अ) विभाजक विरोधी अभियान :- यह स्पष्ट हो चुका है कि तिब्बत में चलाए गए विचाराधारात्मक अभियानों का उद्देश्य तिब्बतियों की मानसिकता में परिवर्तन लाते हुए विरोध प्रदर्शनों को नियंत्रित करना, समाजवादी विचारधारा का जोर शोर से प्रचार करना तथा मातृभूमि एकता व स्थायित्व के लिए हानिकारक विभाजक व्यक्तियों के विरूद्ध वातारण तैयार करना था । विभाजक विरोधी अभियान में विभाजक शब्द तिब्बत की आजादी के लिए चीन विरोधी प्रदर्शन करने वाले तिब्बती एवं उनके प्रेरणा स्रोत दलाई लामा के लिए प्रयुक्त हुआ है। इस अभियान में जहां एक ओर नागरिकों के मन मस्तिष्क को विचाधारात्मक रूप से प्रदर्शनकारियों के विरूद्ध मोड़ने का प्रयास किया गया वहीं दूसरी ओर इस अभियान के अपेक्षा कृत कुछ कठोर पक्ष भी थे। नीचे अभियान के विचारधारात्मक एवं अन्य पक्षों का विस्तार से वर्णन किया जा रहा है ।

तिब्बत में चीन विरोधी प्रदर्शनों का तीव्रता के साथ प्रारंभ सन् 1987 में हुआ । 27 सितम्बर, 1 अक्टूबर तथा 6 अक्टूबर को क्रमशः ड्रेंपंग सेरा व गांडेन मठों की अगुवाई में तिब्बतीजनों ने विरोध प्रदर्शन किया । 1988 एवं 1989 के दौरान विरोध प्रदर्शनों का सिलसिला जारी रहा जिसकी अन्तिम परिणति 8 मार्च 1989 को लागू मार्शल लॉ में हुई । प्रारंभ में चीन द्वारा विरोध प्रदर्शनों से निपटने की जिम्मेदारी स्थानीय प्रशासन को सौंपी गई परन्तु 5 मार्च 1988 के बाद निरन्तर फैलते जा रहे विरोध को रोकने के लिए विद्रोहियों के विरूद्ध सुरक्षा बलों एवं कारावास की व्यवस्था की गई । निश्चित रूप से मातृभूमित की एकता व स्थिरता के विरूद्ध प्रदर्शन करने वाले तिब्बती जनसमुदाय को विचाराधारात्मक या मानसिक रूप से न समझा बुझा पाने की चीनी असफलता आंदोलनों के हिंसक दमन एवं मार्शल लॉ के आरोपण के रूप में सामने आई । 27 सितम्बर के विरोध प्रदर्शन के बाद 2 अक्टूबर 1987 को "तिब्बत डेली" के एक अंक में चाईनीज पीपुल्स पॉलिटिकल कन्सलंटेटिव कान्फ्रेन्स, यूनाईटेड फ्रन्ट वर्क डिपार्टमेन्ट, धार्मिक मामलों के आयोग तथा बुद्धिष्ट एसोसिएशन के बड़े नेताओं ने इस तरह के प्रदर्शन पुनः आयोजित न करने और उसके एवज में कम्युनिष्ट पार्टी की राष्ट्रीयता एवं धर्म विषयक तथा कथित उदारनीति तथा सुधार जारी रखने की अपील की । 1 अक्टूबर 1987 को ही सेरामोनेस्ट्री द्वारा विरोध प्रदर्शन आयोजित किया गया और इससे निपटने के लिए कम्यूनिस्ट यूथ लीग, पार्टी सदस्यों, सरकारी यूनिटों व विभागों से कर्मचारियों तथा कैडरों के विचाराधारात्मक शिक्षण को साधन रूप में अपनाने की सिफारिश की गई । उपरोक्त प्रक्रिया के दौरान यह शिक्षण परिवारो

तथा बच्चों तक पहुंचाना था । इसी परिप्रेक्ष्य में नेवरहुड कमेटियां गठित की गई जिनका कार्य नागरिकों को प्रदर्शनकारियों के बहकावे में आने से रोकना और पार्टी की नीति में उनका विश्वास और अधिक दृढ़ करना था । उपरोक्त सभी के लिए किसी भी महत्त्वपूर्ण सूचना की जानकारी अधिकारियों को देना अनिवार्य था । राजनीतिक शिक्षण वर्क यूनिट्स व रेजिडेन्सियल कम्पाउन्ड में दिया जा रहा था । नेवरहुड कमेटी एक हैड क्वार्टर के अधीन थी तथा रेजीडेन्सीयल कम्पाउन्ड नेवरहुड कमेटी के अधीन था । नेवरहुड कमेटी की मीटिंगों में इसके स्टॉफ के अतिरिक्त कम्पाउन्ड के नेता भी भाग लेते थे । इन कमेटियों में लोगों को विरोध प्रदर्शनों में हिस्सा न लेने तथा चीन विरोधी पोस्टर चिपकाने वालों के खिलाफ सूचना देने वालों को पुरस्कार देने का प्रलोभन प्रायः दिया जाता था । ऐसे लोगो को सूचना देने के लिए अपने विषय में जानकारी देना आवश्यक नहीं था । वे गुप्त रूप से प्रदर्शनकारियों के विरूद्ध सूचना दे सकते थे । ऐसे परिवार भी संदेह के दायरे में थे जिनके बच्चे भारत में शिक्षा पा रहे थे । उनके संबंध ''दलाई–गुट'' से होने का अंदेशा था । छोटे व्यापारी तथा अन्य धन्धों मे लगे हुए लोगों को इनफार्मर बनाया गया तथा उनके लिए पब्लिक सिक्यूरिटी ब्यूरों में भाग लेना अनिवार्य कर दिया गया । इसके अतिरिक्त मीटिंगों की कार्यप्रणाली सामान्य थी । सदस्यों को विचार के लिए कोई महत्वपूर्ण प्रश्न दिया जाता था जैसे दलाई लामा और तिब्बती विरोध प्रदर्शनकारियों के परस्पर संबंध के विषय में । वे लोग जो चीन के समर्थन में बोलते उन्हे अपने पक्ष प्रचार के लिए चीन द्वारा इस्तेमाल किया जाता था । इस दौरान आयोजित मीटिंगों में भाषण, धमकियों, चेतावनियों एवं वाद विवाद के माध्यम से असंतुष्टों का पता लगाने का उद्देश्य रखा गया । पहले की भांति व्यक्तिगत रूप से आरोप प्रत्यारोप के संघर्ष सत्र आयोजित नहीं किये गए । इन अभियानों का उद्देश्य असंतुष्टों का पता लगाकर उन्हे पब्लिक सिक्यूरिटी ब्यूरो के हवाले करना था ।

सन् 1987 के विरोध प्रदर्शन के बाद मोनेस्टी व ननरीज में राजनीतिक शिक्षण एवं खोजबीन के लिए गठित यूनिट के लिए विभिन्न सरकारी विभागों व वर्क यूनिट्स से कैडर आमंत्रित किए गए । इनका वेतन इनकी यूनिटों द्वारा दिया जाता था परन्तु राजनीतिक कार्य के लिए अतिरिक्त बोनस की व्यवस्था अलग से की गई थी । इसी प्रकार की वर्क टीम की व्यवस्था नेवरहुड कमेटियों के लिए भी की गई थी । विरोध प्रदर्शनों के दौरान इन वर्क टीम्स का मुख्य कार्य मातृभूमि की एकता का चुनौती देने वाले अलगाववादी तत्वों की खोज करना था । नवम्बर 1989 में इन वर्क टीमों व कैडरों का कार्यक्षेत्र मठों तक सीमित न रहकर दूसरे संस्थानों तक भी

व्यापक हो गया । राजनीतिक शिक्षण की अवधि बढ़ा दी गई । इस बार के अभियान में पूर्व घोंषित प्रतिक्रांतिकारियों की पुनः सघन पड़ताल की गई । परिवारों को उनकी यूनिटों, नेवरहुड कमेटी तथा बच्चों को उनके विद्यालयों द्वारा निरन्तर पर्यवेक्षण में रखा गया । विद्यालयों में आयोजित अभियानों में राजनीतिक शिक्षण के साथ–साथ शिक्षण मे असहयोगी छात्रों की सूचियां भी बनाई गई । नेवरहुड कमेटियों द्वारा तिब्बतियों के विस्तृत साक्षात्कार लिये गए । तथा पुनर्शिक्षण योग्य एवं अलगाववादी गतिविधियों में समर्पण के साथ संलग्न तिब्बतियों को अलग–अलग छांट दिया गया । इस प्रकार कार्यालयों तथा समाज के विभिन्न वर्गो से असन्तुष्टों की छटनी का कार्य तेजी से चल पड़ा । इस परिप्रेक्ष्य में गैर पंजीकृत लामाओं को मठों से बाहर कर दिया गया । दलाई लामा को नोबल शांति पुरस्कार दिये जाने के विरूद्ध अभियान आयोजित किये गए । इस प्रकार विभाजक विरोधी अभियान आम तिब्बतियों को चीन की राष्टीय एकता भंग करने वाले अलगाववादी असामाजिक तत्वों के रूप में रूपायित करते हुए आम तिब्बती जन जीवन का हिस्सा बन गए ।

पूछताछ बनाम हिंसा :– विरोध प्रदर्शनों के दौरान गिरफ्तार किये गए प्रदर्शनकारियों को जेल के अन्दर भी अनेक प्रकार के विचारधारात्मक एवं हिंसक दबावों से गुजरना पड़ता है । इन्टेरोगेशन कक्ष मे एक या दो गार्ड व इन्टेरोगेटर उपस्थित होते हैं कभी–कभी बड़ी मीटिंगे भी आयोजित करके तिब्बती इतिहास तथा दलाई लामा की भूमिका तथा चीन के विरूद्ध विद्रोह की अनुपयोगिता को लेकर एक निश्चित विचारधारा पर भाषण दिये जाते है । प्रदर्शनकारी कैदियों को विचारधारा बदल लेने पर नर्मी के साथ पेश आने का आश्वासन दिया जाता है । जो अपने विचारो पर कठोरता से दृढ़ रहते हैं उनके साथ हिंसक बर्ताव किया जाता है जिसमें कभी–कभी कैदयों की मृत्यु तक हो जाती है । मारपीट, इलेक्ट्रिक शॉक, कुत्तों द्वारा कटवाना कुछ ऐसे तरीके हैं जो प्रदर्शनकारियों को डराने के लिए सामान्य तौर पर प्रयुक्त किये जाते हैं । कारावास में डालने के लिए यह आवश्यक नहीं होता कि व्यक्ति ने किसी प्रदर्शन में भाग लिया ही हो बल्कि पोस्टर चिपकाना या पोस्टर व अन्य सामग्री का किसी तिब्बती के पास पाया जाना भी उसके इन्टेरोगेशन व कारावास का कारण हो सकता है । किस कैदी के साथ कैसा निर्ममता पूर्ण व्यवहार किया जाना है यह उसकी राजनीतिक जागरूकता एवं राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने की क्षमता पर निर्भर करता है । यदि इन्टेरोगेटर को लगता है कि उसकी विचारधारात्मक पैठ गहरी है तो उस कैदी के ब्रेन वाश करने की क्रिया तेज कर दी जाती है और रिहाई की

सम्भावनाएं क्षीण हो जाती हैं । इन्टेरागेशन मीटिंग के दौरान प्रायः युवा लामा तर्क के आधार पर चीनियों को तिब्बती स्वतंत्रता के विषय में निरूत्तर एवं किम्कर्तव्यविमूढ़ कर देते हैं जिसका परिणाम होता है मारपीट एवं लम्बा कारावास । इन मीटिंगों में प्रायः तिब्बतियों को पुराने शासन के अन्तर्गत व्याप्त साम्राज्यवाद, गरीबी एवं भुखमरी के ताने देकर शर्मिन्दा किया जाता है परन्तु अडिग तिब्बतीजन अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए स्वतंत्रता को समृद्धि की तुलना में ऊँचा स्थान प्रदान करता है । सितम्बर 1988 में राटो मोनेस्ट्री में इसी प्रकार की मीटिंग में लामा जीरिंग ढोंड्रुप की अगुवाई में चीनी पक्ष के बहकावे में आने के वजाय तिब्बती जनता ने तिब्बत की आजादी के पक्ष में नारे लगाए । इस प्रकार की मीटिंगें तिब्बतियों में बजाय चीनी पक्ष के प्रति विश्वास को बनाने में उनमें चीन के प्रति और अधिक आक्रोश एवं रोष को जन्म देती हैं और प्रदर्शनों का सिलसिला लगातार जारी रहता है। इस प्रकार कुछ शब्दों में कहा जा सकता है कि चीनियों के विभाजक विरोधी अभियान नें तिब्बतियों के आक्रोश को हवा देते हुए संघर्ष के प्रति उनकी निष्ठा को और अधिक उभारा है और इस प्रकार तिब्बती राष्ट्रवाद को परोक्षतः पोषित किया है । यहां एक बात और भी ध्यातव्य है कि तिब्बती राष्ट्रवादी भावनाओं के पीछे धर्म ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । जहां तिब्बत की विशुद्ध स्वतंत्रता की मांग चीनी दमन को आंदोलित कर देती है वहीं धर्म या धार्मिक रीति रिवाजों के माध्यम से संघर्ष का संचालन कम्युनिस्ट पार्टी की स्वैच्छिक धार्मिक विश्वास को मान्यता देने की राष्ट्रीयता विषयक नीति के कारण अपेक्षाकृत आसान हो जाता है परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि तिब्बती राष्ट्रवाद स्वयं में कमजोर है, यह अवश्य है कि धर्म तिब्बती राष्ट्रवाद के लिये अभय शिरस्त्राण का कार्य करता है । तिब्बती जन आंदोलन को कमजोर करने के लिए तिब्बतियों के धार्मिक मामलों पर भी कड़ा अंकुश लगाया जाता है । तथाकथित स्वैच्छिक धार्मिक विश्वास की नीति के बावजूद मठों के निर्माण पर प्रतिबन्ध, नए लामाओं के प्रवेश पर रोक, धार्मिक रिवाजों के पालन पर प्रतिबन्ध तथा दान पर प्रतिबन्ध इत्यादि कुछ ऐसे उदाहरण है जो चीन की उदारवादी नीति की वास्तविकता को प्रकट करते है । वास्तव में स्वैच्छिक धार्मिक विश्वास की नीति राष्ट्रीयताओं की पहचान सुरक्षित रखने का साधन न होकर तिब्बतियों को मातृभूमि चीन के प्रति झुकाने और इस प्रकार मातृभूमि की एकता व स्थिरता सुनिश्चित करने का उपाय है क्योंकि चीनियों की अपनी व्याख्या के अनुसार देशभक्ति या राष्ट्रप्रेम धार्मिक विश्वासों के ऊपर होता है । इस प्रकार धार्मिक उग्रता का सीधा अर्थ निकलता है— राष्ट्र के प्रति उग्रता का भाव अर्थात् राष्ट्रवाद और चीनियों की व्याख्या के

अनुसार तिब्बतियों के लिए इसका अर्थ होना चाहिए मातृभूमि (चीन) के प्रति समर्पण की भावना, अपनी अस्मिता के परित्याग का बोध । जहां तिब्बती जन समुदाय आज भी धर्म–राजनीति के सम्मिश्रण सिद्धान्त को वरीयता देते हुए दलाई लामा को धार्मिक एवं राजनीतिकत दोनो क्षेत्रों का निर्विवाद नेता मानता है वही चीनी पक्ष की मान्यता है कि पहले की सामन्तशाही व्यवस्था नवीन तिब्बत में आधुनिक सुधारों के बाद कोई महत्व नहीं रखती । अस्तु तिब्बतियों को दलाई लामा के प्रति अपने विश्वास में परिवर्तन लाना पड़ेगा । चीनी पक्ष की यह मान्यता विभिन्न विभाजक विरोधी विचारधारात्मक अभियानों के दौरान प्रकट हुई जबकि दलाई लामा की भूमिका की आलोचना की गई । जिस प्रकार तिब्बत में धार्मिक स्वतंत्रताओं का अपहरण किया जा रहा है उससे भी यह बात स्पष्ट होती है कि चीनी पक्ष उठते हुए राष्ट्रवादी ज्वार को दलाई लामा के निर्विवाद एकत्ववादी व्यक्तित्व से वंचित कर तिब्बती जन आंदोलन को दिशाहीन कर देना चाहता है ।

10 दिसम्बर 1988 को मानवाधिकार दिवस के अवसर पर तिब्बतियों ने संयुक्त राष्ट्रसंघ एवं मित्र राष्ट्रों से अपने न्यायपूर्ण अधिकारों की वापसी की अपील की जिसे चीनी पक्ष द्वारा अस्वीकार कर दिया गया । 7–8 मार्च 1989 को ल्हासा में मार्शल लॉ की घोंषणा तथा पीपुल्स लिबरेशन आर्मी की तैनाती से यह पूरी तरह स्पष्ट हो गया कि तिब्बत ने वर्क टीमों का समाजवादी पुनर्शिक्षण अभियान प्रकारान्तर से विभाजक विरोधी अभियान पूर्णतः असफल रहा । तिब्बत में आधुनिकता एवं प्रगति के खोखले चीनी दावों से प्रभावित हुए बिना तिब्बती जनसमुदाय ने राष्ट्रवाद, पश्चिमी मॉडल के लोकतंत्र तथा मानवाधिकारों की मांग द्वारा विश्व जनमत का ध्यान आकृष्ट करने का प्रयत्न किया । कठोर दण्ड एवं हिंसात्मक दमन ने तिब्बती राष्ट्रवाद को और अधिक पल्लवित किया ।

(ब) <u>तिब्बती मठ उग्रवाद का चीनी दमन</u> :– जनवादी गणराज्य चीन के विरूद्ध तिब्बती राष्ट्रवाद के उत्कर्ष में मोनेस्ट्री तथा ननरीज की भूमिका महत्वपूर्ण रही है । तिब्बती जन समुदाय के संघर्ष को स्वतंत्रता की मांग की दिशा में गति प्रदान करने मे लामाओं ने उत्साहपूर्ण भूमिका का निर्वाहन किया । तिब्बती समाज में धार्मिक नेतृत्व (धर्म व राजनीति के गठबंधन) के औचित्य के कारण धर्म को केन्द्रीय स्थान प्राप्त है । स्वाभाविक रूप से धर्म गुरूओं व लामाओं का प्रत्येक क्षेत्र में जन समुदाय को समर्थन समाज को नैतिक–मनोवैज्ञानिक संबल प्रदान करता है । तिब्बती जनप्रदर्शनों में मठ एवं लामाओं की आत्मोत्सर्गपूर्ण भूमिका होने के पीछे बौद्ध धर्म का यह सिद्धांत भी कार्य करता है कि आत्मपरित्याग के द्वारा अगले जन्म में पुनः मनुष्य के रूप में जन्म मिलेगा

और धीरे–धीरे इसी प्रकार सुकर्मों के संचित होते रहने से अंतिम मुक्ति का मार्ग खुलेगा । इसके अतिरिक्त चूंकि लामा ब्रह्मचारी जीवन व्यतीत करते हैं अतः इसी प्रदर्शन के दौरान मृत्यु होने पर मात्र उनका जीवन ही प्रभावित होता है जबकि किसी गृहस्थ की मृत्यु उसके पूरे परिवार को प्रभावित करती है । अतः लामा संकल्पों को पूरा करने के लिए, राष्ट्ररक्षा के लिए, लोक परलोक सुधारने के लिए प्रदर्शनकारी आंदोलनों में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लेते है । तिब्बती जन आंदोलन को लामाओं के सहयोग से वंचित करने के उद्देश्य से चीनी प्राधिकार द्वारा मठ पुनर्निर्माण, मठों में नवीन प्रवेश पर प्रतिबन्ध तथा गैर पंजीकृत लामाओ के निष्कासन, एवं मठों को राजकीय व सार्वजनिक वित्तीय सहायता के निरस्ती करण की नीति अपनाई गई ताकि साधनों से वंचित होकर मठ एवं लामा राष्ट्रवादी प्रदर्शनकारियों को किसी प्रकार का समर्थन प्रदान न कर सकें । सामान्यतः तिब्बती लामा खेती, व्यापार या किसी किस्म की दुकानदारी नहीं करते उनका कार्य मात्र धर्म की सेवा करना तथा बुद्ध के उपदेशों का प्रचार प्रसार करना होता है । फलस्वरूप उनका आर्थिक आधार या तो जनता द्वारा स्वेच्छा से दिये गए दान या राजकीय सहायता पर आश्रित होता है । सन् 1959 के पूर्व के तिब्बती समाज में गृहस्थों व लामाओं के बीच आदर का संबंध हुआ करता था । गृहस्थ स्वेच्छा से मठों में दान देते व लामा उनके स्वास्थ्य, सुख एवं समृद्धि का आशीर्वाद दिया करते थे । इसी प्रकार संबंध वर्मा के बौद्धवाद में भी पाया जाता है परन्तु तिब्बत पर चीनी आधिपत्य और व्यतीतमान समय के अनुसार 1980 के बाद की तथा कथित उदारवादी धार्मि नीति के तहत मुख्य रूप से धार्मिक संस्थाओं को मिलने वाले स्वेच्छिक अनुदानो की कटौती मठों के रख–रखाव की जिम्मेदारी सरकार को सौपने के लक्ष्य के कारण मठों व लामाओ का आर्थिक आधार संकुचित हो गया । वित्तीय क्षेत्र में आत्मनिर्भरता के संकुचन का प्रभाव धर्म की राजनीति में सक्रियता पर पड़ना स्वाभाविक था । इतना होते हुए भी तिब्बती समुदाय के आंदोलन को लामाओं का समर्थन कम नहीं हुआ । सन् 1987 के बाद के लगभग सभी प्रदर्शनों के आयोजनों को मठों का समर्थन प्राप्त रहा । तिब्बती आंदोलनों के पीछे मठों के समर्थन का आधार यह रहता है कि आजाद तिब्बत में ही बौद्ध धर्म पनप सकता है और यदि बौद्ध धर्म पनपेगा तो न सिर्फ तिब्बत अपितु सम्पूर्ण विश्व लाभान्वित होगा । जब वे आजादी की बात करते हैं तो वह सिर्फ राष्ट्रीय स्वतंत्रता की बात नहीं होती बल्कि उसमें आध्यात्मिक–धार्मिक आत्म निर्णय की स्वतंत्रता भी निहित होती है जो सीधे–सीधे मूल रूप से प्रत्येक जीव के जीवित रहने के अधिकार से जुड़ी रहती है । सन् 1987–88 के दौरान प्रमुख मठों के अनेंक लामा गिरफ्तार

किए गए । स्थिति की सामान्यता दर्शाने के लिए चीन सरकार द्वारा तिब्बत ने मौनलम मनाए जाने की घोंषणा की गई । सेरा, ड्रेपंग व गांडेन के लामाओं ने अंतर्राष्ट्रीय ध्यान आकृष्ट करने के लिए इस उत्सव का विरोध करने का निर्णय लिया । यदि धर्मगुरूओं द्वारा धार्मिक आयोजन का विरोध किया जाता तो निश्चित ही चीन की तथाकथित धार्मिक उदारता की नीति पर अंगुली उठाई जाती । लिहाजा प्रांतीय कम्यूनिस्ट पार्टी के चेयरमैन रेडी ने धार्मिक तत्वों को साथ लेकर लामाओ को उत्सव में सम्मिलित करने का प्रयास किया । लामाओं की मोनलम की क्रियान्विति के लिए बन्दी लामाओं को छोड़ने की मांग के फलस्वरूप 21 जनवरी 1988 को 59 लामाओं की रिहाई की गई । इस बीच यूलू दावा जीरिंग जिन्हे 1959 के विद्रोह के लिए दोषी पाया गया था तथा जिन्हे 1979 में रिहा करने के बाद 1987 में पुनः गिरफ्तार कर लिया गया था, की रिहाई की मांग रखी गई । उन्हे क्रांति विरोधी प्रचार करने, तिब्बती आजादी पर चर्चा करने तथा चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की नीतियों की आलोंचना करने के अपराध में गिरफ्तार किया गया था । उनकी रिहाई न किये जाने पर प्रमुख मठों के पंजीकृत लामाओं ने चीन प्रायोजित मोनलम उत्सव ने भाग लेना अस्वीकार कर दिया । 24 फरवरी से 5 मार्च तक चलने वाले इस उत्सव में चीनी पक्ष के दबाव के कारण सिर्फ गैर पंजीकृत लामाओं ने भाग लेना स्वीकर किया । इस दौरान सभी मठों में वर्क टीमों के राजनीतिक शिक्षण अभियान के दौरान समाजवादी विचारधार के प्रचार प्रसार के दौरान लामाओं पर कठोर निगरानी रखी गई । 5 मार्च को समापन समारोह के दौरान गांडेन मठ के लामाओं ने इकट्ठा होकर कम्यूनिस्ट पार्टी के नेताओं के सम्मुख एक बार पुनः युलू दावा जीरिंग की रिहाई के लिए दबाव डाला । इस बीच लामाओं की उत्तेजित भीड़ पर किसी चीनी कर्मचारी द्वारा पत्थर फेंके जोने के कारण हिंसा भड़क उठी । रेडी तथा अन्य नेता मन्च छोड़कर भाग गए । पुलिस द्वारा एक व्यक्ति की हत्या किए जाने के बाद लगभग दो सौ लामाओं ने तिब्बत की स्वतंत्रता के नारे लगाते हुए बारखोर की परिक्रमा शूरू कर दी । जोखांग मंदिर के पास इस भीड़ पर अश्रु गैस व लाठियों से हमला कर दिया गया । पहली परिक्रमा पूरी होने के बाद बल्लम जैसे हथियार लेकर चीनी पुलिस लामाओं पर टूट पड़ी पत्थर फेंक कर प्रतिकार करते हुए लामाओं ने परिक्रमा जारी रखी । इस बीच लामाओं की भीड़ में सामान्य जन भी शामिल हो गए । जोंखांग मंदिर के बाहर क्षेत्र मे तिब्बती जनता ने पीपुल्स आर्म्ड पुलिस पर पत्थरो से हमला कर दिया । इस विद्रोह में खम्पाओं के शामिल होने के बाद विद्रोह का दायरा बढ़ गया परन्तु इसका सीधा प्रभाव विद्रोह के चीनी दमन की तीव्रता पर पड़ा । मार पीट व हिंसा के उपरांत

जोखांग के अन्दर से चार मिलिट्री ट्रक भरकर लामा बाहर निकाले गए कुछ अर्द्धचेतन, कुछ अचेतन तो कुछ मृत । कई लोग पुलिस के भय घायलावस्था में ही मंदिर की छत से कूद पड़े और जान से हाथ धो बैठे । जो घायल थे वे डर के मारे पीपुल्स हास्पिटल में इलाज के लिए नहीं गए । पुलिस ने पोस्टमार्टम के बाद मृतकों के शरीर संबंधियों को देने से मना कर दिया । लामाओं को ट्रकों में ले जाये जाने के कुछ समय बाद नेचुंग मोनेस्ट्री के लामा इकट्ठे हुए । जोखांग मंदिर में चीनियों के प्रवेश से नाराज लामाओं ने चीनियों को खदेड़ देने का निश्चय किया भले ही इसके लिए उन्हे प्राण ही क्यों न देने पड़े । चार बजे के करीब जोखांग मंदिर पहुंचकर चीनी सैनिकों पर पत्थर फैंकने शुरू कर दिये । चीनियों प्रदर्शनकारियों का पीछा करते हुए मारपीट की । प्रतिकार स्वरूप तिब्बतियों ने चीनी रेस्टोरेन्ट व फार्मेसी जला दी । यह पहला अवसर था जबकि तिब्बती प्रदर्शनकारियों ने चीनी नागरिको व उनकी सम्पत्ति पर हमला किया । चीनी पक्ष द्वारा पीपुल्स आर्म्ड पुलिस के एक जवान की मृत्यु व 28 अन्य के घायल होने की पुष्टि के साथ ही हत्या के आरोप में 4 तिब्बतियों को गिरफ्तार कर 19 जनवरी 1989 को सजा सुना दी गई । अगस्त 1988 में अन्य 4 अभियुक्तों को भी सजा सुना दी गई यद्यपि पूछताछ के दौरान इन चारों ने अपने साथ किसी अन्य तिब्बतियों के नाम का खुलासा नहीं किया। इस घटना से यह बात अवश्य स्पष्ट हुई कि प्रदर्शनकारी प्रदर्शनों संविधान व कानून के विरूद्ध नहीं मानते तथा तिब्बत की आजादी उनके लिए सर्वोच्चतम तथा पवित्रतम लक्ष्य है ।

<u>ननों की भूमिका</u> :– तिब्बती स्वतंत्रता की मांग के पीछे न केवल लामाओं का वरद हस्त रहा बल्कि ननों की भूमिका भी विभिन्न विरोध प्रदर्शिनों के दौरान काफी महत्वपूर्ण रही । यद्यपि वित्तीय स्रोत, धार्मिक विधियों की क्रियान्विति तथा ननों की तुलना में लामाओं की श्रेष्ठता इत्यादि कुछ बातों से तिब्बती समाज में उनका स्थान तुलानात्मक रूप से थोंड़ा नीचे हो जाता है तथापि राष्ट्रप्रेम तथा स्वाधीनता की अलख जगाने में तिब्बती राष्ट्र के एक अंश के रूप में उनकी भागी दारी उन्हे समाज में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्रदान करती है । धार्मिक एवं सांस्कृतिक मामलों की परिषद के अनुमान के अनुसार तिब्बत में सन् 1959 से पूर्व 717 ननरीज़ थी जिनमें करीब 27080 ननें थी।[1] तथाकथित सांस्कृतिक क्रांति के दौरान भारी मात्रा में ननरीज नष्ट कर दी गई । न्येमो स्थित कागयुपा ननरी मे 1959 के पूर्व 33 ननें थीं जिनमें से 4 भारत आई शेष 29 में से 3 ननें

1. ''फारबिडन फ्रीडम्स'' (1990) : 85–6

1984 में शेष बचीं, इसी प्रकार ल्हासा के उत्तर पूर्व में स्थित नेचुंगरी ननरी ने सन् 1959 मे 95 ननें थीं जिनमें से 1988 में ननरी के पुर्नआरंभ होने पर सिर्फ 5 नने शेष बचीं । यही हाल ल्हासा स्थित जांगखंग ननरी, ल्हासा के उत्तर पश्चिम में स्थित गारी ननरी तथा ल्हासा के उत्तर में स्थित छुबसांग ननरी का रहा जहां ननों की संख्या 1959 की तुलना में काफी कम हो गई । यहां सभी युवा ननें एक योगिनी (जो अत्यधिक सम्मानित पद है) के अधीन रहती है । तिब्बती समाज में लामाओं को अधिक विद्वान समझा जाता है तथा विभिन्न ननरीज़ में लामाओं को बौद्धिक व्याख्यानों तथा धार्मिक क्रियाओं को सम्पन्न कराने के लिए आमंत्रित किया जाता है । तिब्बती समाज में लामाओं की तुलना में ननों की कम महत्वपूर्ण स्थिति के लिए एक अन्य बात भी उत्तर दायी है । तिब्बती समाज में लड़कियाँ नन सिर्फ इसलिए नहीं बनती कि इससे उनका धार्मिक उन्नयन होगा अपितु जीवन की विपरीत परिस्थितियों से उपजी हताशा जिनमें पारिवारिक प्रताड़ना तथा शारीरिक विकलांगता शामिल है, के कारण भी सामन्य जीवन छोड़कर वे नन बनती हैं । प्रायः ननरीज़ को ननों के परिवारों से या फिर जनता से छोटे मोटे उपहारों के रूप में भी सहायता मिलती हैं इस कारण इनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं होती । इस प्रकार आर्थिक एंव शैक्षिक दृष्टि से कमजोर होने के बावजूद उनकी देशभक्ति का स्तर सर्वोच्च है जो विदेशी आक्रांताओं के समक्ष देश की अस्मिता को महत्व देती है बिना इस बात की परवाह किये कि उन आक्रांताओं का विरोध करने पर उनका नारीत्व तक सुरक्षित नहीं है । राष्ट्रभक्ति के इस जज्बे के कारण तिब्बती समाज में ननों के प्रति दृष्टिकोण में सुधार हुआ है । सन् 1959 से पूर्व ननों द्वारा किसी सामूहिक प्रदर्शन की घटना घटित नहीं । हुई 12 मार्च 1959 को पोटाला के सामने चीनी सेना के विरोध के लिए वूमेन रिवोल्ट का नेतृत्व दो ननों द्वारा ही किया गया था ।[1] इसी प्रकार न्येमोरू ननरी की नन टिनले चोडोन ने सांस्कृतिक क्रांति के दौरान ग्रामीण तिब्बत के विसतृत क्षेत्र के चीन के विरूद्ध गुरिल्ला आर्मी का गठन कर महान विरोध अभियान चलाया था । सन् 1988 के बाद से ननों ने लामाओं के साथ मिलकर कई विरोध प्रदर्शन किये । 1987–1989 के दौरान ननों द्वारा प्रायोजित किए गए विरोध प्रदर्शन छोटे स्तर के परन्तु चौकाने वाले थे । लामाओं तथा जनसमुदाय की सक्रिय सहभागिता से सम्पन्न विरोध प्रदर्शन जहां महत्वपूर्ण दिवसों पर आयोजित होते थे जिनमें हिंसा भी अंतर्ग्रस्त होती थी वहीं छोटे आकार के ननों द्वारा

---

1. हेवनेविक (1990) : 83–4 एण्ड ऐवेडन (1986) : 53

आयोजित प्रदर्शन बिना महत्वपूर्ण उत्सवों के कभी भी सम्पन्न होकर तिब्बती राष्ट्रवाद के दीपक मे स्नेहन का कार्य करते हैं ।

मोनलम के परिप्रेक्ष्य मे हुई गिरफ्तारियों के विरोध में गारू ननरी की ननों द्वारा 17 अप्रैल को विरोध प्रदर्शन आयोजित किया गया । छुपसांग ननरी द्वारा भी विरोध प्रदर्शन आयोजित किया गया । इस प्रकार ननों के विरोध प्रदर्शन की कोई निश्चित तिथि या अवसर नहीं था । ननों को गिरफ्तार कर जेल भेजा गया । उनमें से अनेक को जुलाई में दूसरे प्रदर्शनकारियों के साथ रिहा कर दिया गया । सन् 1987 से युवा ननों द्वारा विरोध प्रदर्शनों का तेजी से आयोजन किया गया। इन ननों को बिना पूछताछ के जेलों में डालकर अमानवीय यातनाएं दी गई । प्रताड़ना के तरीकों में कुत्तों से कटवाना, सिगरेट से दागना तथा इलेक्ट्रिक बटन्स का प्रयोग करना इत्यादि प्रमुख थे। इन तमाम प्रताड़नाओं से परिचित होने और अपनी कमतर आर्थिक स्थिति के बावजूद ननों की द्वारा राष्ट्र के प्रति समर्पण भावना ने उनके कार्य क्षेत्र को सम्मानीय स्थान प्रदान किया । पिछले 42–43 सालों के दौरान तिब्बती सभ्यता व संस्कृति का दमन, हान जनसंख्या का तिब्बती क्षेत्रों में भारी जमावड़ा, तिब्बतियो का अपने ही देश मे अल्पसंख्यक बन जाना तथा चीन द्वारा तिब्बत में मानवाधिकार दमन एवं पर्यावरण प्रदूषण कुछ ऐसे अत्याचार हैं जो किसी भी राष्ट्रीयता को राष्ट्र की रक्षा के लिए उद्यत उन्मत्त बना सकते है । जैसा कि हन्ना हैवनैविक ने स्पष्ट किया है कि युवा तिब्बती महिलाओं की धर्म में बढ़ती रूचि पुनर्नवा प्रक्रिया के एक हिस्से के रूप में समझी जा सकती है । पुनर्नवा प्रक्रिया को स्पष्ट करते हुए एनटोनी वालेस लिखते हैं कि यह अपेक्षाकृत अधिक संतोषजनक संस्कृति के निर्माण के लिए समाज के सदस्यों द्वारा किया गया कोमल, जागरूक एवं संगठित प्रयत्न है ।

तिब्बती जन के सम्मुख प्रमुख समस्या अपनी अस्मिता को बचाए रखने की है । एक पुरातन संस्कृति के सम्मुख चीनी साम्राज्यवाद ने अस्तित्व का संकट उत्पन्न कर दिया है । तिब्बती दर्शन, कला, भाषा, धर्म, साहित्य आज चीनी साम्यवाद के सम्मुख पंगु खड़े कराह रहे हैं । सन् 1959 से लेकर आज तक अधिकृत तिब्बत में चीन द्वारा अपनाई गई प्रत्येक नीति साम्राज्यवादी देश द्वारा अपने उपनिवेश के प्रति अपनाई गई शोषणकारी नीति से किसी मायने में पृथक नहीं रही । वे तिब्बती जिन्होंने चीन के दमन व शोषण से डर कर चीनीकरण को स्वीकार किया वे न तो चीन द्वारा पूर्णतः स्वीकार किये गये न ही तिब्बती राष्ट्रभक्त उन्हे पूर्ण तिब्बती मानते हैं । अस्तु व्यक्तिगत एवं सभ्यता के स्तर पर सामूहिक अस्तित्व के आगे अस्मिता का संकट विकराल

रूप धारण किये खड़ा है । एक राष्ट्र, एक जाति के रूप मे अपनी अस्मिता को स्थापित रखने के लिए वे अपने धर्म तथा संस्कृति को आधार बनाते हैं और उस धार्मिक संस्कृति को चीनी साम्राज्य वाद के विरूद्ध राष्ट्रवाद की अलक जगाने में प्रयोग करते हैं । तिब्बत में चीन विरोधी विरोध प्रदर्शनों में लामाओं व ननों के नेतृत्व में तिब्बती जनसमुदाय का इकट्ठा हाना इस तथ्य को सत्य सिद्ध करता है ।

राष्ट्रवाद की जैसी तीव्र लहर लामाओं एवं ननों के विरोध प्रदर्शन में देखने को मिलती है उतनी ही तीव्रता से एवं हिंसक तरीके से आंदोलन का दमन भी किया गया । चीनी दमन का हिंसात्मक रूप दो प्रकार से दृष्टिगोचर होता है– एक तो आंदोलन के सीधे दमन के रूप मे दूसरा पूछताछ के दौरान तिब्बतियों के मनोबल को परास्त करने के रूप में । यद्यपि दोनो ही प्रकार हिंसात्मक हैं तथापि अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इनका वर्गीकरण किया जा रहा है–

सन् 1959 से ही तिब्बती विरोध प्रदर्शनों का चीनी दमन अपने स्वरूप में हिंसात्मक रहा । सांस्कृतिक क्रांति के दौरान न्येमरू ननरी की नन टिनले चोडोन द्वारा छेड़े गए चीन विरोधी अभियान के परिणामस्वरूप उसे कड़ी सजा दी गई । सितम्बर 1987 में वाशिंगटन डी.सी. ने दलाई लामा की पंचसूत्रीय शांति योजना की घोंषणा से क्रुद्ध होकर तिब्बत मे पूछताछ अभियान चलाए गए । इस दौरान ल्हासा में हुए तिब्बती प्रदर्शनों का पुलिस व सेना की सहायता से हिंसात्मक दमन किया गया मार्च 1988 में चीनियों ने जोखांग मंदिर मे बारह लामाओं को मार डाला । 5 मार्च 1989 को ल्हासा में हुए प्रदर्शन के दौरान 250 के करीब तिब्बती मारे गए व सैकड़ों घायल हुए । चीन के इस कृत्य की अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर निन्दा की गई । 8 मार्च को तिब्बत पर मार्शल लॉ लागू किया गया । फरवरी 1992 में जोंखांग मंदिर की एक कोठरी में जाम्पा तेंजिन नामक लामा मृत पाया गया । कोठरी में पूछताछ के दौरान अपनाए गए कठोर तरीकों के कारण लामा की मृत्यु हुई परन्तु इसके ठीक विपरीत चीनियों द्वारा जोखांग मंदिर में बन्दी अन्य लामाओं को प्रताड़ित करके जाम्पा तेंजिन की हत्या को आत्महत्या के रूप में प्रचारित कर दिया गया । इस हत्या के कुछ ही समय बाद सेरा, द्रेपंग तथा जोखांग के लामा द्वारा तिब्बती स्वतंत्रता की मांग करते हुए जोखांग मंदिर के सामने कई प्रदर्शन आयोजित किए गए । हर प्रदर्शन के दौरान कई गिरफ्तारियां हुईं । जोखांग के इलाके को प्रतिबन्धित क्षेत्र घोंषित कर दिया गया । उन लामाओं ने जो कि तुरन्त रिहा किए गए थे चीनी दमन के भय से मुक्त होकर प्रदर्शनो तथा चीन विरोधी गतिविधियों में शामिल होना लगातार जारी रखा । इस दौरान हुई

गिरफ्तारियों के बाद कोई न्यायिक प्रक्रिया नहीं अपनाई जाती, सीधे गिरफ्तार लामाओं को प्रताड़ना तथा पूछताछ कक्ष में भेज दिया जाता है ।

यहां न तो बीमार पड़ने पर उनके इलाज की व्यवस्था होती है न ही प्रतिदिन पूरा भोजन ही उन्हे दिया जाता है । इसके अतिरिक्त युवा तिब्बती महिलाओं तथा ननों के साथ अत्यधिक घृणास्पद बर्ताव किया जाता है ।

गिरफ्तारियों के बाद पूछताछ की लम्बी प्रक्रिया आरम्भ होती है । पूछताछ सत्र का उद्देश्य गिरफ्तार किए गए व्यक्ति के अपराध को स्वीकार करवाना, उसके साथ प्रदर्शन में भाग ले रहे अन्य लोंगों के नाम पता करना तथा पूछताछ के दौरान की गई बातचीत से तिब्बत की आजादी को कभी प्राप्त न हो सकने वाला उद्देश्य बताते हुए आइन्दा इस उद्देश्य से प्रदर्शनों मे भाग न लेने के लिए धमकी और चेतावनी देना इत्यादि होता है । प्रायः पूछताछ के दौरान बंदी बनाए गए कैदियों की राजनीतिक विचारधारा की गहराई एवं उनके राजनीतिक दर्शन की थाह ली जाती है फिर उन्हे अपना अपराध स्वीकार करने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रलोभन दिये जाते हैं । कैदी की राजनैतिक विचारधारा की गहराई ही उसको दिये जाने वाले दण्ड की तीव्रता एंव समयावधि निर्धारित करती है । यह भी प्रलोभन दिया जाता है कि साथी प्रदर्शनकारियों का नाम बतला देने पर या मातृभूमि के विरूद्ध अपना अपराध स्वीकार कर लेने पर उनकी सजा कम या पूरी तरह माफ की जा सकती है ।

प्रायः गिरफ्तार किए गए लोंगों को या तो ल्हासा के पूर्व में 10 कि.मी. की दूरी पर स्थित "गर्टसा" या फिर "सांगयिब" कारावास में भेजा जाता है । आधिकारिक तौर पर द्राप्ची ही एक मात्र कारावास है ।

यहां पर कुछ प्रदर्शनकारी कैदियों की आत्म व्यथा प्रस्तुत की जा रही है जिससे पूछताछ तथा प्रताड़ना के चीनियों द्वारा अपनाए गए तरीके और अधिक स्पष्ट रूप में सामने आते हैं । 5 मार्च के दंगो में पत्थर फेंकने के दोषी पाए गए दुकानदार ने पूछताछ सत्र का ब्यौरा इस प्रकार प्रस्तुत किया– "I was interrogated eight times during the first half of the month. They asked me, 'why did you take part in the demonstration ? what are your views ? what does your family do?" They punched my stomach quite frequently during the interrogation. ....some of the interrogations were Tibetan..................some times the questions were

very similar....................If I had named someone how could I face him of his relatives ? When you don't give names of other people they really start to beat you. If you don't say anything they beat you. Later on they ask you, 'Who was the leader ? who incited you to revolt ?'[1]

उपरोक्त प्रदर्शनकारी को 25 जुलाई के आस पास रिहा कर दिया गया ।

इसी प्रकार गिरफ्तार की गई तिब्बती लड़कियों एवं महिलाओं के साथ जेल के चीनी अधिकारियों व कर्मचारियों का दुर्व्यवहार किस हद तक नीचतापूर्ण है यह तथ्य इस उदाहरण से स्पष्ट होता है– "The officers told us from the beginning that this will happen to all Tibetan girls that nobody outside the barracks will know of it and that nobody will believe it . It was not possible to make a complaint. We were not allowed to leave the area of barracks. ....The majority of the Chinese officers & also the Chinese doctors took part in this abuse. The intention was to humiliate Tibetan population".

6 मार्च को गिरफ्तार किए गए एक अन्य कैदी ने जेल मे दी गई प्रताड़ना को इन शब्दों में स्पष्ट किया :– "I was arrested and kept oat a police station where I was constantly beaten by the police. ....At Sangyib we were kept in a small cell. My hands & feets were shackled for three days................They usually used an electric button or an iron rod. The police placed an electric button inside a prisoner's mouth, which causes the tongue to swell.....................some prisoners had their hands tied behind their backs and were hang from the ceiling. A prisoner named Nyima Tsering was kept like this or 11 days and nights. Another prisoner named Tsering Dorje was also kept hanging from a ceiling for 7 days.

1- श्वार्ट्ज़, रोनल्ड.पी.–"सर्किल ऑफ प्रोटेस्ट–पॉलिटिकल रिट्युअल इन द टिबेटन अपराइजिंग"पृष्ठ 96–97, 1996

Some prisoners were stripped and tied with a rope".[1]

17 अप्रैल को तिब्बत की आजादी के नारे लगाती हुई13 ननों को गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया । गुर्टज़ा जेल में बन्दी बनाई गई एक नन ने आपबीती प्रताड़ना इस प्रकार व्यक्त की– "When we arrived we were taken to a room. There we were handcuffed & poked and beaten with electric buttons many times. We were also slapped and kicked and hit every where, without mercy. .... Then my name was called out. Four or five soldiers came & tied me with a rope so my hand were at the back of my neck. ....Then they stamped on my back and on my chest. ....I was hit many times with a rifle butt by a prison guard who was Tibetan. ....They hit us mercilessly with wooden sticks and the electric buttons and all of us had blood flowing from our heads".[2]

उपरोक्त कुंछ उदाहरण तिब्बत में मठ उग्रवाद एवं उसके क्रूर चीनी दमन के तरीको को इंगित करते है। तिब्बत में प्रतिदिन इस तरह की सैकड़ों घटनाएं घटती हैं जो तिब्बत के मसले को मानवाधिकार, राष्ट्रीय आत्मनिर्णय की दृष्टि से एक ज्वलंत मुद्दा बना देतीं हैं । उपरोक्त उदाहरणो से एक बात और स्पष्ट हो जाती है कि यदि न सिर्फ ल्हासा बल्कि तिब्बत के दूरदराज के इलाकों में भी राष्ट्र के प्रति ऐसा समर्पण, ऐसी अटूट भक्ति जगाई जा सके तो चीनी दमन का कुचक्र अधिक दिन न चल सकेगा ।

(स) पंचेन लामा की मृत्यु :– तिब्बत के परम्परागत धार्मिक समाज में अनेक लामाओं को अवतार के रूप में चुना जाता है । दलाई लामा एवं पंचेन लामा का चयन भी अवतार के रूप में भी किया जाता है । दसवें पंचेन लामा का जन्म पूर्वी तिब्बत के आम्डो क्षेत्र में कारंग वीधो नामक ग्राम में 1938 ई. में हुआ था । इनकी मृत्यु शिगात्से में 28 जनवरी 1989 को हुई ।

---

1. श्वार्ट्ज, रोनल्ड.पी.–''सर्किल ऑफ प्रोटेस्ट–पॉलिटिकल रिट्युअल इन द टिबेटन अपराईजिंग''– ''मोनेस्टिक मिलीटेन्सी एण्ड पापुलर रजिस्टेन्स'', मोतीलाल बनारसी दास पब्लिशर्स प्रा.लि.दिल्ली, 1996

2. पूर्वोक्त पुस्तक, उपशीर्षक ''प्रोटेस्ट बाई नन्स''

पूर्व वर्ती नवे पंचेन लामा की मृत्यु 1937 में पूर्वी तिब्बत में निर्वासन के दौरान हुई । ल्हासा सरकार से मतवैभिन्य के कारण 1923 में वे वहां आ गये थे । नवे पंचेन लामा की मृत्यु के बाद ताशिलहम्पो के अधिकारियों द्वारा जिंनिंग के निकट दसवें पंचेन लामा की अवतार के रूप में खोज की गई । तिब्बत में प्रथम आदरणीय स्थान दलाई लामा को प्राप्त है द्वितीय स्थान पंचेन लामा को प्राप्त है । पंचेन लामा केन्द्रीय तिब्बत में शिगात्से में तासिलहम्पो मठ के अधिकारी होते हैं । पंचेन लामा को तिब्बती समाज में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त रहा है । उन्होंने सदैव तिब्बती हितों की हिमायत की । जोखांग मंदिर के सामने हजारों तिब्बतियों की भीड़ मे पंचेन लामा ने दलाई लामा की वापसी और तिब्बती स्वतंत्रता के पक्ष में विचार व्यक्त किए । उनके इस कृत्य के लिए उन्हे प्रतिक्रांतिकारी धोषित करते हुए 14 वर्षों के लिए सार्वजनिक जीवन से दूर निर्वासित कर दिया। अपनी मृत्यु से 5 दिन पूर्व अपने अंतिम सार्वजनिक उद्बोधन में उन्होंने तिब्बत के तथाकथित विकास से उपजे दैन्य परिणामों को इंगित किया। इन्हीं तथ्यों को दृष्टि में रखते हुए आम तिब्बती पंचेन लामा की मृत्यु को स्वाभाविक न मानते हुए इसे षड़यंत्र और हत्या मानता है। तिब्बतियों को पंचेन लामा का समर्थन ही वह कारण था जिसके चलते चीन का दलाई लामा के सत्ता केन्द्र के खिलाफ नये सत्ता केन्द्र के रूप में पंचेन लामा को स्थापित करने का प्रयत्न सफल नहीं हुआ। आरंभ से ही पंचेन लामा के पद के प्रति चीनी नीति षड़यंत्रकारी रही है। तेरहवे दलाई लामा और नवें पंचेन लामा के मध्य करों के बंटवारे को लेकर विवाद उत्पन्न हो गया। पंचेन लामा के अधिकारियों ने इस मुद्दे पर चीन से सहायता मांगी, इसी बीच तिब्बत सरकार ने शिगात्से में अपनी सेनाएं भेज दी। इसके बाद नवें पंचेन लामा चीन भाग गये। 1937 में खम क्षेत्र में उनकी मृत्यु के बाद 1941 मे पंचेन लामा के समर्थकों द्वारा तीन वर्ष के बालक गोन्पो सेतेन को दसवें पंचेन लामा के रूप में चुना गया। सन् 1949 में माओत्से तुंग द्वारा पंचेन लामा से चीनी फौजों के कमाण्डर के माध्यम से संपर्क स्थापित किया गया। इसके प्श्चात् पंचेन लामा द्वारा तुंग से तिब्बत को "आजाद" करने की तथाकथित गुजारिश की गई जिसे तिब्बत के लोगों की मातृभूमि चीन से एकाकार होने की इच्छा के रूप में चीन ने विनम्रता से सवीकार कर लिया। जिसके बाद चीन में आजादी और सुधारों के कई दौर आये जो क्रमशः तिब्बती जनता की और अधिक गरीबी, भुखमरी और पिछड़ेपन के परिणामों में प्रकट हुये। वस्तुतः पंचेन लामा के चयन का अधिकार दलाई लामा का होता है। जबकि 10 वे पंचेन लामा का चयन उनके समर्थकों द्वारा तथा मान्यता 1949 में चीनी राष्ट्रपति जुंग-रेन द्वारा प्रदान की गई थी। अंततः 1951 में दलाई लामा ने

पंचेन लामा को तेनजिन ट्रिनले जिगमे चोकी वांग चुक के रूप में मान्यता प्रदान की। सन् 1956 में पंचेन लामा को स्वायत्तशासी क्षेत्र तिब्बत की प्रीपेरेटरी कमेटी का डिप्टी चेअरमेन तथा 1959 में दलाई लामा के भारत पलायन के बाद उन्हें समिति का कार्यकारी चेअरमेन बनाया गया। सन् 1960 में पंचेन लामा चीन के "नेशनल पीपुल्स कांग्रेस" के डिप्टी चेअरमेन बनाये गये। सन् 1962 के करीब उन्होंने चीनी सरकार को कुछ शिकायतें लिखी जिनमें से कुछ के निवारण का आश्वासन उन्हें दिया गया। सन् 1964 में प्रीपेरेटरी कमेटी के सातवें सत्र के दौरान पंचेन लामा पर जनवादी चीनी राज्य, लोगों तथा समाजवाद के विरूद्ध आचरण का आरोप लगाया गया। चेअरमेन पद से बर्खास्तगी के साथ ही उन्हें बीजिंग में नजरबंद कर दिया गया। उन्हें कई अभियानों में हिस्सा लेने के लिए व आत्मालोचना करने के लिए विवश किया गया। सन् 1980 में पुनः डिप्टी चेअरमेन का पद धारण करने के बाद सन् 1982 में वे काफी लंबे समय बाद तिब्बत गये। 28 मार्च 1987 को पंचेन लामा द्वारा नेशनल पीपुल्स कांग्रेस की स्थाई कमेटी के सम्मुख दिये गये भाषण में तिब्बती जनसंख्या के चीनी दमन, तिब्बती धर्म एवं परंपरा के चीनियों द्वारा मजाक उड़ाने (विशेष रूप से दलाई लामा को अपमानित करने वाली फिल्म "कम्पेशन विदाउट मर्सी" को पुरस्कृत किये जाने की घटना) का हवाला देते हुए उनमें संशोधन की मांग की। इसी प्रकार जब तब तिब्बत के प्रति चीनी नीति की आलोचना करते हुए जनवरी 1989 में ताशिलहम्पों में पंचेन लामा की मृत्यु हो गई। पंचेन लामा की मृत्यु को आम तिब्बती जन सहजता से स्वीकार नहीं कर पाया। "इनडिपेंडेंस अपराइजिंग आर्गेनाइजेशन" नामक तिब्बतियों के एक संगठन ने उनकी मृत्यु पर दुख व्यक्त करते हुए संदेहजनक परिस्थितियों में उनकी मृत्यु पर आश्चर्य व्यक्त किया। मृत देह दर्शन के परंपरागत अधिकार की मांग करते हुए चीनी पक्ष पर उनकी हत्या का आरोप भी लगाया गया। पंचेन लामा की मृत्यु को तिब्बत में सुधारों की समाप्ति एवं राजनीतिक शक्तियों के असंतुलन के रूप में देखा गया। दूसरी तरफ जनवादी चीन सरकार ने इस धटना को खासी तवज्जो देते हुए बीजिंग में 15 फरवरी को एक आयोजन किया जिसमें प्रीमियर लीपेंग, प्रेसीडेन्ट यांग शांगकुन, पार्टी सचिव झाओ जियांग इत्यादि ने भाग लिया। चीनी पक्ष द्वारा पंचेन लामा को तिब्बत में सुधारों का प्रणेता और महान चीनी देशभक्त बताया गया। 31 जनवरी को राज्य परिषद द्वारा जारी आदेश के तहत स्पष्ट किया गया कि पंचेन लामा के उत्तराधिकारी की खोज का काम ताशिलहम्पो मोनेस्ट्री की डेमोक्रेटिक मेनेजमेंट कमेटी द्वारा देखा जायेगा। परंपरा अनुसार पंचेन लामा के चयन का अधिकार दलाई लामा का होने के कारण मई 1995 में उन्होंने

तिब्बत के ल्हारी डिस्ट्रिक्ट के नागचु के गेधुन चोकयी निमा को दसवें पंचेन लामा के अवतार के रूप में चयनित किया क्योंकि विभिन्न 'प्रकार के स्वप्नो तथा अन्य संकेतों से पुष्ट या उनका परंपरागत अधिकार था। दूसरी तरफ चीन ने तिब्बत के द्वितीय महत्वपूर्ण पद पर पंचेन लामा की नियुक्ति के मांचु शासकों के प्राधिकार का तर्क रखते हुए अपने अधिकार का दावा प्रस्तुत किया। शीघ्र ही 11वें पंचेन लामा दृश्य पटल से गायब हो गये। 29 नवम्बर 1996 को चीन द्वारा उत्तरी तिब्बत के नागचु क्षेत्र से cyaincain Norbu को ग्यारहवें पंचेन लामा के रूप में चुन लिया गया।

<u>(द) तिब्बत पर मार्शल लॉ– मानवाधिकारों का सवाल :–</u> दिन प्रतिदिन तिब्बत में बढ़ते विरोध प्रदर्शनों तथा चीनी पक्ष द्वारा उनके क्रूर दमन का परिणाम ल्हासा में मार्शल लॉ की घोषणा के रूप में सामने आया। ल्हासा में पीपुल्स आर्म्ड पुलिस की वृद्धिशील नकारात्मक भूमिका एवं पंचेन लामा की मृत्यु ऐसे दो कारण थे जिन्होंने तिब्बती जन विरोध को भड़काया। ल्हासा में मार्शल लॉ की घोषणा के साथ पीपुल्स आर्म्ड पुलिस की भूमिका में कमी आई तथा पीपुल्स लिबरेशन आर्मी ने स्थिति को अपने नियंत्रण में लिया। 7 मार्च को जारी मार्शल लॉ विषयक प्रथम डिकी के तहत सभाओं, प्रदर्शनों तथा कर्मचारियों छात्रों व जन सामान्य द्वारा आयोजित हड़तालों को तो प्रतिबंधित कर ही दिया गया साथ ही हिंसा से निपटने के लिए दंगे फैलाने वाले तत्वों की तथा उनके छिपने के सम्भावित स्थलों की तलाश का अधिकार भी सुरक्षा बलों को दे दिया गया। प्रथम डिक्री के तहत विदेशियों का मार्शल लॉ क्षेत्र में प्रवेश निषिद्ध कर दिया गया तथा वहां पहले से उपस्थिति विदेशियों को क्षेत्र छोड़ने का आदेश दिया गया। ल्हासा के तिब्बती बहुल इलाके में जगह–जगह चैक पांइट्स बनाये गये। तिब्बतियों के लिए बिना पहचान पत्र लिये इधर–उधर घुमना निषिद्ध कर दिया गया। मार्शल लॉ विषयक डिकी नम्बर 3 के तहत ननों तथा लामाओं के लिए मोनेस्ट्री की डेमोक्रेटिक मेनेजमेंट कमेटी द्वारा जारी सनद रखना अनिवार्य कर दिया गया तथा सुरक्षा बलों को सनद न होने की स्थिति में सुरक्षात्मक कदम उठाने का अधिकार भी दिया गया। डिकी नम्बर 3 के तहत भी ल्हासा में प्रवेश करने वाले बाहरी तत्वों के पास काउंटी स्तर के चीनी प्रशासक द्वारा जारी सनदे होना अनिवार्य कर दिया गया तथा ल्हासा क्षेत्र में प्रवेश करने के पांच घंटो के भीतर अस्थाई निवास विषयक औपचारिकताएं पूर्ण करना भी जरूरी कर दिया गया। इन समस्त प्रावधानों का उद्देश्य जितना हिंसा व विरोध प्रदर्शनों पर काबू पाना था उतना ही ल्हासा में स्थानीय तिब्बतियों की धर पकड़ तथाकथित भड़काऊ तत्वों की

शिनाख्त करना भी था यद्यपि इसका उद्देश्य नेतृत्व व अनुशासन कायम करना बताया गया। 8 मार्च को जारी मार्शल लॉ विषयक चतुर्थ आदेश के तहत विदेशी पर्यटकों के लिए टूर कम्पनियों द्वारा प्रायोजित यात्राओं के साथ चीनी गाईड तथा सुरक्षा बलों द्वारा जारी पास का होना अनिवार्य कर दिया गया ताकि पाश्चात्य जगत ल्हासा तथा तिब्बत की वस्तुस्थिति से वाकिफ न हो सकें। पर्यटकों के कई गुटों को मई माह तक चीन मे ही रोके रखा गया ताकि मार्शल लॉ की ज्यादतियों की खबर बाह्य विश्व तक न पहुंचे ।

8 मार्च को ही जारी 5 वीं डिक्री के तहत अलगाववादी गतिविधियों, लड़ाई झगड़ा, तोड़–फोड़, आगजनी में लिप्त लोगों के विषय में जानकारी रखने वालों को इन तथ्यों के विषय में सार्वजनिक सुरक्षा बल को सूचित करने का आदेश दिया गया। इसके लिए प्रत्येक मुखबिर को 300 युआन का पुरस्कार निर्धारित किया गया। साथ ही मुखबिर की सुरक्षा का भी आश्वासन दिया गया। तिब्बत में मार्शल लॉ की धोषणा के साथ जनजीवन और अधिक असामान्य हो गया। सभी विदेशी पर्यटक और संवाददाता निष्कासित कर दिये गये तथा वहां के स्थानीय निवासियों के लिए भी बिना पहचान पत्र के बाहर घूमना प्रतिबंधित कर दिया गया। जोखांग मंदिर तथा पोटाला महल की ओर निशाना साधकर रॉकेट मिसाईलयुक्त ट्रक तथा मशीनगने लगाई गई । मई में समूचे ल्हासा में भारी मिलिट्री वाहनों की आवाजाही काफी बढ़ गई। निहत्थे प्रदर्शनकारियों पर क्रूर बल प्रयोग के एक साल बाद 10 दिसम्बर 1989 को अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार दिवस के अवसर पर तिब्बती प्रदर्शन की पुनरावृत्ति रोकने के उद्देश्य से वहां आर्म्ड पुलिस फोर्स तैनात कर दी गई। 4 मार्च 1990 को पुनः प्रदर्शन की आशंका के वशीभूत होकर ल्हासा में भारी सैनिक साजोसामान से युक्त टेंक तैनात कर दिये गये। 8 मार्च 1990 को ल्हासा में विशाल चीनी सैन्य प्रदर्शन आयोजित किया गया जिसका उद्देश्य तिब्बतियों को डरा धमकाकर घरों में बंद रखना और इस प्रकार किसी भी तरह के विद्रोह की आशंका को समाप्त करना था।

मार्शल लॉ के अधीन पहला तिब्बती विरोध प्रदर्शन 2 सितम्बर 1989 को नोरबुलिंका में आरंभ हुआ। अल्पसंख्यकों की संस्कृति की रक्षा के नाम पर ल्हासा में चीनी प्रशासन द्वारा आयोजित योगहर्ट फेस्टिवल के दौरान छुबसेंग तथा शुंगसेब ननरीज की ननों ने स्टेज पर चढ़कर तिब्बती स्वतंत्रा के लिए नारे बाजी शुरू कर दी। इन्हें तुरन्त ही पब्लिक सिक्यूरिटी ब्यूरों के अधिकारियों द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया तथा ल्हासा म्यूनिसिपल कमेटी के सामने सश्रम पुनर्शिक्षा के लिए पेश किया गया। इस प्रकार तिब्बत में मार्शल लॉ की घोषणा के साथ

गिरफ्तारियों, सश्रम पुनर्शिक्षा के अभियानों तथा कार्यशालाओं द्वारा शिक्षण जैसी गतिविधियों ने जोर पकड़ा। तिब्बत पर मार्शल लॉ की घोषणा मानवाधिकारों के दमन की पूर्व में जारी प्रक्रिया का विस्तृत रूप साबित हुई । यद्यपि चीन अधिशासित तिब्बत में स्थितियां कभी भी सामान्य नहीं रहीं तथापि दलाई लामा को शांति के नोबेल पुरस्कार मिलने एवं तिब्बत में मार्शल लॉ लागू किये जाने के बाद स्थिति बद से बदतर हो गई ।

चीन में देंग शियाओं पेंग के बाद नेतृत्व की नई पीढ़ी सत्तासीन हुई। परन्तु उनका भी तिब्बत के विषय मे वही विचार है जो कि पूर्ववर्ती चीनी राजनेताओं का था कि तिब्बत मातृभूमि का बिछड़ा बालक है जो पुनः मातृभूमि की क्रोड में आ गया है। नतीजतन तिब्बत की आजादी के बात उनके गले नहीं उतरती ।

भूतपूर्व चीनी प्रधान मंत्री ली पेंग की भारत यात्रा (दिसम्बर 1991) के दौरान यह बात स्पष्ट रूप से सामने आई। सन् 1996 में चीनी राष्ट्रपति जियांग जेमिन ने भी यह विचार व्यक्त किया कि तिब्बत की स्वतंत्रता के अलावा अन्य सभी मुद्दों पर वे तिब्बती आंदोलनकारियों से बातचीत के लिए तैयार हैं। सन् 2003 में भारतीय प्रधानमंत्री श्री बाजपेयी की बीजिंग यात्रा के दौरान भी चीन तिब्बत विषयक अपनी नीति पर दृढ़ रहा। भारत एवं चीन के संयुक्त घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर करते हुए चीन ने तिब्बत पर अपने पुराने रूप की पुनरावृत्ति करते हुए स्पष्ट किया कि "वह तिब्बत की आजादी के लिए चीन को तोड़ने की किसी भी कोशिश या कार्यवाही सख्त विरोध करता है।"[1] इस सन्दर्भ में चीनी राजनय प्रशंसनीय है कि उसमें परिस्थितियों का मुकाबला करने की सामर्थ्य है । वे अपनी नीतियों को समय पर ही अंजाम देते हैं, ताकि ठोस परिणाम सामने आए फिर चाहे वह भारतीय विदेश मंत्री श्री अटलबिहारी बाजपेयी की सन् 1989 की चीन यात्रा के दौरान वियतनाम पर भारतीय पैटर्न (सन् 1962) के तरीके की आक्रमण की कार्यवाही हो या भारतीय राष्ट्रपति श्री वैकटरमण की चीन यात्रा के दौरान किया गया आणविक विस्फोट या अप्रैल 1997 में अरूणांचल प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री गेगांग अपांग को बीजिंग मे हो रहे बायो डायवर्सिटी सम्मेलन में निमंत्रित किये जाने पर वीजा देने से इन्कार करना ।[2] (इसका निहितार्थ था कि चीन

(निहितार्थ)

1 जनसत्ता, 25 जून 2003, नई दिल्ली
2 दैनिक भास्कर, इन्दौर, 7 जून 1997

सीमा विवाद में अरूणांचल प्रदेश को चीन का हिस्सा स्वीकार करता है, यदि वह श्री अपांग को भारतीय मुख्यमंत्री के रूप में वीजा दे देता तो उसका यह दावा स्वतः खारिज हो जाता।)

तिब्बत के संदर्भ में भी चीन की यही नीति दृष्टिगोचर होती है। ध्यातव्य है कि चीन ने सिक्किम को भारतीय राज्य के रूप में स्पष्ट मान्यता अभी प्रदान नहीं की है । इस संदर्भ में सिक्किम के रास्ते व्यापार पर सहमति को सिक्किम को भारतीय राज्य के रूप में चीनी मान्यता मिल जाने के कयास को चीन सरकार ने यह कहते हुए सिरे से नकार दिया कि 'इस तरह के प्रश्न रातों रात हल नहीं किये जा सकते।' यह भी संभव है कि चीन सिक्किम को भारतीय राज्य के रूप मे मान्यता देने के पूर्व दलाई लामा के भारत से निर्वासन की शर्त लगा दे । तिब्बत सहित समस्त राष्ट्रीय हित विषयक मामलों पर चीनी विदेश नीति भारतीय विदेश नीति की तुलना में यथार्थ परक है। चीनी राजनय चीन के राष्ट्रीय हितों की परिधि में घटने वाली प्रत्येक घटना पर पैनी दृष्टि रखता है, उसका विश्लेषण करता है और दृढ़ता के साथ उस पर न सिर्फ विचार व्यक्त करता है अपितु परिस्थिति का अपने पक्ष में निर्माण भी करता है। सितम्बर 2003 में रूस का दलाई लामा को वीजा देने से इन्कार करना तथा अमेरिकी विदेश मंत्री की दलाई लामा से भेंट पर चीनी आपत्ति व अमेरिका पर आतंकवाद को समर्थन देने का चीन द्वारा आरोप लगाए जाने पर अमेरिका का तिब्बत को जनवादी चीनी गणराज्य का हिस्सा पुनः घोषित किये जाने की घटना चीनी राजनय की सफलता को इंगित करती है।

तिब्बत के विषय में भारतीय विदेश नीति चीनी विदेश नीति के सम्मुख आज भी निस्तेज है। आवश्यकता इस बात की है कि चीन ने तिब्बत का जो इतिहास लेखन किया है वह प्रक्रिया चीन, अरूणांचल प्रदेश, सिक्किम तथा हिमांचल–उत्तरांचल के अन्य क्षेत्रों के भूगोल को परिवर्तित करके जारी न रख सके। चीन के सम्बन्ध में आश्वस्ति की भावना भारतीय विदेश नीति की कमजोरी सिद्ध हो सकती है।

पंचम स्कन्ध

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति एवं तिब्बत

पंचम स्कन्ध

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति एवं तिब्बत

सन् 1959 में दलाई लामा के तिब्बत से पलायन के बाद से वर्तमान समय तक अनेक अवसरों पर चीन के कब्जे से तिब्बत की मुक्ति का मुद्दा उठाया गया। स्वयं दलाई लामा ने "प्रातिनिधिक राजनय" के तहत चीन से वार्ता का मार्ग प्रशस्त किया। तिब्बती मुद्दे पर विश्व चेतना निरन्तर विकसित हो रही है। गैर सरकारी संगठनों द्वारा तिब्बती मुद्दे को उठाने के लिए जोर शोर से प्रयत्न किये जा रहे है। न सिर्फ एशियाई देश अपितु महाशक्तियों ने भी तिब्बत के मुद्दे पर राजनीतिक प्रतिक्रियायें देना शुरू कर दिया है। तिब्बतियों की दशा एवं राष्ट्रीय अस्मिता बचाने के उनके संघर्ष के मुद्दे पर विश्व के अनेक देशों की संसदों में प्रस्ताव पारित किये है, तिब्बती मुद्दे पर अनेक समर्थन समूह गठित किये गये है। इस परिप्रेक्ष्य में दलाई लामा द्वारा प्रतिपादित पंच सूत्रीय शांति प्रस्ताव को व्यापक अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन प्राप्त हुआ है। कई राष्ट्रों की राजनीतिक पार्टियों तथा संसदों ने तिब्बत मुद्दों को उठाने के लिए स्वर ऊंचे किये हैं। दलाई लामा द्वारा भी तिब्बत मुद्दे के अन्तर्राष्ट्रीयकरण के प्रयत्न जोर–शोर से जारी है। सन् 1978 में दलाई लामा ने पूर्ण स्वतंत्रता की मांग छोड़ते हुए स्वायत्ता के जम्मूकश्मीर पेटर्न (धारा 370) का अवलंबन करते हुए चीन के साथ वार्ता का प्रस्ताव रखा।[1] सितम्बर 1979 में दलाई लामा को धार्मिक नेता के रूप में अमेरिका पहुंचने की अनुमति प्राप्त हो गई परन्तु वहा जाकर तिब्बत समर्थक सोसाईटियो तथा फ्रीडम हाउस (सरीखे कम्यूनिष्ट देशों की साम्राज्यशाही प्रवृत्ति का विरोध करने वाला संगठन) संगठनों की बैठकों तथा अन्य प्रेस कॉन्फ्रेसों में तिब्बती मुद्दा उठाये जाने पर दलाई लामा ने चीन के साथ वार्ताओं के संदर्भ में अपनी स्थिति स्पष्ट की।[2]

सितम्बर 1987 में दलाई लामा ने वाशिंगटन में तिब्बत समस्या के समाधान के लिए पंच सूत्रीय शांति प्रस्ताव रखकर वृहद मात्रा में तिब्बती मुद्दे पर अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन इकट्ठा किया।

---

1. अमृत बाजार पत्रिका, कलकत्ता, 5 जुलाई 1978
2. अमृत बाजार पत्रिका, कलकत्ता, 9 सितम्बर 1987

इस संदर्भ में तिब्बत के अन्य देशों में रहने वाले निर्वासित तिब्बतियों की भूमिका भी काफी महत्वपूर्ण रही। तिब्बती स्वतंत्रता के अपने उद्देश्य के लिए व्यापक जन समर्थन एकत्रित करने के उनके प्रयास सराहनीय है। "नेशनल कमेटी फॉर टिबेट एण्ड पीस इन साउथ ऐशिया" नामक संगठन द्वारा 12–14 अगस्त 1989 के बीच आयोजित सम्मेलन में भी तिब्बत मुद्दे पर अनेक राष्ट्रों के संसदीय एवं गैर सरकारी संगठनों के विचारों का संगठित रूप में विश्व के सामने रखा तथा समकालीन विश्व पटल पर तिब्बत् समस्या को चीन के दृष्टिकोण के विरूद्ध एक अधिकृत राष्ट्र की विडम्बना के रूप में चिन्हित किया । न्याय विदों के अन्तर्राष्ट्रीय आयोग द्वारा भी चीन अधिकृत तिब्बत मे तिब्बतियों के मानवाधिकार हनन पर चिन्ता व्यक्त करते हुए तिब्बतियों के आत्मनिर्णय के अधिकार को मान्यता प्रदान की ।[1]

1. महाशक्तियाँ एवं तिब्बत का मुद्दा :–

तिब्बत का मुद्दा क्षेत्र में महाशक्तियों के अन्तर्ग्रस्त हितों से प्रभावित होता रहा है । अतः इन सन्दर्भों में ही इसे यहां देखने का प्रयत्न किया जायेगा । सन् 1947 में भारतीय स्वतंत्रता के लगभग 2 सालों बाद 1949 में चीन में साम्यवाद की विजय के साथ क्षेत्र में लोकतांत्रिक भारत एवं साम्यवादी चीन के रूप में दो बड़े राष्ट्रों का उदय हुआ । भारत ने गुट निरपेक्षता की नीति का अवलंबन करते हुए पूंजीवादी अमेरिका तथा साम्यवादी सोवियत संघ से समान दूरी का अवलंबन करते हुए पृथक राष्ट्र के रूप में अपनी पहचान कायम की तो साम्यवादी चीन मातृभूमि के कलेवर से उसके पिछड़े बच्चों के सम्मिलन के वृह्तद चीनी राज्य की विस्तारवादी महत्वाकांक्षा को मस्तिष्क में लिए यथार्थ राजनीति के क्षेत्र में अग्रसर हुआ । भारत को एक तरफ अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर नई परिस्थितियों का सामना करना था तो क्षेत्रीय स्तर पर उसका का ही हिस्सा काट कर बनाया गया पाकिस्तान उसके गले की हड्डी बना हुआ था । 1960 के दशक के आरम्भिक वर्षों में भारत चीन के बिगड़ते सम्बन्धों के सन्दर्भ में चीन–पाक संबंधों में नए युग की शुरूआत हुई । पाकिस्तान के साथ चीन के रिश्ते भारत के साथ भूतपूर्व सोवियत संघ की बढ़ती मैत्री के कारण ही नजदीकी में बदले ।

सन् 1962 में भारत को चीन से तथा 1965 व 1971 में पाकिस्तान के साथ युद्ध करना पड़ा । 9 अगस्त 1971 को भारत भूतपूर्व सोवियत संघ के साथ मैत्री संघ से जुड़ा जिसका एक प्रावधान दोनों में से किसी एक पक्ष के आक्रमण का शिकार होने पर दूसरे पक्ष द्वारा प्रतिकार के

---

1. "बुलेटिन ऑफ इन्टरनेशनल कमीशन ऑफ ज्यूरिष्ट्स" नं. 21, दिसम्बर 1964, 42

लिए सैन्य सहायता उपलब्ध कराने सें सम्बन्धित था । दूसरी तरफ पाकिस्तान को चीनी व अमेरिकी सहायता जारी थी ।

सन् 1969 में तिब्बत से दलाई लामा का पलायन व तिब्बत पर साम्यवादी चीन का कब्जा अमेरिकी खेमे को खटका जरूर परन्तु दक्षिण पूर्व एशिया मे अमेरिका की व्यस्तता के चलते कोई सार्थक प्रतिरोध उत्पन्न नहीं हो सका । लगभग इसी समय दलाई लामा के भारत पलायन के सन्दर्भ में चीन ने साम्राज्यवादी षडयंत्र के रूप में सी.आई.ए. की भूमिका को भी चिन्हित किया । लेखक सेनानायके ने "इनसाइड स्टोरी ऑफ टिबेट" नामक पुस्तक में दलाई लामा को तिब्बत की स्थानीय सरकार चलाने तथा साम्यवादी चीन का प्रतिकार करने के लिए सहायता देने के अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रूमेन की पेशकश का उल्लेख किया है ।

यदि इस समय भारत विश्व मंच पर तिब्बती प्रश्न को उठाता तो सम्भवतः विश्व में साम्यवाद के प्रसार को रोकने के मूलभूत पूंजीवादी सिद्धांत के तहत भारत को तिब्बत के परिप्रेक्ष्य में व्यापक सहयोग समर्थन प्राप्त हो जाता और आज भारत को चीन के साथ सीमा विवाद हल करने के लिए परेशान नहीं होना पड़ता क्योंकि तब भारत एवं चीन की सीमाओं के बीच विस्तृत बफरं राज्य के रूप में तिब्बत विद्यमान होता ।

चीन के साम्यवादी राज्य के रूप में उदय ने सम्भवतः सोवियत संघ को साम्यवादी विचारधारा के प्रचार–प्रसार के प्रति आश्वस्त कर दिया था । वह साम्यवादी सिद्धांत के प्रणेता के रूप में चीन को देख रहा था । नवम्बर 1962 में भारतीय राजदूत के सम्मुख मास्को ने यह स्पष्ट कर दिया था कि क्षेत्र में चीन उसके भाई के रूप में है परन्तु छोटे भाई के रूप में नहीं जिसे वह किसी भी बात पर प्रताड़ित कर सके । सन् 1969 मे सोची समझी साजिश के तहत चीन ने तिब्बत पर अधिकार को तिब्बत की सामन्तशाही से मुक्ति व तिब्बती समाज को साम्यवादी किस्म के समाज में ढ़ालने की प्रक्रिया का नाम देते हुए अपने विरोध में उठने वाले आशंकित साम्यवादी स्वर को शांत कर दिया । परन्तु आज परिस्थितियां बदल चुकी हैं । भूतपूर्व सोवियत संघ के रहने के बाद स्थापित एक ध्रुवीय व्यवस्था में तिब्बत में चीन द्वारा मानवाधिकार हनन के मुद्दे पर चीन आलोचना का पात्र बनता रहा है यद्यपि विश्व व्यापार में चीनी अर्थव्यवस्था का वर्चस्व उसके खिलाफ अब भी किसी महाशक्ति को कोई कार्यवाही करने की इजाजत नहीं देता ।

वित्तीय वर्ष 1994–1995 के दौरान अमेरिका में पारित "फॉरेन रिलेशन्स ऑथराइजेशन एक्ट" तिब्बत को एक अधिकृत सम्प्रभु राष्ट्र के रूप में स्वीकार करते हुए दलाई लामा सहित

निर्वासित सरकार को तिब्बतियों का वास्तविक प्रतिनिधि स्वीकार करता है तथा उनके साथ तिब्बतियों के भविष्य के लिए वार्ता करना चाहता है ।

महाशक्ति के रूप मे संयुक्त राज्य अमेरिका से इस तरह की मान्यता प्राप्त करना अहमियत रखता है । इसी एक्ट में यह भी व्यवर्स्था की गई है कि भविष्य में ''राज्यवार रिपोर्टो'' के क्रम में तिब्बत विषयक रिपोर्ट तिब्बत राज्य के नाम से अलग रखी जायेगी । इसमे तिब्बत मुद्दे के विषय में सूचित रहने के उद्देश्य ल्हासा में यूनाईटेड स्टेट इनफार्मेशन ऐजेन्सी स्थापित करने का विचार भी रखा गया । ''फॉरिन आपरेशन एक्सपोर्ट फाइनेन्सिंग एण्ड रिलेटिड प्रोग्राम्स'' विषयक बिल 1995 भारत मे रह रहे चीनी दमन से भाग निकले तिब्बती शरणार्थियों के लिए सहायता राशि उपलब्ध कराने का भी प्रावधान करता है । इस प्रकार तिब्बत के मुद्दे पर अपना रूख जागरूक रखते हुए अमेरिका ने ''हाउस ऑफ रिप्रजेन्टेटिव'' में 15 जून 1994 को रखे प्रस्ताव में चीन के ''मोस्ट फेवर्ड नेशन'' की धारणा पर पुर्नविचार की आवश्यकता बताते हुए मानवाधिकार हनन, कैदियों की चिन्ताजनक परिस्थितियों तथा तिब्बत की धार्मिक, सांस्कृतिक विरासत की रक्षा पर भी अपना ध्यान केन्द्रित किया । वर्तमान में अमेरिका के साथ चीन के सम्बन्ध अपनी व्यापारिक तथा आर्थिक विवशताओं से बंधे हैं परन्तु चीन खराब मानवाधिकार रिकार्ड के चलते आलोचना का पात्र भी बनता रहता है । अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज बुश के साथ दलाई लामा की मुलाकात में बुश ने तिब्बत मे मानवाधिकार उल्लंघन पर चिंता व्यक्त करते हुए तिब्बत के पृथक सांस्कृतिक, धार्मिक, भाषायी अस्मिता की रक्षा के लिए अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त की ।

वर्तमान समय में यूरोपियन पार्लियामेन्ट यूरोप के कूटनीतिक मुद्दों की निर्णायक संस्था है। अधिकृत यूरोपीय महाशक्ति के रूप में यह संस्था चीन के तिब्बत पर कब्जे को अवैधानिक मानती है तथा दलाई लामा सहित तिब्बत की भारत स्थित निर्वासित सरकार को तिब्बती जनता का वास्तविक प्रतिनिधि मानते हुए अन्य विश्व संस्थाओं से दलाई लामा की सरकार को सहयोग समर्थन की अपील तो करती ही है अन्य विश्व सरकारों से दलाई लामा का समर्थन इस प्रकार से करने का आह्वान करती है जिससे वे संयुक्त राष्ट्रसंघ में तिब्बत के मुद्दे पर प्रत्यक्ष रूप से अपना पक्ष रख सकें ।

18 जनवरी 1995 के अपने प्रस्ताव में यूरोपियन पार्लियामेन्ट ने पुनः मानवाधिकारों एवं तिब्बतियों की स्वतंत्रताओं के अपहरण पर चिंता व्यक्त की तथा ''पा नाम समेकित ग्रामीण विकास परियोजना'' पर कार्य तब तक बंद रखने का आह्वान किया जब तक कि गैर सरकारी संगठनों

द्वारा तिब्बत में किए गए विकास कार्यों का वास्तविक ब्यौरा प्राप्त नही हो जाता । स्पष्ट होता है कि "तिब्बत के मुद्दे" पर यूरोपियन प्रतिक्रिया काफी सहानुभूतिपूर्ण है ।

12 अप्रैल 1989 को इटली की संसद के विदेशी मामले विषयक विभाग द्वारा जारी रिपोर्ट में इटली की सरकार से तिब्बत की वर्तमान स्थिति का जायजा लेने, तिब्बत में चीन द्वारा जारी मानवाधिकार उल्लंघन, पर्यावरणिक विनाश की नीति को समाप्त करने के लिए आवश्यक कदम उठाने तथा तिब्बती समस्या के शांतिपूर्ण समाधान के लिए प्रयास करने का आह्वान किया । इस सन्दर्भ में इटेलियन पार्लियामेन्ट ने बयान जारी करते हुए बीजिंग के विदेश नीति एवं चीनी राज्य की सुरक्षा विषयक हितों को ध्यान में रखते हुए तिब्बती क्षेत्र के लिए स्वायत्ता की स्थापना विचार भी सम्मुख रखा । इसके अतिरिक्त इस समस्या को सुलझाने के लिए चीन व इटली के मध्य राजनीतिक, आर्थिक द्विपक्षीय सहयोग स्थापित करने का विचार भी इटली की संसद रखती है ।

आस्ट्रेलिया भी तिब्बत मुद्दे पर शांत नहीं है । 6 दिसम्बर 1990 को सीनेट मे तथा 6 जून 1991 को हाउस ऑफ रिप्रजेन्टेटिव मे बयान जारी करते हुए ऑस्ट्रेलियाई संसद ने स्पष्ट किया कि वह तिब्बत की वर्तमान स्थिति विशेषकर चीन द्वारा तिब्बत में मानवाधिकार उल्लंघन के प्रति गंभीर है । सन् 1959, 1961 एवं 1965 में तिब्बत के सन्दर्भ में जारी संयुक्त राष्ट्र प्रस्तावों की वर्तमान सन्दर्भों मे प्रासंगिकता स्पष्ट करते हुए आस्ट्रेलियाई संसद में दलाई लामा एवं उनके प्रतिनिधियों के शांतिपूर्ण तिब्बती अभियान की प्रशंसा करते हुए जनवादी चीनी गणराज्य की सरकार से बिना पूर्व शर्तों के दलाई लामा से वार्ता करने, मानवाधिकार हनन रोकने तथा इस सन्दर्भ में आस्ट्रेलियाई संसद द्वारा भेजे गए प्रतिनिधि को वस्तु स्थिति से अवगत कराने की अपील की ।

जर्मनी के संसदीय दलों क्रिश्चियन डेमोक्रेट्स, सोशल डेमोक्रेट्स, लिबरल्स एवं ग्रीन पार्टी ने मिलकर 15 अक्टूबर 1987 को तिब्बत में चीन द्वारा मानवाधिकार हनन एवं तिब्बती संस्कृति के लिए खतरे पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए चीनी अधिपत्य के विरूद्ध आवाज उठाते हुए बीजिंग को दलाई लामा के साथ सार्थक संवाद शुरू करने के लिए प्रेरित किया ।

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि वर्तमान युग में तिब्बत की समस्या एक ज्वलन्त मुद्दा है जिस पर विश्व के बड़े राष्ट्र न सिर्फ ध्यान दे रहे है बल्कि हार्दिकतः उसका समाधान भी चाहते हैं । आवश्यकता सिर्फ इस बात की है कि धर्मशाला स्थित तिब्बत की निर्वासित सरकार इस दिशा में अपने कूटनीतिक प्रयासों की तीक्ष्णता एवं तीव्रता बनाए रखे ।

2. तिब्बत और संयुक्त राष्ट्रसंघ :–

सन् 1959 में चीन के साथ एक लम्बे संघर्ष के उपरांत दलाई लामा के पलायन के बाद तिब्बत में स्थितियाँ नियंत्रण के बाहर हो गई । तब इस मुद्दे को संयुक्त राष्ट्रसंघ मे उठाया गया । संयुक्त राष्ट्रसंघ मे अब तक तिब्बत मुद्दे पर तीन प्रस्ताव पारित किए गए हैं ।

प्रथम प्रस्ताव : सन् 1960 में संयुक्त राष्ट्र महासभा के (1353वे) आदेश के तहत विश्व की दूसरी जनसंख्याओं की भांति तिब्बतियों के नागरिक एंव धार्मिक अधिकारों की उपलब्धता एवं तिब्बत की भिन्न सांस्कृतिक, धार्मिक विरासत की सुरक्षा तथा तिब्बती स्वायत्ता के मुद्दे को स्थापित करने का प्रयत्न किया गया । कानून के शासन पर आधारित शांतिपूर्ण विश्व व्यवस्था के विकास के लिए संयुक्त राष्ट्र चार्टर के सिद्धांतों के सम्मान तथा मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा का पालन आवश्यक बताते हुए इस प्रस्तावं मे चीन से तिब्बती जनों के मूलभूत मानवाधिकारों एवं विशिष्ट सांस्कृतिक–धार्मिक जीवन की परम्परा को बनाए रखने का आग्रह किया गया ।

द्वितीय प्रस्ताव : सन् 1961 मे संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा तिब्बत मुद्दे पर पारित (1723 वें) प्रस्ताव में पहले की ही भांति तिब्बत मे मानवाधिकार उल्लंघन की घटनाओं, तिब्बतियों के विशिष्ट सांस्कृतिक धार्मिक जीवन व परम्पराओं के दमन एवं तिब्बतियो पर चीन द्वारा ढ़ाई जा रही कठोरताओं पर चिन्ता व्यक्त करते हुए, दमन से बचने के लिए तिब्बतियों द्वारा तिब्बत से पड़ौसी देशों मे किए जा रहे शरणार्थी के रूप में पलायन के लिए चीनी पक्ष को दोषी ठहराया गया । अपने इसी प्रस्ताव मे संयुक्त राष्ट्रसंघ ने निरन्तर मानवाधिकार हनन की घटनाओं से संयुक्त राष्ट्र चार्टर एवं मानवाधिकारों क़ी सार्वभौम घोंषणा को क्षति पहुंचने व इससे व्यक्तियों व राष्ट्रों के आत्मनिर्णय के सिद्धांत को चोट पहुंचने तथा इससे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर व वैयक्तिक स्तर पर तनाव बढ़ने जैसे दुष्प्रभावों की चर्चा करते हुए तीन अपीलें की ।

प्रथम, कानून के शासन पर आधारित शांतिपूर्ण विश्व व्यवस्था के लिए संयुक्त राष्ट्र चार्टर व मानवाधिकारों की सार्वभौम घोंषणा के प्रति सम्मान की भावना बनाई जाए ।

द्वितीय तिब्बत में चीन द्वारा तिब्बतियों के मानवाधिकार, स्वतंत्रता एवं आत्मनिर्णय के अधिकार को चुनौती देने वाली घटनाओं की पुनरावृत्ति रोकी जाए ।

तृतीय सदस्य राष्ट्रों से प्रस्तुत प्रस्ताव की घोंषणा के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए सभी सम्यक प्रयास करने पर बल दिया जाए ।

तृतीय प्रस्ताव : मानवाधिकार एवं मूलभूत स्वतंत्रताओं के विचार को ध्यान में रखते हुए 21 अक्टूबर 1959 तथा 20 दिसम्बर 1961 के तिब्बत मुद्दे पर पूर्व में लाए गए संयुक्त राष्ट्र प्रस्तावों को बल प्रदान करते हुए संयुक्त राष्ट्रसंघ ने 2079 क्रमांक का तृतीय प्रस्ताव सन् 1965 में संघ के पटल पर रखा । एक बार पुनः चीन द्वारा तिब्बत मे जारी हिंसा, स्वतंत्रताओं के अपहरण एवं मानवाधिकार उल्लंघन पर चिंता व्यक्त करते हुए उपरोक्त प्रस्ताव में संयुक्त राष्ट्रसंघ मे तिब्बत मे मानवाधिकार हनन रोकने, शांतिपूर्ण कानून आधृत विश्व व्यवस्था बनाने, तिब्बतियों की विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान बनाए रखने एवं सभी सदस्य राष्ट्रों से वर्तमान प्रस्ताव के उद्देश्यों को हासिल करने के लिए क्रियाशील होने का आह्वान किया गया ।[1]

संयुक्त राष्ट्र मे तिब्बत विषयक इस अपील का तिब्बती जनों हित मे भारत ने भी समर्थन किया । तिब्बत में मानवाधिकार उल्लंघन की घटनाओं को इंगित करते हुए भारत ने तिब्बतियों के विनाश पर आमादा चीन सरकार का विरोध किया ।[2]

तिब्बत विषयक संयुक्त राष्ट्रसंघ के तीनों प्रस्तावों से एक विचार स्पष्ट होता है कि संयुक्त राष्ट्रसंघ अपने घोंषणा पत्र के उद्देश्यों को पूरा करते हुए आक्रमणकारी चीन द्वार विजित तिब्बत में मानवाधिकार उल्लंघन एवं संस्कृति को नष्ट करने के प्रयास को गलत मानते हुए चीन से इस दिशा मे सहयोग की आशा रखता है यद्यपि इस आशय की पूर्ति कितनी हो सकती है इसका आकलन विश्व चीन के आज तक के कूटनीतिक व्यवहार को देखकर लगा सकता है ।

3. तिब्बत के प्रति एशिया का दृष्टिकोण :–

तिब्बत के प्रति एशियाई देशों का दृष्टिकोण तिब्बत मे मानवाधिकार हनन की घटनाओं एवं एशियाई देशों के चीन के साथ संबंधों की तुला पर तुलता है । तिब्बत के मुद्दे पर भारत का रवैया जगजाहिर है । पाकिस्तान क्षेत्र में चीन का कूटनीतिक संबंधी है, कश्मीर मुद्दे पर उसे चीन का समर्थन प्राप्त होता रहा है , चीन पाकिस्तान को वृह्द सैन्य व आणविक सहायता उपलब्ध करवाता रहा है । अतः तिब्बत मुद्दे पर आधिकारिक तौर पर पाकिस्तान से चीन के विरोध की उम्मीद रखना दिवा स्वप्न की भांति है ।

---

1. कुमार आनन्द ''टिबेट – ए सोर्स बुक'', 'यू.एन.रिजोल्यूसन ऑन टिबेट', पृष्ट 293–295, रेडियेन्ट पब्लिशर्स, 1995

2. यू.एन डाक्यूमेन्ट्स ए/पी.वी. 1394 पैरा 38, पैरा 40, 14 दिसम्बर 1965

म्यांमार हिन्द महासागर तक पहुंचने की चीनी अभिलाषा का माध्यम है । चीन की अस्त्र निर्यात एंव आर्थिक सहायता की नीति ने इसे गुटनिरपेक्ष राज्य से चीन के ''क्लाइंट स्टेट''में परिवर्तित कर दिया है । यही हाल नेपाल का है । क्षेत्र मे कहीं भारत का बढ़ता प्रभाव नेपाल पर हावी न हो जाए इस भय से नेपाल भारत के विरूद्ध ''चीनी कार्ड'' का उपयोग करता है । हालांकि तिब्बत के चीन में सम्मिलन से तिब्बत की चीन व नेपाल के मध्य बफर राज्य की भूमिका समाप्त हो गई है और इससे नेपाली सीमाएं भी कम्युनिस्ट प्रसार से असुरक्षित हैं तथापि नेपाल स्वयं को भारत की तुलना में चीन के अधिक निकट समझता है और तिब्बत विषयक उसकी प्रतिक्रियाओं मे यह स्पष्टतः झलकता है ।

सन् 1967 मे क्षेत्र मे साम्यवादी प्रसार की आकांक्षाओं से भयाक्रांत कुछ दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों द्वारा 'ऐशियान' की स्थापना की गई । निक्सन सिद्धांत के प्रतिपादन तथा इन्डोचाइना क्षेत्र से यू.एन.फौजों की वापसी के बाद आशंकित सोवियत हस्तक्षेप से भयाक्रांत दक्षिणय पूर्वी एशियाई देशों ने चीन से संबंधों के सामान्यीकरण पर बल दिया। मलेशिया ने सन् 1974 मे तथा फिलिपीन्स व थाईलैन्ड ने 1975 में चीन के साथ सम्बन्धों के सामान्यीकरण की शुरूआत की । इसके पूर्व क्षेत्र मे मलेशिया फिलिपीन्स द्वारा अगस्त 1965 मे माल्टा, निकारागुआ, आयरलैन्ड एवं अल सल्वाडोर के साथ मिलकर चीन के अधीन तिब्बत मे मानवाधिकार उल्लंघन पर प्रस्ताव प्रस्तुत किया था ।

क्षेत्र मे चीन की वृह्रद सैन्य व आर्थिक क्षमताएं दक्षिणपूर्व एशिया के देशों के नीति निर्धारण मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं । चीन का वृद्धिशील आर्थिक वर्चस्व एशियाई देशों को पर्दे के पीछे की कूटनीति करने को प्रेरित करता है । एशियान का यह स्पष्ट मत है कि उनकी घरेलू समस्याओं की ही भांति चीन की भी घरेलू समस्याएं हैं और उनसे निपटने के लिए चीन कोई भी तरीका अपनाने को स्वतंत्र है । यहां ध्यातव्य है कि चीन प्रत्येक मंच पर तिब्बत को अपना घरेलू मामला घोंषित करता रहा है । यही बात जापान, कारिया जैसे बड़े एशियाई देशों के सन्दर्भ में भी लागू होती है । एशियाई वित्तीय संकट,के दौरान जहां एक ओर ज्यादातर एशियाई अर्थव्यवस्थाएं संकट के दौर से गुजर रहीं थीं वहीं चीन ने इस संकट के प्रबंधन में जापानी अर्थव्यवस्था के आगे खड़े रहने का साहस उठाया । उपरोक्त संकट के दौरान अवमूल्यनात्मक नीति न अपनाते हुए उल्टे थाइलैन्ड, हांगकांग, दक्षिण कारिया तथा इण्डोनेशिया इत्यादि को सहायता समर्थन प्रदान कर चीन ने विश्व व्यापार संगठन के लिए अपनी पात्रता प्रदर्शित की एवं अपना आर्थिक

कद ऊँचा करते हुए अमेरिका से महत्वपूर्ण व्यापार प्रतिभागी के रूप मे मान्यता पाने का प्रयास भी किया परन्तु इन दोनो बातों से ऊपर क्षेत्र मे जापान जैसी अर्थव्यवस्थाओं पर चीनी वर्चस्य की स्थापना करके चीन ने तिब्बत तथा अपने घरेलू मामलों मे मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों पर आवरण डालने का प्रयत्न किया । यद्यपि इसके बाद भी अनेक विश्वमंचों से चीन के खराब मानवाधिकार रिकार्ड पर आवाज़ें उठती रही हैं । 20 से 26 जनवरी 1995 को हेग में सम्पन्न गैर प्रातिनिधिक देशों व लोगों के संगठन की चौथी महासभा के पांचवे सत्र के दौरान दलाई लामा एवं उनकी निर्वासित सरकार द्वारा तिब्बत मुद्दे पर शांतिपूर्ण, अहिंसात्मक संघर्ष की प्रशंसा करते हुए तिब्बतियों के मानवाधिकार उल्लंघन एवं तिब्बतियों के अस्मिता संकट पर चिन्ता व्यक्त करते हुए तिब्बत पर चीनी कब्जे से उत्पन्न कई समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित किया गया । भारत मे पढ़ रहे तिब्बती बच्चों की तिब्बत वापसी से उत्पन्न अधूरी शिक्षा की समस्या, तिब्बत मे बसे चीनियों द्वारा तिब्बती संस्कृति के दोहन एवं उससे उत्पन्न तनाव की समस्या तथा तिब्बतियों पर जबरदस्ती जनसंख्या नियंत्रण के उपाय अपनाने की बाध्यता इत्यादि पर जनवादी चीनी सरकार की अलोचना करते हुए सम्मेलन ने लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित दलाई लामा की निर्वासित सरकार के प्रति आस्था व्यक्त करते हुए उसे 6 मिलियन तिब्बतियों की वास्तविक प्रतिनिधि सरकार की मान्यता प्रदान की तथा मानवाधिकार मुद्दों पर वस्तु स्थिति निर्णायक मिशन गठित करने का सुझाव भी प्रस्तुत किया ।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि तिब्बत के मुद्दे के प्रति एशिया का दृष्टिकोण उतना जागरूक नहीं है जितना कि उसे होना चाहिए । आर्थिक एवं सामरिक विवशताएं प्रत्येक एशियाई देश को चीन के साथ संबंध निर्धारण के लिए प्रेरित करती हैं और इसमे तिब्बत का मुद्दा कहीं पीछे छूट जाता है ।

4. तिब्बत के प्रति विश्व–समाज का दृष्टिकोण :–

वर्तमान साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद विरोधी विश्व में तिब्बत का मुद्दा एक ज्वलन्त मुद्दा है शनैः–शनैः विश्व समाज इसके प्रति जागरूक हो रहा है । अनेक सरकारी तथा गैर सरकारी संगठन पूरे विश्व मे तिब्बती स्वतंत्रता की मांग के लिए एक जुट हो रहे हैं। चीन का तिब्बत पर कब्जा तथा उसके द्वारा किया जा रहा तिब्बतियों का शोषण दक्षिण अफ्रीका की 'एपारथीड' नीति की याद दिला देते हैं । श्री एम.एल.सोढ़ी ने ''द इन्टरनेशनल कन्वेन्शन ऑन टिबेट एण्ड पीस इन साउथ एशिया'' नामक सम्मेलन में तिब्बत की समस्या के समाधान के लिए यूरोपियन,

एशियन, एफ्रोएशियन तथा लैटिन अमेरिकन मूवमेन्ट के एकत्रीभूत स्वरूप की आवश्यकता इन शब्दों व्यक्त की "The real apartheid is in Tibet. So item one is apartheid. Item no. two is the peace movement..........This wonderful peace movement which was built up in Europe needs now to take Tibet in to its ebrace. Tibet and European peace movement and the Asian peace movement and the AfroAsian peace movement and the Latin American peace movement should all become one and we must ensure that Tibet is seen in this context. It Tibet remains as it is an integral part of China's war system the third world war will take place in Asia. If it becomes an Asian Switzerland we can find a way out of this syndrome of war & violance." अस्तु श्री सोढ़ी का विचार है कि तिब्बती समस्या के समाधान के लिए पूरे विश्व समाज का सहयोग अपेक्षित है ।

आज तिब्बत का मुद्दा उतना "एकान्तिक" नहीं । विश्वभर की राजनैतिक पार्टियां, गैर सरकारी संगठन इस मुद्दे पर अपनी राय कायम कर चुके हैं । 23 अगस्त 1988 को भारतीय संसद के 212 सदस्यों (जो कांग्रेस आई, जनता पार्टी, लोक दल, लोक दल 'ब', जन मोर्चा, तेलगुदेशम पार्टी, मुस्लिम लीग, अकाली दल, ए.आई.डी.एम.के., नेशनल कान्फ्रेन्स, भारतीय जनता पार्टी, असम गणपरिषद इत्यादि दलों से सम्बद्ध थे) ने दलाई लामा के तिब्बत विषयक पंचसूत्रीय शांतिप्रस्ताव का समर्थन करते हुए इसे तिब्बत के संघर्ष के समाधान का महत्वपूर्ण उपाय घोंषित किया तथा चीन से आह्वान किया कि वह चीन तथा तिब्बत दोनों के हित में इस प्रस्ताव पर सकारात्मक रूख अपनाए ।

इसी सन्दर्भ मे 9 मार्च 1989 को भारतीय संसद के सभी सदस्यों ने तिब्बत पर मार्शल लॉ लागू किए जाने के मुद्दे पर चीन की आलोचना करते हुए चीनी प्रधानमंत्री ली पेंग को तिब्बत पर की जा रही दमनात्मक कार्यवाही बंद करने की अपील की । इटली, स्विट्जरलैन्ड, आस्ट्रेलिया ब्रिटेन तथा अमेरिका की व्यवस्थापिका सभाओं द्वारा दलाई लामा के तिब्बती समस्या के समाधान विषयक दृष्टिकोण की पुष्टि की गई ।

फ्रांस सोशलिस्ट पार्टी तिब्बत की समस्या को मानवाधिकार हनन से सम्बद्ध मानती है।

तिब्बत के उपनिवेशीकरण, सैन्यीकरण तथा पर्यावरण असन्तुलन के प्रति गम्भीर चिंता व्यक्त करते हुए पार्टी चीन तथा तिब्बत के मध्य समझौता वार्ताओं के आरम्भ करने का सुझाव देती है ।
जर्मनी की फ्री डेमोक्रेटिक पार्टी तिब्बत की समस्या को एक देश द्वारा दूसरे देश पर आक्रमण, दमन एवं विभेदकारी नीतियों से उत्पन्न समस्या मानती है । तिब्बती समस्या के निराकरण के विषय में हल सुझाते हुए वह तिब्बतियों क़ो आत्मनिर्णय का अधिकार देने की दिशा मे प्रयत्न करने पर बल देती है ।

फ्रांस स्थित संगठन '' "Tibet Libre" जो तिब्बतियों के वैध अधिकारों का समर्थन संगठन है वह तिब्बती समस्या के समाधान के लिए एशियाई देशों के समर्थन सहयोग की अपेक्षा करता है । उसका मानना है कि अन्य देशों की तुलना मे भारत तिब्बती देशों की स्वतंत्रता के लिए बहुत कुछ कर सकता है ।

फ्रांस स्थित एक अन्य संगठन "Comite De Soutien Au Peuple Tibetain" भी तिब्बती स्वतंत्रता में भारतीय सहयोग के विचार का समर्थन करता है ।

अमेरिका स्थित संगठन ''ह्यूमेनिटास'' तिब्बत की समस्या को उपनिवेशवाद, मानवाधिकार उल्लंघन की समस्या के रूप मे रूपायित करता है । वह तिब्बत को अधिकृत राज्य का दर्जा देते हुए चीनियों द्वारा तिब्बती जनों एवं उनकी संस्कृति के विनाश पर अंकुश लगाने का आह्वान करता है । संगठन यह भी मानता है कि तिब्बती स्वतंत्रता के सन्दर्भ मे अन्तर्राष्ट्रीय जुड़ाव विशेष रूप से भारत का पूर्ण समर्थन अपेक्षित होगा । इटली का 'मीटिंग फॉर फ्रेन्डशिप अमंग पीपुल्स एसोसिएशन' नामक संगठन तिब्बत की समस्या को स्वतंत्रता एवं अधिकारों के संकट के रूप मे देखता है और चाहता है कि भविष्य का स्वतंत्र तिब्बत दलाई लामा के निर्देशन में कार्य करे ।

तिब्बती समस्या से सम्बन्धित संगठन विश्वव्यापी स्तर पर कार्यरत है । भारत मे भी इस प्रकार के अनेक संगठन कार्यरत हैं । ''नेशनल कमेटी फॉर टिबेट एण्ड पीस इन साउथ एशिया'' तथा ''हिमालय बचाव सम्मेलन'' इत्यादि प्रमुख संगठन हैं । इन संगठनों का प्रमुख कार्य तिब्बत की समस्या पर जन जागृति पैदा करना है । हिमालय बचाव सम्मेलन 1989 मे नई दिल्ली मे आयोजित किया गया । तिब्बती जनों के साथ अपनी भावनाएं एकाकार करते हुए सम्मेलन ने तिब्बती स्वतंत्रता के लिए प्रस्ताव पारित किया । नेशनल कमेटी फॉर टिबेट एण्ड पीस इन साउथ एशिया'' नामक संगठन के तत्वावधान मे 12 से 14 अगस्त 1989 को नई दिल्ली मे एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमे उपस्थित विभिन्न विद्वानों ने तिब्बत से संबंधित

विभिन्न मुद्दों पर, तिब्बत मे जारी मानवाधिकार हनन, पर्यावरण असन्तुलन, तिब्बती सभ्यता एवं संस्कृति के विनाश पर चिन्ता व्यक्त करते हुए दलाई लामा द्वारा प्रस्तुत पंच बिन्दु फार्मुले पर सहमति व्यक्त करते हुए तिब्बत की चीन से मुक्ति पर आम सहमति कायम की ।[1]

उपरोक्त संगठनों के अलावा तिब्बत मुद्दे पर विश्व समाज के जागृत दृष्टिकोण की झलक हमें समय–समय पर आयोजित राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संसदीय सम्मेलनों मे पारित प्रस्तावों से भी मिलती है ।

यूरोपीय सांसदों के वेस्टमिन्स्टर पैलेस मे 3–4 मई 1993 को सम्पन्न एक्शन कान्फ्रेन्स ने चीन का तिब्बत पर कब्जा गैर वैधानिक करार दिया और इसे तिब्बती समस्या का मूल कारण बताया । तिब्बत के मातृभूमि चीन का हिस्सा होने के तर्क को भी अस्वीकार कर लिया गया । इस सम्मेलन ने न सिर्फ तिब्बत मुद्दे के प्रति संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग एवं अन्य स्तरीय संस्थाओं का उद्भ्बोदन किया बल्कि यह भी मत व्यक्त किया कि तिब्बत की निर्वासित सरकार को संयुक्त राष्ट्र महासभा मे अपना पक्ष स्पष्ट करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग मिलना चाहिए तथा इस संदर्भ में ब्रिटेन को चीन के साथ तिब्बत की निर्वासित सरकार के संबंध निर्धारण के परिप्रेक्ष्य मे वातावरण निर्माण मे महत्वपूर्ण भूमिका निभानी चाहिए ।

भारतीय सांसदों द्वारा अगस्त 1993 मे आयोजित सम्मेलन मे तिब्बती स्वायत्ता के मुद्दे पर चर्चा करते हुए भारत पर तिब्बत की समस्या के हल के लिए प्रथम कदम उठाने की जिम्मेदारी डालते हुए चीनी जनवादी गणराज्य व दलाई लामा के मध्य सम्बन्ध स्थापना के मुद्दे पर बल दिया।

तिब्बत मुद्दे पर विश्व संचेदना जागृत करने के प्रयत्नों मे 20 मार्च 1994 को अस्तित्व मे आया नई दिल्ली एक्शन प्लान अपने कलेवर मे अनन्त सम्भावनाएं समेटे हुए है । इसमें तिब्बत मुद्दे के हल के लिए दस मूल बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित किया गया है जो इस प्रकार है –नं. 1. तिब्बती मुद्दे के समाधान के लिए संसद को ज्ञापन सौपे जाएं, 2. सरकारों पर दबाव डाला जाए, 3. उपराष्ट्रीय एवं स्थानीय सरकारों को मुद्दे पर एकजुट किया जाए, 4. चीन एवं तिब्बत के लिए प्रतिनिधि मण्डल निर्धारित किए जाए, 5. चीनी दूतावास को प्रतिनिधि भेजे जाएं, 6. निर्वासित तिब्बती सरकार एवं उसके समर्थकों को समर्थन दिया जाए, 7. अन्तर संसदीय समुदायों का चेतना

---

1. "टिबेट एण्ड पीस इन साउथ एशिया," पब्लिशर नेशनल कमेटी फॉर टिबेट एण्ड पीस इन साउथ एशिया, नई दिल्ली, 1991

जगाने मे उपयोग किया जाए, 8. दलाई लामा की यात्राओं को प्रोत्साहित किया जाए ताकि तिब्बत मुद्दे पर विश्व जनमत तैयार किया जा सके, 9. अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं को लक्ष्यित किया जाए, 10. चीन मे व तिब्बत मे मानवाधिकारों को प्रोत्साहन दिया जाये ।[1]

यदि उपरोक्त प्रयासों को पूर्णता के साथ लागू किया जाए तो तिब्बत मुद्दे पर न सिर्फ विश्व जनमत जागृत किया जा सकता है बल्कि तिब्बत की समस्या को कुछ हद तक हल भी किया जा सकता है । मानवाधिकार मुद्दों के अलावा तिब्बत के सन्दर्भ मे जारी संयुक्त राष्ट्र प्रस्तावों (1353 (XIV), 1723 (XVI), 2079 (XX),) को भी लागू किये जाने की आवश्यकता है ताकि तिब्बत की पहचान को बनाए रखा जा सके । इस सन्दर्भ मे बेल्जियम की संसद के निम्न सदन द्वारा जारी प्रस्ताव ध्यातव्य है जिसमे तिब्बती लोगों के आत्मनिर्णय के अधिकार तथा तिब्बत को शांति क्षेत्र घोषित करने एवं तिब्बतियों को अपने ही देश मे अल्पसंख्यक बनने से रोकने जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों को उठाया गया है ।

उपरोक्त विवेचन से एक बात स्पष्ट हो जाती है कि सन् 1959 के मुकाबले तिब्बत को लेकर आज विश्व जनमत तुलनात्मक रूप से अधिक संवेदनशील है । मानवाधिकार, राष्ट्रों के आत्मनिर्णय के अधिकार के वृद्धिशील सम्प्रत्ययों की संचेतना से सम्पन्न विश्व का कोई भी बौद्धिक व्यक्ति या राष्ट्र तिब्बत की समस्या से आँख नहीं मूंद सकता । चीनी कब्जे मे कराहता तिब्बत आज विश्व के सम्मुख बड़ी चिन्ता के रूप में विद्यमान है ।

---

1. कुमार, आनन्द ''टिबेट–ए सोर्स बुक'' रेडिएन्ट पब्लिशर्स नई दिल्ली 1995

षष्ठ स्कन्ध

तिब्बत चीन का अधिशासित राज्य
एवं
उसकी वर्तमान स्थिति

षष्ठ स्कन्ध

तिब्बत–चीन का अधिशासित राज्य व उसकी वर्तमान स्थिति

जब कोई राष्ट्र किसी अन्य राज्य द्वारा जबरदस्ती अधिकृत कर लिया जाता है तो उसकी अस्मिता के लिए संकट उत्पन्न हो जाता है .। न तो उसकी सभ्यता, संस्कृति सुरक्षित रहती है न मान्यताएं। भाषा, साहित्य, पर्यावरण, शिक्षा, राजनीतिक व्यवस्था, कानून अर्थात् मानव जीवन संबंधित प्रत्येक पक्ष शासक राज्य की धारणाओं के अनुकूल परिवर्तित हो जाता है । यह बात चीन के अधिशासित राज्य तिब्बत के विषय में भी सत्य है । निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत इस स्थिति को विश्लेषित किया जायेगा ।

<u>1. जनसंख्या स्थानांतरण एवं जनसंख्या नियंत्रण</u> :– सन् 1949 के चतुर्थ जेनेवा कन्वेशन के तहत किसी राष्ट्र द्वारा अधिकृत किसी क्षेत्र मे अपने नागरिकों का स्थानांतरण अंतर्राष्ट्रीय कानून का उल्लंघन माना गया है । तथापि तिब्बत के अधिग्रहण के साथ ही चीन ने भारी संख्या में वहां हान जनसंख्या को बसाना आरम्भ कर दिया । प्रीमियर चाऊ एन लाई ने चीनियों की वृह्वद जनसंख्या एवं उनकी विकसित संस्कृति व अर्थव्यवस्था के कारण उन्हे तिब्बत मे विकास कार्य के लिए बसाने का समर्थन किया था । चीन की जनसंख्या स्थानान्तरण की यह नीति लगातार जारी रही । फरवरी 1985 में नई दिल्ली स्थित चीनी दूतावास ने स्पष्ट किया कि "न सिर्फ तिब्बत बल्कि विरल जनसंख्या वाले सभी प्रदेशों के लिए यह जनवादी चीनी गणराज्य की नीति है कि जनसंख्या की कमी व पर्यावरणिक असन्तुंलन को सुधारने के लिए जनसंख्या स्थानान्तरण की नीति अपनाई जाए । 27 सितम्बर 1988 के "टाइम्स ऑफ इण्डिया" के अंक ने तिब्बत स्वायत क्षेत्र के गवर्नर माओ रूबाई को क्षेत्र मे 1 मिलियन चीनी सेटलर्स (मिलेट्री कर्मचारियों की संख्या शामिल नहीं है) होने के दावे के साथ उद्रत किया गया । इस प्रकार की खबरें भी आती है ि कइस प्रकार के जनसांख्यिक स्वरूप से कभी–कभी सुरक्षा के भयंकर खतरा उत्पन्न हो जाता है । चीन से तिब्बत में जाकर बसने के लिए चीनियों को अतिरिक्त बोनस, हाई आल्टीट्यूड एलाउन्स, अच्छे स्कूल, निवास तथा 18 महिने के कार्य के बाद चीन में बिताने के लिए तीन माह का अवकाश दिया जाता है ।

सन् 1980 मे हू–याओं बांग की तिब्बत यात्रा के पश्चात् तिब्बत स्वायत्तशासी क्षेत्र मे चीनी सेटलर्स की जनसंख्या की कम करने की नीति अपनाई गई ताकि क्षेत्र मे आर्थिक विकास का

वास्तविक लाभ तिब्बतियों को मिलता रहे । हू द्वारा आश्वासित संख्या के 85 प्रतिशत तक चीनी केडर वहां से वापस बुला लिये गये । इस समय सिर्फ तकनीकी अर्हकों को ही तिब्बत स्वायत्तशासी क्षेत्र में भेजा गया, सामान्य कर्मचारियों को नहीं ।

सन् 1987, 1988 एवं 1989 के तिब्बती जनप्रदर्शनों के पीछे एक बड़े क्षेत्र मे चीनियों की भारी मात्रा मे बसाहट थी जिसके कारण तिब्बती अपने ही राष्ट्र मे अल्पसंख्यक होते जा रहे थे। सन् 1992 में ल्हासा को विशेष आर्थिक क्षेत्र घोंषित करने के साथ ही स्किल्ड एवं अनस्किल्ड चीनियों की बसाहट पुनः आरम्भ हो गई। आधारभूत संरचनाओं की स्थापना, मार्गो के निर्माण तथा खुली अर्थव्यवस्था की स्थापना से तिब्बत आकर बसने वाली चीनी जनसंख्या में अपार वृद्धि हुई।

''गोल्डन ब्रिज लीडिंग इन टू ए न्यू इरा'' नामक पुस्तक मे तृतीय तिब्बती वर्क फोरम के निर्णयों को तिब्बती स्वायत्तशासी क्षेत्र की कम्यूनिस्ट पार्टी ने इन शब्दों मे उल्लेखित किया "The Focal point of the policy of opening the door wider in Tibet should be to want the inner part of the country (Interior China). We should encourage, readdress investment, economic units and individuals to enter our region to run different sorts of enterprises. By taking experiences from the past we must obtain a contingent of cadres from different nationalities who will work in Tibet permanently."[1] .

जाति या भेद–भाव निरोधी संयुक्त राष्ट्र की समिति ने जनसंख्या स्थानान्तरण की इस नीति पर टिप्पणी करते हुए स्पष्ट किया, "concerning incentives granted to members of han nationality to settle in autonomous areas as this may result in substantial changes in the demographic composition and in the character of local society of these areas..........china must review the policies that may result in a substantial alteration jin the demographic composition of autonomous areas."

न सिर्फ जनसंख्या स्थानान्तरण की नीति से तिब्बत के जनसंख्यात्मक स्वरूप पर विपरीत

1 .''गोल्डन ब्रिज लीडिंग इन टू ए न्यू ऐरा'', टी.ए.आर. पीपुल्स पब्लिसिंग हाउस, बीजिंग अक्टूबर 1994

प्रभाव पड़ा अपितु तिब्बती जनसंख्या पर जबरदस्ती जनसंख्या नियंत्रण के उपाय अपनाने पर जनसंख्या का स्वरूप प्रभावित हुआ । 5 नवम्बर सयन् 1987 को तिब्बत स्वायत्त क्षेत्र के परिवार नियोजन विभाग द्वारा निम्नोक्त रिपोर्ट जारी की गई, "There are 104024, women of child bearing age . Out of them 22634 have already under gone birth control operations, constituting 30% of women ion the TAR of child bearing age. In 1985 after the siensce of family planning was announced in the countryside and pastoral areas, there has been a perceptible change in the mental outlook and birth rates in these areas. In 1986 19% of women in Nyingri, Lhokha and shigatse were sterilized."

इस सन्दर्भ में चीन की आधिकारिक घोषित नीति कुछ और ही कहती है लेकिन इस सन्दर्भ मे शासक देश द्वारा प्रस्तुत आंकड़े विश्वसनीय नहीं हुआ करते । वह तो हर प्रकार से अधीन देश के जनसांख्यिक, भाषायी, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं सामाजिक स्वरूप को बदलने की चेष्ठा करता है ।

2. <u>तिब्बत की सांस्कृतिक विरासत</u> :

सन् 1956 में पूर्वी तिब्बत में आरम्भ हुए लोकतांत्रिक सुधारों से आरम्भ हुई। तिब्बत के सांस्कृतिक विनाश की प्रक्रिया सन् 1966 की सांस्कृतिक क्रांति एवं उसके बाद तक जारी रही । साम्यवादी चीन की विचारधारा में तिब्बत जैसे धर्माधृत राज्य की धार्मिक परम्पराओं एवं सांस्कृतिक जीवन शैली के प्रति आदर तो पहले ही नहीं था, लोक तांत्रिक सुधारों के नाम पर उस पुरातन परम्परा मे सीधे–सीधे हस्तक्षेप का अधिकार अब उन्हे प्राप्त हो गया । पूर्वी तिब्बत एवं तिब्बत स्वायत्तशासी क्षेत्र मे 2000 से ऊपर तिब्बती मठ एवं मोन्यूमेन्ट्स नष्ट कर दिये गए । बुद्धिस्ट पुस्तकें जो कि तिब्बत की सांस्कृतिक धरोहर का मूलाधार थीं या तो जला दीं गई या नष्ट कर दी गई । शेष को छोड़कर सिर्फ 13 मठों को चीन द्वारा" संस्कृति के प्राचीन अवशेष" के रूप में सुरक्षित रखा गया । मठों की इमारतें जो नष्ट नहीं की गई थीं वे या तो भण्डार गृहो या सैनिको के उपयोग के लिए टायलेट्स के रूप में उपयोंग मे लाई जाने लगी ।[1]

---

1. न्यायविदों के अन्तर्राष्ट्रीय आयोग की रिपोर्ट, "टिबेट–ह्यूमन राइट्स एण्ड द रूल ऑफ लॉ" पृष्ठ 121, दिसम्बर 1997

3. भाषा :–

किसी भी राष्ट्र की भाषा उसकी संस्कृति व अस्मिता का यथार्थ प्रतीत होती है । तिब्बत पर चीनी कब्जे के दौरान मानदण्डीय तिब्बती भाषा के विकास पर बल दिया गया। तिब्बतियों को अपनी लिखित तथा मौखिक भाषा के विकास की अनुमति दी गई । तिब्बती भाषा में समाजवादी विचारधाराओं को स्पष्ट करने वाले वाक्य विन्यासों की रचना की गई । समाजवाद, वर्क यूनिट्स, वर्ग संघर्ष, बुर्जुआ तथा प्रतिक्रांतिकारी जैसे मार्क्सवादी दर्शन की उपज शब्दों को तिब्बती भाषा में आविष्कृत किया गया । सन् 1985 से तिब्बतियों के अधिकांश प्राइमरी स्कूलों में तिब्बती भाषा माध्यम के रूप में प्रयुक्त होती है परन्तु माध्यमिक स्तर पर अध्ययन का माध्यम चीनी भाषा होने के कारण तिब्बती छात्रों के परीक्षा परिणाम प्रभावित होते हैं । जो बच्चे चीनी भाषा मे निपुण नहीं होते उन्हे गैर चीनी धारा में पढ़ाई की अनुमति दी जाती है जिसमें अंग्रेजी के कोर्स उपलब्ध नही होते । अतः बच्चों की आगे की प्रगति देखते हुए अभिभावक तिब्बती भाषा के माध्यम से बच्चों को पढ़ाना पसंद करते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि बच्चा शुरू से ही तिब्बती भाषा को चीनी भाषा की तुलना में कमतर समझने लगता है जो किसी राष्ट्र के गौरव के लिए बुरी बात है । तमाम नए आविष्कारों के बावजूद तिब्बती भाषा को एक स्थानीय भाषा के स्तर पर गिराने का प्रयत्न किया गया । यह चीन अधिशासित तिब्बत की विडम्बना ही कही जा सकती है ।

4. विकास :–

''विकास'' अपने आप में एक सम्पूर्ण सम्प्रत्यय है । तिब्बत पर साम्यवादी चीन के कब्जे के बावजूद वहां विकास दर निम्न स्तरीय रही है । यद्यपि मृत्यु दर सुधरी है तथापि पिछड़े इलाकों मे अभी भी चिकित्सा सुविधाओं का अभाव है । तमाम लोकतांत्रिक सुधारों की चीनी कोशिशों के बावजूद तिब्बत को गरीबी से मुक्ति नहीं मिली है । चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी के सेक्रेटरी हू–याओ बांग ने चीनी विकास की वास्तविकता इन शब्दों में व्यक्त की है , “Our present situation is less than wonderful because the Tibetan peoples lives have not been improved. There are rare improvements in some parts but in general, Tibetans still live in relative poverty. In some areas the living standard have even gone down.”[1]

---

1. रॉबर्ट बर्नेट एवं शिरीन एकिनर सम्पादित पुस्तक, '' रजिस्टन्स एण्ड रिफार्मस इन टिबेट'' में उधृत, पृष्ठ 288, ब्लूमिंगटन इण्डियाना यूनिवर्सिटी प्रेस, 1994

ऐसा प्रतीत होता है कि चीन द्वारा तिब्बत की आर्थिक प्रगति के प्रयत्न तो किए गए परन्तु उनका केन्द्र गरीबी निवारण नहीं था जिसके कारण प्रगति तो हुई परन्तु आम जनता उसकी हकदार नहीं बनी ।

5. पर्यावरण :-

अन्य समस्त पक्षों की भांति चीन के अधीन तिब्बत का पर्यावरण भी बुरी तरह प्रभावित हुआ। अपने लाभ के लिए चीन द्वारा भारी मात्रा में वनों की कटाई की गई । इससे न सिर्फ मृदा अपरदन का खतरा उत्पन्न हो गया बल्कि वृक्षों की अनेक प्रजातियां भी समाप्त हो गई । चीन द्वारा तिब्बत को आणविक विस्फोट क्षेत्र बना लिया गया । लोप-नोर के निकट तिब्बत पर आए दिन चीन परमाणु विस्फोट करता रहता है । प्रायः ऐसी जगहों का पानी पीने मात्र से लोग काल कवलित हो जाते है । एशिया की अनेक बड़ी नदियों का उद्गम स्थल तिब्बत का हिमालयी क्षेत्र है । चीन द्वारा निरन्तर किये जा रहे आणविक विस्फोटों से इन नदियों का पानी अत्यधिक प्रदूषित हो गया है । चीन न सिर्फ अपना परमाणविक कचरा तिब्बत में डम्प करता है बल्कि कई पश्चिमी शक्तियों ने चीन से तिब्बत में अपना परमाणविक कचरा डम्प करने के लिए गुप्त समझौते भी कर रखे है ।

अस्तु चीन के अधीन तिब्बत के अधिशासित राज्य में कार्य व्यापार सामान्य गति से न चलकर चीन द्वारा मुश्किल से चलाया जा रहा है । मानवाधिकारों की स्थिति बेहद् खराब है । आए दिन होने वाले तिब्बती जनप्रदर्शनों मे अनेक व्यक्ति चीनी दमन का शिकार हो जाते हैं ।

तिब्बती राष्ट्रवाद-तिब्बती जन की आशाएँ-आकांक्षाएँ

चीन के विरूद्ध तिब्बती संघर्ष का मूल स्वर तिब्बती राष्ट्रवाद के भाव से प्रेरित रहा है । भारत में दलाई लामा के नेतृत्व मे तिब्बत से भागकर शरण लेने के कुछ समय बाद दलाई लामा की अध्यक्षता में निर्वासित सरकार का गठन कर लिया गया । तिब्बत मुद्दे का समर्थन करने के लिए अनेक तिब्बती संगठन अस्तित्व मे आए । इन सक्रिय तिब्बती संगठनों मे प्रमुख है – "तिब्बत कम्यून पार्टी, तिब्बती यूथ कांग्रेस, चिल्ड्रेन ऑफ गॉड हिमालया, वेस्टर्न बुद्धिस्ट सेंटर, फ्रेन्ड्स ऑफ टिबेट" इत्यादि ।[1]

निर्वासन ने तिब्बती स्वतंत्रता के लिए अधिक आक्रामक संघर्ष आरम्भ करने के लिए दलाई

1. दैनिक जागरण, नई दिल्ली, 24 नवम्बर 1996

लामा से अनुमति मांगी । दलाई लामा ने इस पर कोई शर्त नहीं लगाई । उन्होंने एक सहानुभूतिपूमर्ण, 'खुला छोड़ दो' की नीति वाला रूख अपनाया । वे देखना चाहते थे कि तिब्बतियों की नई पीढी अपने संघर्ष को किस दिशा में आगे ले जा सकती है ?

सन् 1992 में नरसिम्हाराव की अमेरिका यात्रा के समय दलाई लामा विरोधी खेमे के खाड़कुओं एवं जंगजुओं के साथ मिलकर तिब्बत के समर्थन में प्रदर्शन किया गया । यह तिब्बती संघर्ष के उग्रस्वरूप का प्रतीक है । अब तक हुए अनेक जन प्रदर्शनों में तिब्बती राष्ट्रवाद के विभिन्न आयामों के दर्शन होते है। चाहे मामला दलाई लामा को नोबेल प्राईज़ मिलने की खुशी का हो या किसी तिब्बती जन प्रदर्शन का, तिब्बतियों का जोश राष्ट्रवाद के निनाद से अनुगूंजित रहता है । इस सन्दर्भ में महत्वपूर्ण बात यह है कि अपनी राष्ट्रवादी भावनाओं की अभिव्यक्ति मे तिब्बती जन अपने परम्परागत प्रतीको जैसे ज़ाम्पा, ज़्यूनिपर की शाखाओं को जलाना तथा बारखोर (परिक्रमा करना) इत्यादि का प्रयोग बखूबी करते हैं ।

तिब्बती राष्ट्रवाद में एक नया आयाम उभर कर आया है । सन् 1998 के दौरान विवादास्पद मुद्दे पर चीन एवं दलाई लामा समर्थकों के बीच फिल्म निर्माण से अपने-अपने पक्ष को पुष्ठ करने की नवीन परम्परा का श्री गणेश हुआ दलाई लामा के पक्ष में हॉलिवुड मे फिल्म "कुन्दन" तथा " सेवन ईयर्स इन तिब्बत" नामक दो फिल्में बनाई गईं जिनका उद्देश्य हिमालय की गोद में बसे तिब्बत की आजादी के प्रति विश्वव्यापी समर्थन मे वृद्धि को इंगित करना था । इन फिल्मों से तिब्बती मुद्दे के प्रति उपजे जनसमर्थन को कम करने के उद्देश्य से चीन द्वारा भी "रेड रिवर वैली" तथा "माई टाइम आफटर ली फंग" नामक दो फिल्में बनाई गई ताकि तिब्बत में चीन द्वारा लाए गए सामाजिक परिवर्तन की स्थतियों को स्पष्ट किया जा सके , तिब्बतियों की सामन्तशाही से मुक्ति की प्रक्रिया स्पष्ट ,की जा सके तथा ली फंग के जीवन चरित्र एवं पार्टी के प्रति उनकी प्रतिबद्धता से लोगों को परिचित कराया जा सके । "कुन्दन" तथा "सेवन ईयर्स इन तिब्बत" नामक इन दोनो फिल्मों ने तिब्बत में व्यापक जनजागरण का कार्य किया तथा राष्ट्रवादी भावनाओं को उच्चतम बिन्दु तक पहुंचा दिया ।[1]

तिब्बती राष्ट्रवाद का एक पक्ष उस समय सामने आया जब सन् 2008 मे होने वाले ओलम्पिक खेलों की मेजवानी के चीन स्वप्न को धराशायी करने के लिए तिब्बत समर्थक 300 देशों की संचालक समिति ने इसके विरूद्ध कदम उठाये।

1. आज "न्यूज पेपर 11.3.1998

इनका मत है कि चीन शांति के प्रति इन खेलों के आयोजन के लिए स्टेडियम बनाने तथा खिलाड़ियों के ठहरने के लिये होटलों के निर्माण के लिए कई गरीब बस्तियाँ उजाड़ देगा।" इन राष्ट्रवादियों ने यह भी तर्क दिया कि पिछले 80 सालों से लगातार मानवाधिकार उल्लंघन के बाद विश्व शांति व भाई–चारे के संदेश देने का कोई औचित्य नहीं रहता तथा ये भी कि इस आयोजन की मेजबानी चीन को सौपने से पहले ओलम्पिक आयोजन समिति को इस बात की पुष्टि कर लेनी चाहिए कि इतने महत्वपूर्ण खेलों के आयोजन के मापदण्डों के तहत चीन कहां ठहरता है ? इस सन्दर्भ में मानवाधिकार मुद्दा उठाते हुए इन संगठनों मे ओलम्पिक खेलो की मेज़बानी तो दूर चीन सरीखे साम्राज्यवादी देश को इन खेलों में भाग लेने से भी प्रतिबन्धित कर देने की अपील की ।[1]

इस प्रकार तिब्बती राष्ट्रवाद अपने कुछ अनोखे ही स्वरूप में सामने आ रहा है । दलाई लामा तथा तिब्बत के मुद्दे पर वैश्विक जनजागरण का यह स्पष्ट प्रतीक है ।

तिब्बती राष्ट्रवाद के संदर्भ में ही प्रस्तुत है– भारत स्थित कुछ तिब्बतियों के विचार जिन से भविष्य के तिब्बत को लेकर तिब्बतियों की आशाएं व आकांक्षाएं स्पष्ट होती हैं ।

1.

डोलकर ल्हामो
धर्मशाला
उत्सांग (तिब्बत)

वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में तिब्बत समस्या के विषय में विचार व्यक्त करते हुए श्री ल्हामों ने स्पष्ट किया, "तिब्बत में आज़ादी नहीं है । ह्यूमन राइट्स का वायलेशन किया जाता है। चीन यू.एन.ओ. के रूल्स नहीं मानता इसलिए वहां ओलम्पिक नहीं होना चाहिए । तिब्बत में तिब्बतियों की जनसंख्या सीमित रखने के उद्देश्य से एबोर्सन कराए जाते है । प्रोस्टीट्यूशन कराया जाता है ताकि उनका ध्यान आजादी से हटे । दलाई लामा वायलेन्स नहीं चाहते इसलिए बातचीत ही रास्ता है । क्योंकि चीन पूर्ण आजादी नहीं देगा इसलिए हम स्वायत्ता चाहते हैं । यद्यपि चीन बहुत बड़ी शक्ति है फिर भी हम स्वतंत्र हो सकते हैं क्योंकि बाकी अन्य देश भी है जो ताकतवर हैं और तिब्बत का पराधीन होना उनके लिए शर्म की बात है ।

क्योंकि बहुत सारे छोटे–छोटे देशों का भी स्वतत्र अस्तित्व है इसलिए तिब्बत का भी अस्तित्व रहेगा । पहले भी तिब्बत का स्वतंत्र अस्तित्व एवं अपना कल्चर था ।" भविष्य के तिब्बत

1. दैनिक जागरण, नई दिल्ली, 1 जुलाई 2001

के लिए शासन के स्वरूप के विषय में श्री ल्हामों ने स्पष्टतः प्रजातंत्र के लिए अपनी पसंद व्यक्त की साम्यवाद के लिए नहीं । श्री ल्हामों ने बड़े देशों से चीन पर मानवाधिकारों का सम्मान करने के लिए दबाव डालने का आह्ववान किया है । दलाई लामा के नेतृत्व पर अपना विश्वास व्यक्त करते हुए उन्होंने स्पष्ट किया "हमें तिब्बत के धर्मगुरू पर बहुत विश्वास है । हमारी पहचान हमारा धर्म है । चीनी उसे मिटाना चाहते है, सके द्वारा वे तिब्बत का अस्तित्व मिटाना चाहते हैं । दलाई लामा जो भी कार्य कर रहे हैं वे सब तिब्बत की भलाई के लिए हैं ।"तिब्बत की भविष्य में अर्थव्यवस्था किस प्रकार होगी इस सन्दर्भ मे ल्हामों का मानना है कि ज्यादातर लोग ज़मीन ज़ायदाद पर जीवन यापन करेंगे जो बिना पढ़े लिखे लोग हैं वे व्यापार करेंगे और शेष पढ़े लिखे तिब्बती डॉक्टर, इंजीनियर एवं अध्यापक बनेंगे ।" चीन द्वारा तिब्बत मे जारी हस्तक्षेप के विषय में विचार व्यक्त करते हुए ल्हामों ने बताया कि, "तिब्बत के अन्दर मूवमेन्ट हो रहे हैं, जनसंख्या भी कम हो रही है तिब्बती इसके विरोध मे सुसाइड करते हैं । हम शांतिपूर्ण तरीकों से विरोध करते हैं । चीन ने रेल्वे लाईन डाली है इसके माध्यम से वह तिब्बत की वन सम्पदा का दोहन करना चाहता है । तिब्बत की मुक्ति के लिए आवश्यक है कि यु.एन.ओ. सपोर्ट करे ।"

2.

सोनम दोरजी
तिब्बतन सेटलमेन्ट
मुन्डगोड (कर्नाटका)
पूर्व निवासी न्यानांग तिब्बत

वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में तिब्बत समस्या को पारिभाषित करते हुए श्री सोनम दोरजी ने स्पष्ट किया, "हम मातृभूमि छोड़ना नहीं चाहते । तिब्बत चीन के चंगुल से मुक्त हो जाए ये एशिया की समस्या है । तिब्बत के होने से भारत को खतरा नहीं होता । अभी भारत का डिफेन्स का खर्चा बढ़ गया है वह खर्च बचा रहता । हम भारत को महान मानते हैं क्योंकि वो हमें शरण दिये है । नेहरू जी ने फुल सपोर्ट नहीं दिया । उन्होंने यू.एन.ओ. में तिब्बत को आज़ाद देश नहीं माना । पांच बिन्दु शांति समझौता जो दलाई लामा ने तिब्बत के लिए प्रस्तुत किया है उसे चीन नही मानता । तिब्बत का एन.जी.ओ. तिब्बत यूथ कांग्रेस पूर्ण आजादी चाहता है तिब्बत की सरकार (दलाई लामा की सरकार) ओटोनॉमी चाहती है । तिब्बतन मूवमेन्ट ऐसासिएशन, तिब्बतन यूथ कांग्रेस तथा पब्लिक कम्प्लीट फ्रीडम चाहते हैं परन्तु दलाई लामा के विरुद्ध नहीं

जाना चाहते।'' श्री दोरजी ने स्पष्ट किया कि स्वायत्ता मांगने से चीन स्वायत्ता नहीं देगा परन्तु सम्भव है कि स्वतंत्रता मांगने से वह स्वायत्ता दे दे ।

यू.एन.ओ. में भारत द्वारा तिब्बती मुद्दे का समर्थन न किये जाने के मामले पर श्री दोरजी ने स्पष्ट किया, ''तिब्बत उस समय दुनिया से आइसोलेटिड था । नेहरू जी ने यू.एन.ओ. मे विटनेस नहीं दिया । वह पूर्णतः आत्मनिष्ठ था इसलिए शायद उसके परतंत्र होने का ज्यादा पता नहीं पड़ा ।''

तिब्बत के भविष्य के विषय में सोनम दोरजी ने इस प्रकार विचार व्यक्त किए, ''पहले भी तिब्बत का स्वतंत्र अस्तित्व था । उसका वजूद हमेशा रहेगा । उसका ट्रेडिशन कल्चर दुनिया से अलग है । तिब्बत आज भी दुनिया मे विश्व शांति का काम कर सकता है । हम प्रजातंत्र में विश्वास रखते है। हमारी दलाई लामा की सरकार प्रजातंत्रात्मक ढ़ग से चल रही है । मंत्री चुनाव से चुने जाते हैं। दलाई लामा का मत है कि तिब्बत की स्वतंत्रता के बाद वे अपना पद छोड़ देंगे तथा आम लामा की तरह जीयेंगे ।'' श्री दोरजी ने तिब्बत को मुक्त कराने के लिए बड़े देशों से मदद की अपील की उनका मानना है कि प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से विशेषकर यूरोपीय देश चीन पर स्वतंत्रता के लिए दबाव डाले । उनका मानना है कि यदि कुवैत को मुक्त कराने के लिए अंतर्राष्ट्रीय प्रयत्न किये जाते है तो तिब्बत की मुक्ति के लिए अंतर्राष्ट्रीय प्रयत्न क्यों नहीं किये जा सकते ।''

तिब्बत की समाज व्यवस्था के विषय में मत व्यक्त करते हुए श्री दोरजी ने स्पष्ट किया कि ''पहले हमारे परिवार से एक बच्चा लामा बनताा था पर अब इसके लिए चीन से एन.ओ.सी. लेना पड़ता है । चीन धर्म के खिलाफ लोगों को ले जाना चाहता है । मठाधीश तो धर्म की बात करते हैं राजनीति की बात वे क्या जाने ।'' त़िब्बत की अस्मिता मिटाने के विषय में चीन द्वारा किए जा रहे प्रयासों के विषय में बात करते हुए श्री दोरजी ने स्पष्ट किया कि ''चीन तिब्बत को मिटाने के लिए उसके कल्चर को और मठों को मिटाना चाहता है । तिब्बती भाषा एवं तिब्बती स्कूल नष्ट करना चाहता है । चीन तिब्बतियों की जनसंख्या को कम करने का प्रयास भी कर रहा है ।'' तिब्बतियों द्वारा भारत में व्यापार करने के परिप्रेक्ष्य मे उन्होंने स्पष्ट किया कि हम मजबूरी में हिन्दुस्तान में ये बिजनेस करते हैं । हम आत्मनिर्भर एवं स्वाभिमानी होना चाहते हैं । हम व्यापार भी हिंसक हथियारों का नहीं करना चाहते, शांति का व्यापार चाहते हैं । हम स्वतंत्रता चाहते है

कैसे भी । चीन के अन्दर भी लोग डेमोक्रेसी चाहते है। उससे सरकम्सटान्सेज बदलेगे । बफर स्टेट होने से तिब्बत के साथ–साथ भारत की भी समस्या खत्म हो जायेगी ।''

3.

ल्हाक्पा दोरजी
मैसूर कर्नाटका
मूल निवासी कैरोंग (तिब्बत)

तिब्बत की वर्तमान स्थिति पर विचार व्यक्त करते हुए श्री ल्हाक्पा दोरजी स्पष्ट किया, ''तिब्बत स्वयं में स्वतंत्र नहीं है । ह्यूमन राइट्स नहीं है । तिब्बत में तिब्बतन माइनोरिटी ने चाइनीज़ बढ़ गए है । तिब्बती गांव में रहते है तथा चीनी शहरों में आराम से सुविधाओं मे रहते है । रेल्वे लाइन बनाकर सन् 2010 तक 20 मिलियन चीनियों को तिब्बत मे लाकर बसाया जायेगा जिससे तिब्बती और अधिक माइनारिटी में आ जायेंगे ।''

भारत की तिब्बत के विषय में नीति पर चर्चा करते हुए दोरजी ने स्पष्ट किया, ''चाइना तिब्बत में डेवलपमेन्ट कर रहा है । जवाहर लाल नेहरू ने तिब्बत को चीन का हिस्सा नहीं माना । अटल जी दलाई लामा के दोस्त हैं । श्री वाजपेयी तिब्बती सरकार को गाइडेन्स देते हैं । कुछ प्रधान मंत्री चीन जाकर तिब्बत को चीन का हिस्सा बताने लगते हैं जो कि गलत है । दलाई लामा चीन से बातचीत करना चाहते है परन्तु चीन की प्री कन्डिशन है कि तिब्बत को चीन का हिस्सा मानने के बाद ही कोई बात हो सकती है। चीन सात प्रतिशत के करीब आटोनामी देना चाहता है तथा 40 प्रतिशत एरिया को चाईना के तरफ है उसे नहीं देना चाहता। तिब्बत को पूरा एरिया चाहिए। कम्प्लीट फ्रीडम बहुत मुश्किल है। 6 हजार मोनेस्ट्रीज नष्ट कर दिया है। 1.2 मिलियन तिब्बती मार चुका है। '' ल्हाक्पा दोरजी ने दलाई लामा के महत्व पर चर्चा करते हुए स्पष्ट किया है, ''दलाई लामा के बिना स्वतंत्रता संभव नहीं है। दलाई लामा शांति के मसीहा है। यू.एस. भी चाईना का कुछ नहीं बिगाड़ सकता। तिब्बत में यूरेनियम रिसार्स बहुत है। वहां हाईड्रोलिक पॉवर के साधन भी है, इसलिए स्वतंत्रता के बाद तिब्बत में आर्थिक परेशानियों नहीं होंगी। तिब्बत का ईस्टर्न पार्ट उसे फाइनेनशियली सपोर्ट करेगा वहां लकड़ी बहुत ज्यादा है इस परिप्रेक्ष्य में चाईना बहुत गरीब है जनसंख्या की तुलना में उसके संसाधन सीमित है।''

तिब्बत की भविष्य के स्वरूप पर विचार व्यक्त करते हुए श्री दोरजी ने स्पष्ट किया कि, "यूनाईटेड नेशन इतना शक्तिशाली है किसी भी देश को स्वतंत्र करवा सकता है। हम डेमोक्रेसी चाहते हैं। और यह भी चाहते है चीन को सुधारने के लिए उसके साथ बड़े देशों को संबंध समाप्त कर देने चाहिए, बड़े देशों को उसके ह्यूमन राइट्स वाइलेशन को कन्डेम्न करना चाहिए, प्रेशर मेन्टेन्ड करना चाहिए नही तो तिब्बत स्वतंत्र नहीं हो पायेगा। चाईना न्यूक्लियर सुपर पॉवर है। चाईना को हराना आसान नहीं है ।चाईना ने तिब्बत में अपने फायदे के लिए सुविधायें बढ़ाई है। ल्हासा में 90 प्रतिशत चाईनिज है, तथा तिब्बतन माइनारिटी में है।"

भारत में व्यापार कर रहे तिब्बतियों की दशा पर विचार व्यक्त करते हुए उन्होंने स्पष्ट किया, "यहां पर व्यापार सीजनल है। इसमें लिविंग स्टेंन्डर्ड ठीक नहीं है। हम अच्छा सामान रखते है वह इंडिया का ही बना होता है। भविष्य में तिब्बत की अर्थ व्यवस्था को उसके श्रोतों पर आधारित बताते हुए उन्होंने विदेशी निवेश को तिब्बत की अर्थ व्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण बताया।

4.

सोनम ढोन्डुप

डिस्ट्रक्ट करवार (कर्नाटका)

मूल निवासी केडोंग (तिब्बत)

तिब्बत की वर्तमान स्थिति पर विचार व्यक्त करते हुए श्री ढोन्डुप ने स्पष्ट किया कि, "तिब्बत में रहने वालों को मानव अधिकार प्राप्त नहीं है। तिब्बत पहले स्वतंत्र था लेकिन चीन अब बातचीत के लिए तैयार नही है। दलाई लामा प्रयास कर रहे हैं। वे पहले स्वतंत्रता की बात करते थे अब आटोनामी की बात कर रहे है। हम चाहते हैं कि पूर्ण स्वतंत्रता मिले परन्तु दलाई लामा स्वायत्ता की बात करते हैं क्योंकि वे मानते है कि चीन जब स्वायत्ता की बात नहीं मान रहा तो स्वतंत्रता की बात क्या मानेगा। सन् 1950 के बाद स्वतंत्र हो सके देशों की तरह तिब्बत भी स्वतंत्र हो सकता था परन्तु ऐसा नहीं हुआ। तिब्बत के आजाद होने पर चीन का घाटा होगा। उसकी आबादी ज्यादा तथा जगह कम है। इसलिए वह बातचीत के लिए आगे नहीं आ रहा। हमारा धर्म हमें शांति के अलावा और रास्ते अपनाने का रास्ता नहीं देता। फिर भी हम तिब्बत के अंदर विरोध कर रहे हैं।"

तिब्बत के भविष्य पर बात करते हुए श्री ढोन्डुप स्पष्ट करते है कि "उन्हें वहां भारत जैसा संसदीय शासन चाहिए चीन की तरह साम्यवाद नहीं।"

तिब्बत की मुक्ति के लिए उनका मत है कि चीन से बातचीत करके तिब्बत को मुक्त कराना चाहिए जिस तरह कुवेत को मुक्त कराया गया उसी तरह से चीन को समझायें जैसे चीन को हांगकांग मिल गया उसी तरह समझा बुझाकर तिब्बत को स्वतंत्र कराये। तिब्बत के भविष्य के व्यापार पर उनका मत है कि यदि तिब्बत आजाद हो गया तो हर देश से व्यापारिक संबंध रखेगा तथा प्राकृतिक संसाधनों के अलावा ऊन और लोहे का व्यापार करेगा। चूंकि तिब्बत इतिहास में स्वतंत्र था। तिब्बत के राजाओं की स्वतंत्रता स्पष्ट है। सन् 1959 में तिब्बत को जबरजस्ती चीन का हिस्सा बना दिया गया।" श्री ढोन्डुप तिब्बत के धार्मिक स्वरूप बनाये रखते हुए इसके आधार पर तिब्बती स्वतंत्रता के पक्षपाती है।

5.

कार्मा जीरिंग
शिमला (हिमाचल प्रदेश)
मूल निवासी आम्डो तिब्बत

तिब्बत की वर्तमान स्थिति पर श्री कार्मा जीरिंग ने निम्नलिखित विचार व्यक्त किये। "सन् 1959 से तिब्बत पर चीन ने अधिकार कर लिया है और तिब्बत लोग हिन्दुस्तान आ गये हैं। तिब्बती लोग आजादी चाहते हैं चीनी उन्हें प्रताड़ित करते हैं। औरतों से दुर्व्यवहार करते हैं । चीनी लोग वे सारे प्रयत्न करते है जिससे चीनी कल्चर खत्म हो जाये। 1.2 मिलियन तिब्बतियों को चाईना मार डाला। 6 हजार मोनेस्ट्रीयों को नष्ट कर डाला।"

तिब्बत के प्रति भारत के भूतपूर्व नीति निर्माताओं की नीतियों के विषय में पूछें जाने पर श्री कार्मा जीरिंग ने अपनी अनभिज्ञता प्रकट की। तिब्बत के भविष्य के विषय में उन्होंने सुझाव दिया कि, "तिब्बत को पूर्ण स्वतंत्र होना चाहिए। दुनिया अगर हमारा साथ देगी तो हम भी स्वतंत्र होंगे। तिब्बत के रूप में हमारी पहचान बनेगी। धार्मिक देश के रूप में हमारी पहचान बनेगी। हम शांति से मुक्ति चाहते हैं, कुवेत की तरह नहीं। "

चीन द्वारा तिब्बत में किये गये विकास कार्यों के प्रति श्री जीरिंग का दृष्टिकोण यह है कि, "तिब्बत की जनता विकास कार्यों से दिल से खुश नहीं है, वह सब दिखावे के लिए है। देश आजाद न होने के कारण जनता के लिए यह सब छलावा है ताकि तिब्बती चाईना से जुड़ जाये ऐसी उनकी कोशिश है। आजादी की बात न मानकर चीन तिब्बतियों पर अत्याचार कर रहा है। तिब्बतियों की स्वतंत्रता की भावनाओं को दबाने के लिए उन पर चीन द्वारा तरह-तरह के अत्याचार किये जाते हैं। कई तिब्बती युवकों को भारत के साथ मिले होने का आरोप लगाकर उन्हें प्रताड़ित किया जाता है। कभी बम लगाने का झूटा इल्जाम लगाकर फॉसी दे दी जाती है।" तिब्बत के भविष्य के व्यापर पर उनका मत है कि तिब्बत का दुनिया से व्यापार अच्छा रहेगा वे ऊन का व्यापार करेंगे तथा भारत के साथ अच्छे संबंध रखेंगे।

6.

टी. डोरजी

बैंगलोर

मूल निवासी खम-नानचेन

तिब्बत की स्वतंत्रता के विषय में श्री डोरजी का मत है कि, "हम आजादी के इंतजार में है हमें लड़ाई करके स्वतंत्रता नहीं चाहिए। बड़े देश हमे सपोर्ट करें, यू.एन.ओ. में हमे सपोर्ट करें हमें शांति के साथ पूर्ण स्वतंत्रता चाहिए। हम भारत के शुक्रगुजार है कि हमें उसने शरण दी। दलाई लामा ने जो रास्ता चुना है वह अच्छा है उसी में जनता का भला है। 90 प्रतिशत जनता दलाई लामा के साथ है हम पहले स्वायत्ता लेकर फिर स्वतंत्रता का प्रयास करेंगे। नई सरकार चलाना आसान नहीं है इसलिए पहले स्वायत्ता ठीक है।"

तिब्बत की भविष्य की शासन प्रणाली के विषय में विचार व्यक्त करते हुए श्री डोरजी ने व्यक्त किया, "हम प्रजातंत्र चाहते है, अमेरिका की तरह। भारत में स्वतंत्र मतदान नहीं होता। पैसे से वोट खरीदे जाते हैं हम बिहार जैसी डेमोक्रेसी नहीं चाहते जो बन्दूक के साथ चलती है।"

चीन के सुधार कार्यक्रमों के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि "चीन ने कोई सुधार कार्य नहीं किये है जो कार्य हुआ है उससे लोगों को कोई फायदा नहीं हुआ। यदि तिब्बत स्वतंत्र होता है तो 90 प्रतिशत लोग बिजनेस में जायेंगे।"

तिब्बती संस्कृति के विषय में श्री डोरजी ने विचार व्यक्त किया कि, "हर देश का अपना कल्चर, धर्म और भाषा होती है। हमारा बुद्ध धर्म हमारी पहचान है। दुनिया बुद्ध धर्म के कारण हमें पहचानेगी । हमारी संस्कृति हमारी पहचान है, हमारा सबसे बड़ा धर्म है इन्सानियत का व्यवहार करना।"

7.

बांगडोक गाम्पो
कर्नाटका
मूल निवासी खम्पा स्टेट
डिस्ट्रक्ट नानचेन तिब्बत

तिब्बत की वर्तमान स्थिति पर श्री गाम्पो ने अपने विचार इस प्रकार स्पष्ट किये, " तिब्बत आजाद नहीं है। उस पर चीन का कब्जा हो गया है, हम अभी शरणार्थी है कुछ तिब्बती तिब्बत में है, कुछ भारत में है और कुछ दूसरें देशों में हैं। भारत को व अंग्रेजो को बोलना चाहिए कि तिब्बत आजाद है। तिब्बत के आजाद होने से दुनिया में शांति होगी।"

तिब्बत के प्रति भूतपूर्व भारतीय नीति निर्माताओं की नीति पर चर्चा करते हुए गाम्पो ने स्पष्ट किया कि श्री जवाहर लाल नेहरू को बोलना चाहिए था कि तिब्बत चीन का हिस्सा नहीं है। दुनिया के देश चीन के डर से नहीं बोलते है परन्तु हमें पूर्ण स्वतंत्रता चाहिए। यदि वह नहीं मिलती है तो स्वायत्ता से भी काम चलायेंगे।"

भविष्य के तिब्बत पर विचार करते हुए उन्होंने स्पष्ट किया कि तिब्बत के लिए डेमोक्रेसी चाहेंगे। दुनिया उन्हें शांति के पुजारी के रूप में पहचानेगी । जिस तरह स्विटजरलेंड स्थित है उसी तरह से तिब्बत भी रहेगा। तिब्बत में बुद्धिज्म है। सभी एक दूसरे से प्यार करते हैं। हम दुश्मनों का भी भला चाहते हैं । दुनिया में जितनी सेनायें है उतने तिब्बत में मोंक्स व नन्स है।"

तिब्बत की स्वतंत्रता के लिए एन.जी.ओ. का हवाला देते हुए उन्होंने स्पष्ट किया कि "तिब्बतन यूथ कांग्रेस, तिब्बती वुमेन एसोसिएशन, इन्डो तिब्बतन फ्रेंडशिप ग्रुप, तिब्बतन फ्रीडम मुवमेंट इन सब संगठनों की ब्रांचे दुनिया में हर जगह है । ये दुनिया से तिब्बती मुद्दे को सपोर्ट दिलवा रहे हैं अमेरिकन स्टूडेंट यूनियन फॉर तिब्बतन फ्रीडम मुवमेंट नामक संगठन अमेरिका में

है। हम कुवेत की तरह स्वतंत्र नहीं होना चाहते हम शांति पूर्वक स्वतंत्रता चाहते हैं। हम देश के लिए स्वतंत्रता के प्रयास करने वालों को आर्थिक मदद करते हैं।''

चीन द्वारा तिब्बत में किये गये विकास कार्यो के प्रति उनका दृष्टिकोण इस प्रकार का है, ''चीन के लोग तिब्बत को बेवकूफ व बिना पढ़ा लिखा समझते हैं इसलिए उसने डेव्लपमेंट का बहाना किया है। सड़क व रेल मार्ग द्वारा चीन तिब्बत में चीनियों को 6 गुना बढ़ाना चाहता है जो कि अभी दो गुने है। चीन के लोग बड़े पदों पर है तिब्बती लोग छोटे–छोटे पदों पर हैं । चीन ने कुछ बड़े पदों पर बिना पढ़े लिखे तिब्बतियों को बिठाया है। जिससे विकास का पैसा चीन के लोग खा जाते हैं। अब चीन नेपाल पर कब्जा करना चाहता है । वह माओवादियों को पैसा देता है और नेपाल में तोड़फोड़ कराता है । ऊपर से नेपाली नेताओं को आर्थिक मदद करके उनका मुह बंद कर देता है।''

भविष्य में तिब्बती व्यापार पर चर्चा करते हुए वे कहते हैं कि तिब्बत स्विट्जरलेंड की भांति होगा। वह भविष्य में फलों का, आयुर्वेदिक दवाओं का, सोना, चॉदी, पीतल, लोहा, ऊन, घोड़े तथा याक का व्यापार करेगा।

श्री गाम्पो ने अपने इन्टरव्यू के दौरान एक महत्वपूर्ण विचार व्यक्त किया, ''बहुत से तिब्बती सोचते है कि अगर तिब्बत स्वतंत्र नहीं होता तो भारत का एक राज्य बन जाये क्योंकि उसका धर्म, भाषा, संस्कृति भारत से मिलती है।''

सप्तम स्कन्ध

उपसंहार - बदलते अवबोधन

निष्कर्ष व सुझाव

उपसंहार

(बदलते अवबोधन)

भारत एवं चीन के पारस्पिक संबंध निर्धारित करने मे भारत चीन सीमा विवाद एवं चीन की पाकिस्तान के साथ मित्रता ने अहम भूमिका निभाई है । भारत चीन संबंधों के विषय में जो तथ्य प्रायः पढ़ने व सुनने मे आता है वह यह है कि चीन भारत के साथ सीमा विवाद का शीघ्र हल चाहता है । 19 जून 2003 को चीनी विदेश मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारी ने भारत के साथ सीमा विवाद को उपनिवेशवाद काल की देन बताते हुए प्रधानमंत्री श्री अटलबिहारी बाजपेयी की चीन यात्रा के दौरान सीमा विवाद के तार्किक एवं उचित हल निकालने का विचार व्यक्त किया । सीमा विवाद के संदर्भ में भारत का मानना है कि उसका 38000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र चीन के कब्जे मे है, इसके अतिरिक्त 1963 के पाक–चीन समझौते के तहत 5120 वर्ग किलोमीटर भारतीय क्षेत्र चीन को सौंप दिया गया था । दूसरी ओर चीन अरूणांचल प्रदेश में 90000 हजार वर्ग किलोमीटर भारतीय क्षेत्र पर दावा प्रस्तुत करता है । यद्यपि चीन की दृष्टि मे यह सीमा और मानचित्र का ही मामला है । भारत–चीन सीमा विवाद के हल के लिए विपक्षीय वार्ताओं के आयोजन के संदर्भ में चीनी पक्ष यह स्पष्ट करता चलता है कि भारत उसके साथ किसी दोस्ती के मुगालते मे न रहे । चीनी विदेश मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारी ने श्री बाजपेयी की पीकिंग यात्रा के संदर्भ में स्पष्ट किया, ''मैं स्पष्ट करना चाहता हूं कि भारत साथ बेहतर होते रिश्ते से पाकिस्तान के साथ चीन की पारम्परिक दोस्ती पर कोई फर्क नहीं पड़ेगा । दूसरी ओर चीन और पाकिस्तान के बीच दोस्ती को कोई तीसरा देश निशाना नहीं बना सकता ।'' स्पष्ट होता है कि भारत के साथ सीमा विवाद का अपने पक्ष में निपटारा यदि चीनी वैदेशिक संबंधों की वरीयता सूची में प्रथम स्थान पर है तो भारत के साथ मैत्री संबंध निम्नतम वरीयता की स्थिति में आते हैं ।

वस्तुतः भारत–चीन के पारस्परिक संबंध दक्षिण एवं दक्षिण पूर्व एशिया के सर्वाधिक संवेदनशील विषयों मे है । दोनो ही देश विशाल जनसंख्या के स्वामी हैं, दोनों क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय शक्तियों के आकर्षण के पात्र हैं, दोनों ही क्षेत्र के बड़े वस्त्र निर्यातक हैं । इसके साथ ही दोनो एक दूसरे पर विस्तारवादी होने का आरोप लगाते रहते हैं । 30 जून 1991 को ''दक्षिण एशिया में भारत की भूमिका'' विषय पर कोलम्बो में सम्पन्न गोष्ठी मे बीजिंग विश्वविद्यालय के प्रोफेसर लिप लियांग गुआंग ने भारत पर विस्तारवादी होने का आरोप लगाया । यद्यपि वास्तविकता कुछ और

ही थी जो उपरोक्त सम्मेलन मे उपस्थित भारतीय प्रतिनिधि श्री ए.पी.वैंक्टेश्वरन ने स्पष्ट की, ''यदि हम चीन की दीवार को देखें तो उसके बाहर का सारा क्षेत्र ही चीनी विस्तारवाद का नतीजा है ।''

आरोपों प्रत्यारोपों के इस चक्र में चीन की सामरिक–आणविक एवं आर्थिक भूमिका वर्चस्व की ओर बढ़ती दिखाई देती है । विशेष रूप से दक्षिण पूर्व एशिया में चीन की वृद्धिशील भूमिका भारत के लिए खतरनाक हो रही है । सोवियत संघ के विघटन से चीन को एक बड़ा लाभ यह हुआ है कि उसके पड़ोस के देशों मे शक्ति रिक्तता आ गई है जहां पहले सोवियत यूनियन खड़ा था वहां अब चीन को खड़ा होने का मौका मिला । चीन और सोवियत संघ के बीच मतभेद का एक प्रमुख मुद्दा यह था कि चीन चाहता था कि सोवियत संघ उसे एशिया की प्रमुख शक्ति स्वीकार कर ले । सोवियत यूनियन के बिखर जाने के बाद चीन को लगा कि उसके प्रभाव क्षेत्र के निर्माण की बाधा समाप्त हो गई है और चीन एशिया की शक्ति के रूप मे स्वयं को स्थापित करने के लक्ष्य की दिशा में आगे बढ़ सकता है ।

अमरीकी राष्ट्रपति रीगन ने 1985 के आसपास सोवियत साम्राज्य के ढ़हने की परिकल्पना की थी । लगभग उसी समय चीनी संचार उपमंत्री ने ''पेईचिंग रिव्यू'' में प्रकाशित लेख में म्यामार के रास्ते हिन्द महासागर तक पहुंचने की सम्भावना व्यक्त की थी । इस सन्दर्भ मे उत्तरी म्यामार के मितकिना और लाशिओं रेल्वे केन्द्र का उल्लेख करते हुए इन्हे हिन्द महासागर तक पहुंचने के उपयुक्त रेलमार्ग बताया था । आज म्यांमार के साथ चीन के मैत्री भाव का आलम यह है कि वहां सैनिक जुन्टा के सत्ता मे आते ही चीन ने बर्मी कम्युनिस्ट पार्टी को सहायता देना बन्द करके सैन्य शासकों से हाथ मिला लिये । म्यांमार पर अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबंध के चलते यह उसकी मजबूरी थी कि चीन से हथियार खरीदे दूसरी तरफ म्यांमार हिन्द महासागर के प्रति चीनी महत्वाकांक्षा पूरी करने का अच्छा साधन भी बन रहा था ।

चीन की इस हिन्द महासागरीय महत्वाकांक्षा को लेकर मलेशिया, इण्डोनेशिया एवं आस्ट्रेलिया का चिंतित होना स्वाभाविक है । हिन्द महासागर पर अपने शक्ति प्रदर्शनों से उसके लिए दक्षिण पूर्व एशिया पर अपना प्रभाव क्षेत्र स्थापित करना आसान हो जायेगा । हिन्द महासागर की ओर से आने पर उसके लिए मलक्का जलडमरूमध्य तक पहुंना आसान होगा जहां से बीजिंग अपनी शक्ति व प्रभाव का क्षेत्र मे अधिक अच्छा उपयोग कर सकेगा ।

म्यांमार के कोकोद्वीप का इस्तेमाल चीन अपने गुप्तचर उद्देश्यों की पूर्ति के लिए करता है चीन म्यांमार पर दबाव डाल रहा है कि उसे कोकोद्वीप भी नहीं बल्कि टेनासरिम के पास स्थित क्वाथांग द्वीप के साथ अराकान के पास रामरी द्वीप भी दे दिया जाये । सामरिक रूप से इन दोनों द्वीपों की स्थिति बहुत महत्वपूर्ण है । क्वाथांग द्वीप टेनासरिम के दक्षिणी किनारे के पास है। मलक्का जलडमरूमध्य का प्रवेश द्वारा यही है यहां से जल डमरूमध्य की प्रत्येक गतिविधि पर नज़र रखी जा सकती है ।

दक्षिण पूर्वी एशिया मे चीन की बढ़ती विस्तारवादी महत्वाकांक्षाओं से सिर्फ भारत ही नहीं आस्ट्रेलिया भी चिंतित है । कई दशक तक इण्डोनेशिया को आस्ट्रेलिया की सुरक्षा के लिए खतरा मानने के बाद आस्ट्रेलिया की सुरक्षा के विषय में प्रकाशित श्वेत पत्र में चीन के उभरते प्रभाव को स्वीकार करते हुए चीन के प्रति सतर्क रहने का आह्वान किया गया है, ''क्षेत्र के अन्य देशों की तरह ही आवश्यक है कि चीन के सामरिक सोच एवं उसके इरादों के बारे मे अधिकाधिक जानकारी प्राप्त की जाए । ....अपनी बढ़ती सैनिक शक्ति के साथ चीन राजनयिक, राजनैतिक और आर्थिक उपायों से अपने सामरिक लक्ष्य भी प्राप्त करना चाहेगा ।'' ''आस्ट्रेलिया की प्रतिरक्षा'' नामक शीर्षक से प्रकाशित इस श्वेत पत्र में स्पष्ट किया गया कि चीन के सैनिक बजट मे भारी वृद्धि और नौसेना तथा वायुसेना के विस्तार का यही मतलब नहीं कि देश का आर्थिक विकास हो रहा है । यह देश के बदलते सामरिक सोच और वास्तविकताओं का भी परिचायक है । इन तमाम अनिश्चयों के कारण हम ऐसा मानते हैं कि भविष्य में सुरक्षा का वातावरण काफी खराब हो सकता है ।[1]

21 मई 1992 को भारतीय राष्ट्रपति श्री आर. वैंकटरमन की चीन यात्रा के दौरान चीन ने एक मेगा टन के परमाणविक विस्फोट को सम्पन्न करके यह स्पष्ट किया कि चीनी नेता अपने राष्ट्रीय हितों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए दूसरे देशों की निन्दा के बावजूद अपनी समयबद्ध योजना व कार्यवाहियों को कार्यान्वित करने में कभी नहीं चूकते । वस्तुतः इस अवसर को अपने शक्ति प्रदर्शन के लिए चुनने के पीछे चीन का उद्देश्य भारत के सम्मुख यह तथ्य स्पष्ट करने का था कि एशिया प्रशांत सागर के क्षेत्र में चीन ही स्थाई विकासशील देश है और चीन इस क्षेत्र के सब देशों के साथ मैत्री को बढ़ावा देगा । एशिया प्रशांत सागर क्षेत्र चीन के अनुसार एक विशाल

1. सिंह रामपाल,''दक्षिण पूर्व एशिया पर चीन की छाया'' स्वतंत्र भारत कानपुर 7 जनवरी 1999''

क्षेत्र है जिसका दक्षिण एशियाई क्षेत्र केवल एक हिस्सा है चीन का दावा है कि जब उसने विशाल एशिया प्रशांत सागर क्षेत्र में अपना प्रथम स्थान बना लिया है तो भारत को चीन की सैनिक सत्ता स्वीकार करने में क्या आपत्ति हो सकती है ।

चीन विगत कई दशकों से अपनी परमाणु क्षमता में वृद्धि के लिए प्रयत्नशील रहा है । चीन ने तिब्बत के पठारी भाग मे कम से कम तीन जगह अपने परमाणु हथियार तैनात किये हैं और इस क्षेत्र मे वह अपना रेडियोधर्मी कचरां भी डाल रहा है जो भारत की सुरक्षा के लिए ही नहीं वरन् समस्त उत्तरी भारत के पर्यावरण के लिए भी गम्भीर खतरा है । चीन के वैज्ञानिकों द्वारा पश्चिम चीन के शंघाई प्रान्त के तिब्बती बहुल इलाके में नाइन्थ एकेडमी के नाम से प्रसिद्ध अस्त्रों की डिजाइन तैयार करने वाली फैक्ट्री में परमाणु हथियारों की डिज़ाइनें तैयार की जा रही हैं । दूसरी तरफ चीन का रूस के साथ परमाणविक सहयोग भी जारी है । सन् 1993 मे चीन सैनिक तैयारियों मे सबसे अधिक धन व्यय करने वाला विश्व का तीसरा देश था । सन् 1993 में भारत के साथ सम्पन्न सीमा समझौते के बाद भी भारत चीन को अपनी सुरक्षा एवं सम्प्रभुता के लिए गम्भीर खतरा मानता रहा है । इसका कारण चीन द्वारा पाकिस्तान को निरन्तर दिया जा रहा सैन्य सहयोग है । चीन ने पाकिस्तान को दो दर्जन से अधिक एम–ग्यारह मिसाइलें दी हैं । सन् 1989 मे ही इस बात की पुष्टि की गई थी कि 400 किलोमीटर प्रहारक क्षमता के ज़मीन से ज़मीन पर मार करने वाले एच.ए.टी.–2, मिसाइल पाकिस्तान मे ही विकसित किए जायेगे । चीन द्वारा पाकिस्तान को थियेटर बैलिस्टिक मिसाइल्स देने पर भी समझौता हुआ था । इतना ही नहीं चीन पाकिस्तान स्थित खुशहाब नाभिकीय संयत्र के लिए तकनीकी सहायता भी प्रदान कर रहा है ।[1]

चीनी डिजाइन पर विकसित नाभिकीय हथियार भी पाकिस्तान ने विकसित कर लिये है । चीन द्वारा पाकिस्तान को सैनिक सहायता और सलाह देने के पीछे उसका मुख्य उद्देश्य भारत के विरूद्ध स्थाई धमकी के रूप मे पाकिस्तान को तैयार करना है । चीन द्वारा पाकिस्तान को आणविक अस्त्रों से सम्पन्न किए जाने की स्थिति में भविष्य में भारत को अपनी उत्तरी सीमा की ओर से चीन के परमाणु अस्त्रों तथा पश्चिमी सीमा की ओर से पाकिस्तान के नाभिकीय आक्रमण का सामना करना पड़ सकता है । इस प्रकार भारत पर दोनो दिशाओं से उत्पन्न आशंकित खतरे की पृष्टभूमि मे चीन ही है जिसके प्रति निरन्तर सचेष्ट रहना भारत के लिए आवश्यक है । चीन

---

1. सिंह, उदय नारायण, "ताजा चीनी विस्फोट भारत के लिए चेतावनी" स्वतंत्र भारत 29 मई सन् 1995

द्वारा व्यापक स्तर पर की जा रही परमाणु तैयारियों के कारण वह विकासशील देशों के प्रमुख अस्त्र निर्यातक के रूप में सामने आया है । चीन म्यांमार को न सिर्फ उत्तर हथियार ही उपलब्ध करवा रहा है बल्कि उसके क्षेत्र में एक नौ सैनिक अड्डा भी उसने स्थापित किया है चीन की सैन्य शक्ति जो 80 के दशक मे 1,90,000 थीं वह सन् 2005 तक चार गुनी हो जाने की आशंका है । पूर्व सोवियत संघ के विघटन के बाद विश्व में शांति प्रक्रिया का दौर चलाने की पृष्ठभूमि में इतने व्यापक पैमाने पर सैनिक तैयारियां चलाने से चीन की मंशा सहज ही स्पष्ट हो जाती है । चीन के परमाणविक कार्यक्रम के मद्दे नज़र भारत के परमाणु विकास कार्यक्रम का उद्देश्य उसके दोनों पड़ोसियों के उद्देश्य से बिल्कुल भिन्न हैं । भारत ने अब तक अपने शांतिपूर्ण विकास कार्यक्रमों के लिए परमाणु शक्ति का उपयोग किया है। अमरीका के दबाव मे आकर रूस ने भारत को अणु तकनीकी सहायता उपलब्ध कराने से इन्कार कर दिया यद्यपि इसका उपयोग शांतिपूर्ण विकासात्मक कार्यों मे किया जाना था । चीन और पाकिस्तान की नाभिकीय गतिविधियों को देखते हुए भारत को भी देश की प्रतिरक्षा शक्ति में वृद्धि करनी पड़ी है । चीन की परमाणु शक्ति विषयक नीति स्पष्ट नहीं है एक ओर तो वह अणु शक्ति सम्पन्न देश के रूप में परमाणु अप्रसार संधि के कट्टर समर्थक होने का दावा करता है तो दूसरी तरफ अणु रहित देशों को इस संधि के अनुरूप आचरण करने के लिए शिक्षा देता है । साथ ही इस संधि की मूल भावना के विपरीत लगातार नाभिकीय परीक्षण करता रहता है । फ्रांस ने अप्रैल 1992 तथा अमेरिका ने अक्टूबर 1992 मे एक पक्षीय आधार पर नाभिकीय परीक्षण बंद करने का फैसला किया परन्तु यह चीन ही है जो परमाणु अप्रसार संधि का समर्थक होने के बावजूद विश्व जनमत की उपेक्षा करते हुए आज भी परमाणु परीक्षण जारी रखे हुए है। चीन की इस दोगली नीति के कारण भारत को सदैव अपने परमाणु कार्यक्रम के प्रति सजग रहने की आवश्यकता है ।

विश्व में परमाणु नियंत्रण के मुद्दे पर चीनी कूट नीति सिर्फ चीन के विषय मे ही सफल नहीं हुए बल्कि चीन समर्थक उत्तर कोरिया को महाशक्तियों के हस्तक्षेप से बचाने मे भी चीन राजनयिक रूप से सफल रहा । दक्षिण कोरिया की सत्ता संभालने के बाद राष्ट्रपति किम यांग साम ने अपने नव राजनय के घेरे मे उत्तरी कोरिया को लेने की कोशिश की। उन्होंने अमेरिका सहित अन्य देशों को यह विश्वास दिलाने की कोशिश की कि उत्तर कोरिया 1994 के अंत तक नाभिकीय शक्ति सम्पन्न राष्ट्र हो जायेगा । यद्यपि उत्तर कोरिया ने 1985 मे ही परमाणु अप्रसार संधि पर हस्ताक्षर कर दिये थे और 1992 मे वह अपने परमाणु केन्द्रों को अन्तर्राष्ट्रीय पर्यवेक्षण के

लिए खोलने पर सहमत हो गया था फिर भी उसकी यह शर्त कि दक्षिण कोरिया भी अपने परमाणु संस्थानों का अंतर्राष्ट्रीय पर्यवेक्षण कराए स्वीकार नहीं की गई थी । अतः एक बार पुनः दक्षिण कोरिया द्वारा दबाव में लाए जाने के कारण और अमेरिका द्वारा दक्षिण कोरिया को नाभिकीय अस्त्रों की सप्लाई जारी रखने के कारण मार्च 1993 मे उत्तर कोरिया ने परमाणु अप्रसार संधि से संबंध विच्छेद की घोंषणा कर डाली । इससे एक नया संकट उत्पन्न हो गया । संयुक्त राष्ट्रसंघ में अमेरिका ने 140 अन्य देशों के समर्थन के साथ उत्तर कोरिया के परमाणु संस्थानों के अन्तर्राष्ट्रीय पर्यवेक्षण का प्रस्ताव पारित करवाने की अपील की । अमेरिका तथा दक्षिण कोरिया ऐसे अवसर की तलाश मे थे जब चीन सुरक्षा परिषद में अनुपस्थित हो ताकि अमेरिका उत्तर कोरिया के खिलाफ प्रस्ताव पारित कराए और उसका पालन न किये जाने की स्थिति में उत्तर कोरिया का ईराक की तरह हाल करे । इस मामले में यह दृष्टव्य है कि क्षेत्र में सिर्फ उत्तर कोरिया ही नाभिकीय शक्ति सम्पन्न देश नहीं था इस प्रकरण मे जापान के परमाणु कार्यक्रमों को पूरी तरह नजर अन्दाज किया गया । अमेरिका को इस बात की जानकारी थी कि जापान ने अपने रक्षा बजट मे तीन गुना वृद्धि की थी तथा 1956 से जारी जापान के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम द्वारा 1985 तक नाभिकीय अस्त्रों को चलाने वाले क्रूज प्रक्षेपास्त्रों के निर्माण की क्षमता भी हासिल कर ली गई थी तथापि इस सन्दर्भ में सिर्फ उत्तर कोरिया को ही अमेरिका सहित अन्य देशों ने अपना निशाना बनाया । इस पूरे प्रकरण के दौरान चीन ने उत्तर कोरिया के समर्थन का दृष्टिकोण अपनाया। इस संकट के दौरान जापानी प्रधानमंत्री होसीकावा की बीजिंग यात्रा के दौरान आर्थिक मुद्दों पर बातचीत के बाद जापान ने उत्तर कोरिया के सन्देहास्पद परमाणु केन्द्रों के अन्तर्राष्ट्रीय पर्यवेक्षण के लिए बीजिंग द्वारा दबाव डाले जाने का सुझाव दिया जिसे चीन ने यह कहते हुए नकार दिया कि उत्तर कोरिया एक सम्प्रभुता सम्पन्नता राष्ट्र है और किसी भी देश को "क्या करने" और "क्या नहीं करने" का दिशा निर्देश देने का अधिकार नहीं है । इस प्रकार इस मुद्दे पर अपना दृष्टिकोण व्यक्त करते हुए चीन ने इस विवाद का हल सुलझाने के लिए एक राजनयिक फार्मुला बताया कि अमेरिका, दक्षिण कोरिया और अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेन्सी के साथ उत्तर कोरिया से सीधा संवाद करे और सभी द्विपक्षीय बातचीत के लिये आमने सामने बैठे ।

जू रोंगची के आर्थिक सुधार कार्यक्रमों के तहत जिस तरह चीन और जापान एक दूसरे के निकट आए उसके आधार पर होसी कावा को भरोसा था कि चीन क्षेत्रीय मुद्दों पर उनका समर्थन

करेगा परन्तु चीन ने जापान के साथ अपने व्यापारिक रिश्तों को दूर रखते हुए उत्तर कोरिया के परमाणु कार्यक्रम पर अपना अलग दृष्टिकोण रखकर जापान का भ्रम दूर कर दिया साथ ही दक्षिण पूर्व एशियाई क्षेत्र की एक बड़ी शक्ति के रूप में अपनी भूमिका स्पष्ट की ।

भूतपूर्व सोवियत संघ के पतन के बाद विश्व का शक्ति संतुलन बदल चुका है । अमेरिका और यूरोप के सामने भी अब कोई सुरक्षा चुनौती शेष नहीं रह गई है इसलिए वर्तमान मे संघर्ष का मुद्दा आर्थिक है। इस समय अमेरिका और यूरोप की एक मात्र कोशिश यही है कि वे अपने माल और सेवाओं के लिए नए बाजार बनाएं । ये बाजार दो तरह से बनाए जा सकते हैं प्रथम तो अविकसित देशों मे अपने उत्पाद बेंचने की अधिकाधिक कोशिशें करके एवं वहां के प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करके, द्वितीय बड़े बाजार वाले देशों के देशी व्यापार एवं उद्यमों को समाप्त कर उनके स्थान पर अपने उद्योग स्थापित करके। इस सन्दर्भ मे बड़े देशों ने भारत के देशी व्यापार को समाप्त करके उसके स्थान पर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा व्यापार की धारणा को अपनाया जिसका प्रभाव यह पड़ा कि भारतीय अर्थव्यवस्था एवं नियोजन पश्चिमोन्मुखी हो गए । भारत मे एक बड़े बाजार के रूप मे आर्थिक उपनिवेशवाद स्थापित करने के प्रयत्न मे यूरोप तथा अमेरिका के पारस्परिक हित आपस में टकराए। जर्मनी भी दक्षिण एशिया के बाजारों मे अपना सामान बेचने का प्रयास कर रहा है। इस प्रकार यह पूरा क्षेत्र महाशक्तियों के आर्थिक स्वार्थ का केन्द्र बन गया है। ऐसी स्थिति मे भारतीय विदेश नीति का एक नया स्वरूप आर्थिक आयाम के रूप मे सामने आता है। जैसा कि पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है भारत और चीन क्षेत्र की दो व्यापारिक शक्तियाँ हैं। बड़े देश होने के नाते दोनो के बीच व्यावसायिक सम्भावनाएं भी बहुत अधिक हैं। भारत और चीन यदि एक साझी योजना के तहत दक्षिण एवं दक्षिण पूर्व एशिया मे मिलजुल कर कार्य करें तो पश्चिम के लिए इस क्षेत्र मे घुस पैठ करना और एशिया के देशों का दोहन करना संभव नहीं होगा ।

भारत एवं चीन के पारस्परिक संबंधों के विषय में एक तथ्य सामने आता है कि हमारा संबंध निर्धारण दो ''अतियों'' से प्रभावित रहा है। एक तरफ वे लोग हैं जो सन् 1962 में हुए चीनी आक्रमण के कारण आज तक उसे माफ करने के लिए तैयार नहीं हैं तो दूसरी तरफ वे लोग हैं जो हिन्दी चीनी ''भाई–भाई'' का नारा लगाते रहते हैं । ये दोनों ही अतियां भारत और चीन के बीच सार्थक रिश्ता बनने में बाधा डालती हैं । 21वीं सदी प्रत्येक दृष्टि से एशिया की सदी है । 21वीं सदी को आकर्षक बनाने का बहुत बड़ा दारोमदार इस बात पर है कि चीन और भारत के

संबंधों का क्या रूप निखरता है । सन् 1988 के बाद से चीन ने काफी आर्थिक प्रगति की है वह एशिया प्रशांत आर्थिक सहकार ''एप्रास'' मे भी शामिल हो गया है । एशियाई देशों के जो आर्थिक राजनैतिक संघ बन रहे हैं उनके नेता भी स्वीकार कर रहे हैं कि उनकी दृष्टि दो–चार देशों तक सीमित नहीं है । विकास की उनकी परिकल्पना में समूचा एशिया है और एशियाई देशों का कोई भी संघ इस व्यापक दृष्टि को अपनाए बिना कोई भी अपने लक्ष्य तक नहीं पहुंच सकता । भारत मे आरम्भ किए गए आर्थिक सुधारो की शुरूआत में उपराष्ट्रपति के.आर.नारायणन की चीन यात्रा इस दृष्टि से काफी महत्वपूर्ण रही। आर्थिक सुधारों की शुरूआत में वियत नाम के प्रधानमंत्री ने एशिया के इस भाग मे स्थायित्व बनाए रखने मे भारत की भूमिका को स्वीकार किया। उन्होंने एशिया प्रशांत क्षेत्र के संगठनों में भारतं की भागीदारी का भी समर्थन किया । एशियान, एप्रास, एशियान स्वतंत्र व्यापार क्षेत्र और पूर्व एशिया आर्थिक सहयोग संगठन इत्यादि से भारत को अलग रखने का कारण भारत एवं पाकिस्तान के मध्य विवाद हैं जिनके कारण किसी भी संगठन का सामान्य कामकाज प्रभावित होता है । दक्षेष के सदस्य देश कोई आर्थिक संगठन खड़ा नहीं कर पाए क्योंकि पाकिस्तान भारत के साथ सहयोग को अपने अस्तित्व के लिए खतरा मानता है। आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक किसी प्रकार के संगठन मे सहयोग के बिंदुओं पर चर्चा करने के बजाय वह कश्मीर विवाद उछालने मे अधिक संलग्न रहता है। पश्चिमी देशों ने पिछले करीब पांच दशको से भारत और पाकिस्तान को साथ तौलने की ऐसी परिपाटी चला दी है कि अब कोई भी आर्थिक संगठन दोनों मे से किसी एक को अपनाने व दूसरे को छोड़ने के लिए तैयार नहीं होता और दोनों देशों को साथ लेने का मतलब है कि संगठन के सामान्य कामकाज को भारत एवं पाकिस्तान के बीच सदैव जारी वाद–विवाद मे उलझा लेना भारत और पाकिस्तान के इसी झगड़े का फायदा उठाकर कुछ एशियाई देशों ने उन्हे अलग रखने और अपना नेतृत्व चमकाने की कोशिश की। सिंगापुर, थाईलैन्ड, जापान आदि एशियान, एप्रास तथा पूर्वी एशियाई आर्थिक सहकार संगठन के एशियाई स्वरूप पर जोर देते हैं तो इण्डोनेशिया सरीखे दक्षिण पूर्वी एशियाई देश बड़ा देश होने के कारण क्षेत्रीय शक्ति के रूप में अपनी भूमिका सुरक्षित रखना चाहते हैं।

मलेशिया इस विचार के लिए समर्थन जुटा रहा है कि पूर्व एशिया आर्थिक सहकार मे चीन जापान और दक्षिण कोरिया को शामिल करके एशियान के अन्य सदस्य देशों के विकास को बढ़ावा दिया जाए और एप्रास के भीतर·एशियाई देशों की पकड़ को मजबूत बनाया जाए जबकि दूसरी तरफ अमेरिका आस्ट्रेलिया आदि गैर एशियाई देश इस आर्थिक संगठन का उपयोग एशियाई

देशों पर अपनी पकड़ मजबूत रखने के लिए करना चाहते हैं । एप्रास तथा पूर्वी एशियाई आर्थिक सहकार के परिप्रेक्ष्य में भारत और चीन का आर्थिक सहयोग तथा एशियान के साथ एप्रास में भारत, चीन, जापान और दक्षिण कोरिया की स्थिति एशिया के आर्थिक हितों को एक नया अर्थ, शक्ति और महत्व प्रदान कर सकती है ।[1] वर्तमान प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी बाजपेयी की अमरीका यात्रा के परिप्रेक्ष्य मे महत्वपूर्ण बात यह है कि सन् 1993 के बाद चीन जाने वाले वे पहले प्रधानमंत्री हैं। भारत और चीन के बदलते रिश्ते को विश्व के भू–राजनैतिक वातावरण और दोनो देशों की आर्थिक शक्ति बनने की इच्छा बनने के परिप्रेक्ष्य मे देखा जाना चाहिए । चीन क्षेत्र मे एक विकसित अर्थव्यवस्था के रूप मे उभर रहा है। भारत के साथ चीन का व्यापार जापान की तुलना मे कहीं अधिक है। चीन कुछ विशेष क्षेत्रों मे भारत से ज्यादा निवेश की उम्मीद रखता है । गैस और तेल की खोजों मे हुई वृद्धि के कारण चीन की भारत में दिलचस्पी बढ़ी है। इन दोनो अर्थव्यवस्थाओं की प्रतियोगिता का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि सार्स वायरस के कारण चीनी उद्योग में गिरावट आने के एक महिने मे अमेरिका को भारत का टेक्सटाइल निर्यात 7 अरब डालर तक पहुंच गया। इससे स्पष्ट होता है कि कुछ विशेष क्षेत्रों जैसे वस्त्र निर्यात इत्यादि में भारतीय एवं चीनी अर्थव्यवस्थाएं एक दूसरे की प्रतिद्वंदी हैं। अतः चीन के साथ व्यापार के लिए किसी योजना को तैयार करने के लिए उच्च राजनयिक क्षमता की आवश्यकता है । दूसरी तरफ भारत आर्थिक और सैन्य मामले में एक बड़ी शक्ति के रूप मे उभरकर सामने आ रहा है। उसे विश्व समुदाय की सहानुभूति एवं समर्थन मिला हुआ है। भारतीय राजनय धीरे–धीरे पश्चिमी देशों एवं जापान के साथ अपने संपर्क सूत्रों को बढ़ा रहा है । अफगानिस्तान युद्ध के बाद अफगानिस्तान, पाकिस्तान और केन्द्रीय एशिया में चीन की सीमा के पास अमेरिकी फौजे तैनात की जा रहीं हैं । इन सारी परिस्थितियों के मद्दे नज़र चीन भारत के साथ अपने संबंधों पर पुनर्विचार कर रहा है । यही कारण है कि सिक्किम पर भारत के कब्जे को लेकर वह अपनी स्थिति पर पुनर्विचार कर रहा है । आवश्यकता इस बात की है कि बदले हुए अंतर्राष्ट्रीय कूटनीतिक समीकरणों के तहत भारत चीन द्वारा उपलब्ध कराए गए इस अवसर का उपयोग करे और इस अवसर का उपयोग न सिर्फ चीन के साथ सीमा विवाद हल करने मे करे बल्कि इस आधार पर विश्व मे अपने वृद्धिशील आर्थिक एवं सामरिक भूमिका भी दर्ज कराएं ।

1.सिंह, रामपाल ''एशिया की जरूरत भारत–चीन सहयोग'' स्वतंत्र भारत कानपुर, 12 नवम्बर 1994 ।

<u>निष्कर्ष एवं सुझाव :</u>

आज विश्व पटल पर बढ़ती हुई सामरिक–आणविक एवं आर्थिक भूमिका के कारण चीन का अंतर्राष्ट्रीय व्यक्तित्व निखरा है । एशियाई आर्थिक संकट के दौरान चीन का उसे संभालने का प्रयत्न करते हुए स्वयं को उत्तरदायी राष्ट्र के रूप मे स्थापित करने के प्रयत्न के साथ अमेरिका से स्वयं को समान व्यापार प्रतिभागी का दर्जा दिये जाने की मंशा किसी भी दृष्टि से गलत नहीं कही जा सकती परन्तु इस परिप्रेक्ष्य में भारत को स्वयं को किसी से कम करके आंकने की आवश्यकता नहीं है । आवश्यकता इस बात की है कि चीन के साथ संबंध निर्धारण मे प्रथम तो भारत अपने दृष्टिकोण को पुर्नपरीक्षित करे, द्वितीय उसे यथार्थ राष्ट्रीय हित पर आधृत करे । बेशक आज चीन की सामरिक आर्थिक स्थिति भारत से ऊँची है परन्तु इतिहास मे इस बात के अनेक उदाहरण हैं जब युद्ध सामरिक शक्ति से नहीं राष्ट्र के मनोबल से लड़े गए । यहाँ बात चीन के साथ युद्ध की नहीं है क्योंकि चीन के साथ भारत का युद्ध सिर्फ दो देशों का युद्ध नहीं होगा बल्कि दक्षिण एशिया में विश्व की दूसरी महाशक्तियों के सक्रिय हस्तक्षेप को बढ़ावा देने वाला भी सिद्ध होगा जो भारत अपने अल्प एवं दीर्घकालीन राष्ट्रीय हित में कभी नहीं चाहेगा । अस्तु यहां विचार का सन्दर्भ चीन के साथ भारत के संबंध निर्धारण के प्रयास हैं जिनमे हमे अपने राष्ट्रीय गौरव की अन्तर्चेतना को जागृत करते हुए चीन के साथ बराबरी के सम्बन्ध निर्धारण का प्रयास करना होगा । चाहे मुद्दा भारतीय राष्ट्रपति की चीन यात्रा के दौरान शक्ति प्रदर्शन के तौर पर चीन द्वारा परमाणविक विस्फोट का हो या 1979 मे श्री बाजपेयी की पीकिंग यात्रा और चीन द्वारा वियतनाम के विरूद्ध युद्ध छेड़ने की कार्यवाही का या निर्वासित तिब्बती सरकार द्वारा प्रेषित प्रतिनिधि मण्डलों के साथ वार्ता मे चीन की माईनोरिटी कमीशन के अपेक्षाकृत कम महत्व वाले अधिकारी के शामिल किये जाने का, समस्त मामलों मे चीनी अहम हुंकारे भरता सुनाई पड़ता है । दरअसल चीन बराबरी की सौदे बाजी की भाषा ही समझता है यह तथ्य चीन के साथ सम्बन्ध निर्धारण करते हुए भारत को ध्यान मे रखना चाहिए।

अब इस बात के लिए समय हमें इजाज़त नहीं देता कि हम वर्षों पहले पं. नेहरू द्वारा तिब्बत के प्रति अपनाई गई भूल का पिष्ट पेषण करते रहें । आज आवश्यकता उस भूल को सजगता के साथ सुधारने की है बगैर यह भूले कि हमारा समकक्षी कूटनीतिक मामलों मे काफी चातुर्य सम्पन्न है ।

इस सन्दर्भ में भारत द्वारा चीन के साथ तिब्बती मुद्दे को केन्द्र में रखकर सीमा विवाद के लिए वार्ता संचालित करने की आवश्यकता है । अब ऐसा किसी आदर्शवाद के अंतर्गत नहीं किया जाना है बल्कि भारत के सम्यक राष्ट्रीय हित के संधान की आवश्यकता इसका मूल कारण है । "तिब्बत" भारत एव चीन के मध्य बफर स्टेट के रूप मे विद्यमान था । यद्यपि रूसी साम्राज्य लिप्सा के समतुल्य ब्रिटिश प्रभाव तिब्बत पर स्थापित करने के परिप्रेक्ष्य मे भारत की तत्कालीन ब्रिटिश सरकार द्वारा उस पर चीनी सुजरेन्टी को मान्यता दी गई थी । तथापि उस समय यह नहीं सोचा गया कि रूसी साम्राज्य लिप्सा से तिब्बत को मुक्त रखने का यह प्रयास भविष्य में भारतीय सीमाओं पर चीनी आक्रमण की दस्तक के रूप में प्रतिफलित होगा । वैसे भी भारत की विदेशी सरकार को अपने प्रभाव क्षेत्र की तत्कालीन सुरक्षा का भय सता रहा था, भविष्य के भारत के सन्दर्भ मे अनुमान करने की उसे आवश्यता ही नहीं तथापि उसका यह प्रयत्न कालान्तर मे तिब्बत पर चीनी दावे के रूप मे प्रतिफलित हुआ जिसे तत्कालीन भारतीय सरकार ने एशियाई मैत्री के भाव के चलते स्वीकार कर लिया ।

मैकमोहन रेखा को स्वीकृति देने वाले सन् 1913–'14 के शिमला समझौते पर भी तिब्बत के सम्प्रभु राष्ट्र के तौर पर हस्ताक्षर इस विचार को गहनता के साथ पुष्ट करते हैं कि तिब्बत भारत व चीन के बीच बफर स्टेट रहा है और भविष्य में भी तिब्बत को शामिल किये बिना भारत–चीन सीमा विवाद का कोई हल सम्भव नहीं ।

भारत की विभिन्न सरकारों की तिब्बती नीति एक निश्चित ढ़र्रे पर चलती रही है आज आवश्यकता इस बात की है कि विश्व की परिवर्तनशील राजनीतिक, आर्थिक, कूटनीतिक परिस्थितियों के मद्दे नज़र तिब्बत समस्या को देखा जाए । आज भारत क्या विश्व का कोई भी राष्ट्र बगैर अपने राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के उद्देश्य के किसी प्रभुता सम्पन्न शक्तिशाली राष्ट्र से उसके अधिकृत क्षेत्रों को छीनने का प्रयास करता नहीं दिखता । कुवैत एवं अफगानिस्तान मे न्यस्त अमेरिकी हितों का मुद्दा ही था जिसके कारण अमेरिकी नेतृत्व मे बहुराष्ट्रीय सेनाओं ने इन देशों पर आक्रमण किया परन्तु कुवैत, सोमालिया, बोस्निया की तरह तिब्बत मे इन राष्ट्रों का कोई प्रत्यक्ष हित न्यस्त नहीं है इस कारण इनसे तिब्बत की मुद्दे पर सार्थक पहल की उम्मीद करना व्यर्थ है । इस सन्दर्भ मे अमेरिका तथा यूरोपीय शक्तियों द्वारा तिब्बत में मानवाधिकारों के उल्लंघन पर तो चीन को धमकी देना ज़ग जाहिर है परन्तुं तिब्बत की मुक्ति के सन्दर्भ मे उन्होंने

भी चुप्पी साध रखी है अतः भारत सरकार को चाहिए कि वह अपनी कूटनीति को इस दिशा मे नवीन आयाम देते हुए तिब्बत के मुद्दे को संयुक्त राष्ट्रसंघ की कार्यसूची मे शामिल करवाए ।

तिब्बत समस्या के समाधान के सन्दर्भ में दूसरा दृष्टिकोण उग्र विचारधारा का समर्थन करता है इस दृष्टिकोण के अनुसार तिब्बतियों को तिब्बत मे स्वतंत्रता के लिए हर वह प्रयास करना चाहिए जिससे कि चीन को तिब्बत पर शासन करने मे अत्यधिक कठिनाई हो क्योंकि स्वतंत्रता दान में नही मिलती बल्कि उसके लिए कठोर संघर्ष और महान त्यागों की जरूरत होती है।

एक तरफ इसके लिए क्रांतिकारी प्रयास होने चाहिए जैसे कि भारत में स्वतंत्रता के पूर्व क्रांतिकारियों द्वारा किए गए थे तथा दूसरी तरफ दलाई लामा जी के मार्गदर्शन से गांधीजी की तरह तिब्बत के अन्दर तिब्बतियों द्वारा चीन के प्रति पूर्ण असहयोग का रास्ता अपनाया जाना चाहिए तथा अन्य अहिंसात्मक तरीके भी अपनाए जाने चाहिए इन आन्दोलनों मे तिब्बती जनता मे पूर्णतः एकता झलकनी चाहिए ताकि आन्दोलन के समय तिब्बत मे चीनी सरकार का अस्तित्व ही समझ मे न आए तिब्बती जनता को यह सब प्रयास तिब्बत के अन्दर करना चाहिए ताकि चीन के कानों में उनकी स्वतंत्रता की मांग की आवाज गूंजे इसके अलावा विश्व जनमत को दलाई लामा द्वारा इस बात के लिए राजी करना चाहिए कि चीन पर पूर्णतः आर्थिक प्रतिबन्ध लग सकें क्योंकि उसने एक देश से उसकी स्वतंत्रता छीनी है तथा दलाई लामा जी को चाहिए कि विश्व को तिब्बत के चीन से अलग अस्तित्व होने के सबूत उपलब्ध कराकर उन्हे अपने पक्ष मे लाएं। अमेरिका को चाहिए कि वह चीन पर यूरोपीय शक्तियों द्वारा संयुक्त रूप से दबाव बढ़ाये, यह दबाव आर्थिक तथा सैन्य दोनो तरफ से होना चाहिए। अगर अमेरिका स्वतंत्रता का पक्षधर है तो उसे तिब्बत को समर्थन देकर यह सिद्ध करना होगा कि वह वास्तव मे स्वतंत्रता का पक्षधर है चाहे इसके लिए उसे कुछ नुकसान भी उठाना पड़े अन्यथा यही जाहिर होगा कि अमेरिका की स्वतंत्रता दिलाने की बातें सिर्फ उन सैन्य रूप से कमजोर देशों के लिए है जैसा कि उसने ईराक में किया।

भारत सरकार को चाहिए कि वह अपनी अत्यधिक शिक्षित तथा युवाशक्ति जो कि भारत में काफी संख्या में वर्तमान मे उपलब्ध हैं उनका पूर्ण बुद्धिमत्ता से उपयोग करे ताकि भारत की प्रतिभा का विदेशों मे पलायन न हो। इस प्रतिभा के उपयोग द्वारा भारत को स्वयं के संसाधनो के उपयोग द्वारा तथा वैज्ञानिक अविष्कारों के द्वारा कम खर्च मे एक सैन्य तथा आर्थिक महाशक्ति के

रूप में विश्व में स्थापित किया जा सके इसके लिए दो बातों की आवश्यकता है कि भारत पूर्णतः स्वयं के संसाधनो द्वारा आत्मनिर्भर हो तथा वैज्ञानिक क्षेत्र में उसकी प्रगति पहले स्थान पर हो ।

तिब्बत के संबंध मे भारत को उसकी स्वतंत्रता के हर प्रयास को पूर्ण समर्थन देना चाहिए क्योंकि तिब्बत के स्वतंत्र होने से भारत की साम्राज्यवादी चीन से एक सीमा पूर्णतः सुरक्षित होती है तथा यह वैसे भी न्यायोचित है क्योंकि तिब्बत का पूर्व में स्वतंत्र अस्तितव होने के पूर्ण प्रमाण मौजूद हैं ।

चीन को चाहिए कि वह अपनी जनता की खुशहाली का पूर्णतः प्रयास करें तथा एशिया मे साम्राज्यवादी विचारधारा की जगह सहअस्तित्व की विचारधारा से रहे इससे चीन तथा भारत समेत दक्षिण एशिया के देश सैन्य खर्चे से बच सकेगी और इन देशों की जनता आर्थिक रूप से खुशहाल जीवन व्यतीत कर सकेगी । एशिया मे हरदम के लिए शांति का माहौल बनाए रखने के लिए तिब्बतियों को उनके स्वतंत्रता का हक सहर्ष दे दे ।

साम्यवादी चीन की स्वतंत्रता की शैशवावस्था से ही भारत ने चीन की संयुक्त राष्ट्रसंघ सदस्यता के लिए समर्थन देना आरम्भ कर दिया था । इसके पीछे सम्भवतः पं. नेहरू का यह विचार निहित था कि संयुक्त राष्ट्रसंघ कर सदस्य बनवाकर चीन को अंतर्राष्ट्रीय कानून व परम्पराओं का पालन करने के लिए अपेक्षाकृत अधिक आसानी से बाध्य किया जा सकता था अपेक्षाकृत उस चीन के जो अंतर्राष्ट्रीय बिरादरी का सदस्य न होता । स्टालिन ने इसके विपरीत चीन के विरूद्ध मंगोलिया का समर्थन करते हुए उसके संयुक्त राष्ट्रसंघ सदस्यता का मार्ग प्रशस्त किया । सम्भवतः यह भारत के यथार्थ राष्ट्रीय हित में होता कि उसने उस समय संयुक्त राष्ट्रसंघ में तिब्बत के विषय मे लाए गए प्रथम प्रस्ताव का समर्थन किया होता साथ ही तिब्बत की संयुक्त राष्ट्रसंघ सदस्यता का भी समर्थन किया होता । इससे भारत–चीन के मध्य बफर स्टेट के रूप मे तिब्बत की स्थिति मजबूत होती ।

यह वही चीन है जिसकी संयुक्त राष्ट्रसंघ सदस्यता को भारत ने अपना समर्थन दिया था, और जो आज संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में भारत की सदस्यता के प्रस्ताव को वरीयताओं मे निम्नतम स्तर पर रखता है । उसकी दृष्टि में सुरक्षा परिषद की स्थाई सदस्यता का पात्र अफ्रीकी महाद्वीप, लैटिन अमेरिका या फिर मध्य एशिया का कोई उभरता हुआ राष्ट्र हो सकता है, दक्षिण पूर्वी एशिया का स्थान इसके बाद है तत्पश्चात् दक्षिण एशिया के किसी देश का स्थान हो सकता है । अतः इस सन्दर्भ मे समर्थन को लेकर भी भारत को चीन के साथ संबंध निर्धारण में चापलूसी

की आवश्यकता नहीं है । इसके लिए भारत को अन्य देशो से सम्बन्ध सुधारने व समर्थन जुटाने का प्रयास करना होगा ।

भारत–चीन संबंध दक्षिण एशिया में भारत–पाक–चीन त्रिकोण से संचालित होते हैं । जून 2003 मे श्री बाजपेयी चीन यात्रा के संबंध मे भी चीन ने यह स्पष्ट कर दिया है कि भारत के साथ किसी भी किस्म का समझौता पाकिस्तान के साथ चीन के मैत्री संबंधों को खत्म नहीं करेगा। यह कोई नई बात नहीं अपितु चीन की क्षेत्रीय राजनीति का एक हिस्सा है । चीन ने पाकिस्तान के साथ भारत के सन् 1965 एवं 1971 के युद्ध मे पाकिस्तानी पक्ष का ही समर्थन किया इतना ही नहीं वह शिमला समझौते तथा संयुक्त राष्ट्रसंघ प्रस्तावों को एक साथ लागू करने की बात पर जोर देते हुए कश्मीर समस्या का पाकिस्तान के हित मे समाधान चाहता है ।

प्रायः तिब्बतियों के चीन के विरूद्ध जारी संघर्ष की तुलना भारत के अलगाववादी आंदोलनों से करते हुए दोनों आन्दोलनों के स्वरूप में साम्यता बिठाने की कोशिशें की जाती हैं जो तिब्बत मुद्दे पर भारत को नैतिक, राजनैतिक तौर पर कमजोर करने की एक चाल है । परन्तु भारत के जम्मू कश्मीर या पूर्व में पंजाब राज्य मे चलाए जा रहे अलगाववादी आन्दोलनो एवं तिब्बत की मुक्ति हेतु तिब्बतियों के चीन विरोधी जन आन्दोलनों के उद्देश्य में व्यापक भिन्नता है । पंजाब या जम्मू कश्मीर कभी उस भांति सम्प्रभुता सम्पन्न नहीं थे जिस प्रकार सन् 1959 मे साम्यवादी कब्जे के पूर्व तिब्बत था। अस्तु चाहे कश्मीरी अलगाववादी हों, पंजाबी खाड़कुए, नगाविद्रोही, नक्सलवादी या अपने विकास के लिए मूल राज्य से पृथक राज्य की मांग करने वाले बुंदेलखण्ड, हरितप्रदेश का समर्थन करने वाले राजनीतिक कार्यकर्ता (इस सन्दर्भ मे उत्तर प्रदेश में उत्तरांचल, मध्यप्रदेश मे छत्तीसगढ़, बिहार में झारखण्ड इत्यादि राज्यों का गठन दृष्टव्य है) सभी सम्प्रभु भारत की भौगोलिक अखण्डता की परिधि के भीतर ही स्वायत्ता पाने के अधिकारी हैं । आज के शक्तियों के विकेन्द्रीकरण के युग में इस मत पर सभी बौद्धिकजन सहमत होंगे कि "विकास प्रस्फुटन मे निहित होता है, संकुचन मुंरझाना है व मुरझाना मृत्यु है ।"

अतः उपरोक्त भारतीय आंदोलनों के सन्दर्भ में विकेन्द्रीकरण एवं भारत की भौगोलिक सीमाओं के अन्तर्गत स्वायत्ता का मामला बनता है जबकि सम्प्रभु राष्ट्र के रूप में सन् 1959 से पूर्व स्थापित तिब्बत के चीन द्वारा बलात अधिग्रहण एवं तिब्बत की समस्या को चीन के अल्पसंख्यक वर्ग की समस्या घोंषित किये जाने का चीनी झूठ किसी भी तरह से तिब्बत के मुद्दे को भारतीय पृथकतावादी आंदोलनों के समकक्ष नहीं ठहरा सकता । इस सन्दर्भ में निर्वासित

तिब्बती सरकार की संसद के अध्यक्ष रिन पोचे साम डांग का यह कथन दृष्टव्य है, ''भारत और तिब्बत की स्थिति में एक मौलिक अन्तर है, उसको समझना पड़ेगा । भारत में जितने अलगाववादी आंदोलन हैं उनके और हमारी साधना के उद्देश्य में कोई तुलना नहीं है । चाहे वह कश्मीर का प्रश्न हो, चाहे पंजाब का उग्रवाद हो या असम–मिजोरम का सवाल हो इतिहास की दृष्टि से कहीं पर भी उनके दावे में मानव के मूल अधिकारों का प्रश्न नहीं छिपा है ।............... भारत मे ब्रिटिश राज के दिनों मे ये रियासते प्रभुसत्ता सम्पन्न देश नहीं थे । दूसरी तरफ यहां मानवाधिकारों का हनन नहीं हुआ, सांस्कृतिक संहार नहीं हुआ ।''[1]

फिर भी यदि हम वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों मे तिब्बत के मुद्दे का व्यवहारिक हल ,खोजने का प्रयत्न करें जैसा कि माननीय दलाई लामा का विचार है तो समस्त उग्र सुझावों के बावजूद तिब्बत के स्वायत्त दर्जे को मान्यता देने के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय दृष्टिगोचर नहीं होता । जैसा कि 3 दिसम्बर 1997 को ''इण्डियन एक्सप्रेस'' नामक समाचार पत्र मे प्रकाशित दलाई लामा के साक्षात्कार से स्पष्ट होता है कि ''वे चीन के साथ विकास की भौतिक उपलब्धियों को बांटने को तैयार हैं परन्तु धार्मिक–आध्यात्मिक क्षेत्र मे उचित स्वायत्ता चाहते हैं । चीनियों को तिब्बतियों के अलगाववाद से डरने की आवश्यकता नहीं है और तिब्बतियों को भी चीन द्वारा बाहर निकालने का भय नहीं होना चाहिए ।''

इस प्रकार तिब्बती समस्या के सन्दर्भ मे भारत का दृष्टिकोण ''खुला छोड़ दो'' (लेजिस फेयर) का नहीं होना चाहिए । कूटनीतिक दृष्टि से सिक्कम मसले के हल के लिए प्रयत्नशील होने के साथ भारत को चीन के साथ सीमा समझौते मे तिब्बती समस्या को मुद्दा बनाना चाहिए। इस भय से कि इसके कारण चीन वार्ता को तैयार नहीं होगा, भारत को तिब्बती मुद्दे का त्याग नहीं करना चाहिए बल्कि न सिर्फ चीन के साथ वार्ता के परिप्रेक्ष्य मे अपितु सभी अंतर्राष्ट्रीय मंचों से तिब्बत के मानवाधिकार उल्लंघन एवं पर्यावरण विनाश के मुद्दों के साथ तिब्बत की स्वतंत्रता एवं उससें कम स्तर पर उसकी स्वायत्ता के मुद्दे को उठाते रहना चाहिए । ऐसा करना न सिर्फ चीन पर भारत का दबाव बढ़ायेगा बल्कि इससे भारत की क्षेत्रीय राजनीति मे सुदृढ़ भूमिका भी स्पष्ट होगी जिससे भारत के दीर्घकालीन राष्ट्रीय हित भी संरक्षित रहेंगे ।

---

1. रिन पोचे साम डांग के राजेश जोशी द्वारा लिए गए साक्षात्कार का अंश, ''स्वतंत्र देश में शरणार्थी मौत भी बेहतर'', जनसत्ता, दिल्ली, 14 जुलाई 1992

कूटनीति दृष्टि से सिक्किम की मान्यता के साथ–साथ भारत को चीन के साथ सीमा वार्ता के प्रत्येक प्रयास में तिब्बती समस्या को न सिर्फ उठाना चाहिए अपितु उसमें मध्यस्थ बनने का प्रयत्न भी करना चाहिए।

21वीं शताब्दी मानवीय विवेक के चरमोत्कर्ष की शताब्दी है। आज सम्प्रभुता एवं अधिग्रहण के मामले अपने समाधान के लिए युद्ध एवं भौतिक शक्ति के प्रयोग से कहीं अधिक राजनीतिक समझबूझ एवं सौदेबाजी पर निर्भर करते हैं । राजनीति वास्तव में एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें इस बात का निर्धारण होता है कि किसे, कब, कहां और क्या प्राप्त होगा। अतः अपने राष्ट्रीय आत्मसम्मान को प्रतिष्ठित रखते हुए अतीत की भूल को याद रखते हुए भारत को सभी अन्तर्राष्ट्रीय मंचों से तिब्बत में मानवाधिकार उल्लंघन एवं पर्यावरण असंतुलन के मुद्दों के साथ तिब्बत की स्वतंत्रता एवं उससे कम स्तर पर उसकी स्वायत्ता के मुद्दे को उठाते रहना चाहिए । वस्तुतः तिब्बती मुद्दे का समर्थन भारत के वृहद् राष्ट्रीय हित में होगा। चीन भारत को पाकिस्तान के साथ विवाद शांति पूर्वक हल करने का उपदेश देता है, यदि सिक्किम की बात छोड़ दें तो कम से कम वह दो भारतीय राज्यों को भारत से बाहर स्वीकार करता है, चीन प्रायः भारत से संयुक्त राष्ट्रसंघ के आदेशों के पालन की अपील करता है परन्तु चाहे कारगिल के समय लद्दाखी सीमा पर चीनी फौजों की तैनाती बढ़ाने की बात हो या आणविक नॉन–प्रालिफरेशन संधि की प्रस्तावों की चीन द्वारा अवमानना या तिब्बत पर संयुक्त राष्ट्रसंघ प्रस्ताव संख्या 1723 का उल्लंघन हो भारतीय नेतृत्व द्वारा कभी सार्वजनिक रूप से चीन की आलोचना नहीं की जाती । होना तो यह चाहिए कि भारत को तिब्बत एवं ताइवान को चीन का हिस्सा न मानकर विवादित क्षेत्र घोषित कर देना चाहिए। इस परिप्रेक्ष्य मे उसे चीन पर दबाब बनाए रखना चाहिए और ऐसे सभी राष्ट्रों से अपने कूटनीतिक संबंध मजबूत करने चाहिए जिनके साथ चीन के विवाद एवं मतभेद हैं क्योंकि राजनीति में शत्रु का शत्रु मित्र होता है। चीन के स्प्रेटली विवाद के विषय में मनीला तथा हनोई से भारत को अपने संपर्क सूत्र मजबूत करने चाहिए।

सामरिक दृष्टिकोण से चीन का प्रयत्न भारत को घेरने का है। चीन ताइवान को चीन का हिस्सा कहता है परन्तु भारत से टूट कर अलग हुए पाकिस्तान को निरन्तर आणविक सशस्त्रीकरण कर रहा है। उसके लिए जिन जियांग प्रान्त का आतंकवाद, "आतंकवाद" है परन्तु भारत में सीमा पार से चलाया जा रहा आतंकवाद उसके लिए कोई मायने नहीं रखता। पाकिस्तान

के शस्त्रीकरण के अतिरिक्त कोको द्वीपसमूह आणविक पनडुब्बियों की तैनाती, म्यांमार के सैन्य शासन पर चीनी वदर्हस्त, तिब्बत मे न्यूक्लियर परीक्षण का निर्माण तथा अगणित न्यूक्लियर हथियारों का जमावड़ा भारत को सामरिक रूप से बंधक बनाना दर्शाता है। वस्तुतः चीन अपनी "मिडिल किंगडम" की छवि प्राप्त करने के लिए तीव्रता से सक्रिय है। श्री राव की यात्रा के दौरान एक ध्रुवीय विश्व व्यवस्था के खतरों से बचने के लिए भारत–चीन सहयोग को आवश्यकता के रूप में इंगित किया गया था। वस्तुतः चीन बहुध्रुवीय विश्व की तो वकालत करता है परन्तु एशिया को वह एकध्रुवीय ही देखना चाहता है । चीन का आदर्श "एकीकृत एशिया" नहीं "विखण्डित व विरोधाभास ग्रस्त एक ऐसा एशिया" है जो अपनी सामरिक, आर्थिक एवं राजनायिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए चीन का मुखापेक्षी रहे। इसके लिए वह सामरिक दृष्टि से भारत पर दबाब बनाने के लिए भारत को घेर रहा है, उत्तरी कोरिया को जापान के विरूद्ध खड़ा कर रहा है, तथा एशिया में अमेरिका के बढ़ते वर्चस्व को कम करने का प्रयत्न कर रहा है। आतंकवाद के विरूद्ध कार्यवाही में अमेरिका का प्रत्यक्ष केन्द्र तो अफगानिस्तान बना परन्तु उसमें अपने सैन्य अड्डे, उजबेकिस्तान, किरगिस्तान तथा फिलीपींस में भी स्थापित कर रखे हैं। इस प्रकार शनैः–शनैः मध्य एशिया से लेकर दक्षिण पूर्व एशिया तक अमेरिकी रणनीतिक भूमिका विस्तृत नजर आती है। पाकिस्तान मे भी बढ़ते अमेरिकी वर्चस्व के कारण चीन चिंताग्रस्त है।

जून 2003 में भारत प्रधानमंत्री की बीजिंग यात्रा के दौरान चीन के नर्म रूख के लिए कुछ हद तक उपरोक्त अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य भी उत्तरदायी हैं। यहां एक बार पुनः तिब्बत के मुद्दे पर भारतीय विदेश नीति के विफलता दृष्टिगोचर हुई। भारत ने स्वायत्तशासी क्षेत्र तिब्बत को चीन का हिस्सा स्वीकार कर लिया तथा तिब्बतियों को भारत भूमि से चीन के विरूद्ध किसी भी प्रकार की राजनीतिक गतिविधि संचालित न करने देने का भी चीन को आश्वासन दिया गया। होना तो यह चाहिए था कि भारत को तिब्बत व ताइवान को चीन का हिस्सा न मानकर विवादास्पद क्षेत्र घोषित कर देना चाहिए। इस परिप्रेक्ष्य में उसे चीन पर दबाव बनाए रखना चाहिए और ऐसे सभी राष्ट्रों से अपने कूटनीतिक संबंध मजबूत रखने चाहिए जिनके साथ चीन के विवाद तथा मतभेद हैं। क्योंकि शत्रु का शत्रु मित्र होता है । चीन के स्प्रेटली विवाद के विषय में भारत को मनिला तथा हनोई से अपने संपर्क सूत्र मजबूत करने चाहिए परन्तु ऐसा हुआ नहीं।

जून 2003 की बीजिंग यात्रा के दौरान भारत का दृष्टिकोण व्यापारिक व आर्थिक रहा 2003 के कैनकुन सम्मेलन के दौरान भारत चीन सहित अन्य विकासशील राष्ट्रों द्वारा विकसित

राष्ट्रों की कृषि सब्सिडि जारी रखने के मुद्दे पर किया गया मजबूत प्रतिरोध इस तथ्य को रेखांकित करता है कि एशिया तथा विश्व स्तर पर भारत तथा चीन का आर्थिक सहयोग एक युगीन आवश्यकता है। अपनी यात्रा के दौरान श्री बाजपेयी ने आर्थिक सहयोग के प्रयासों को परम्परागत ढ़ाचे से हटाकर सूचना प्रौद्योगिकी जैसे तीव्र विकासमान क्षेत्र पर केन्द्रित करने पर बल दिया ताकि ठोस नतीजे सामने आ सकें। पूर्व चीनी प्रधानमंत्री भारतीय फर्म इन्फोसिस को शंघाई में उद्योग लगाने के लिए पहले ही आमंत्रित कर चुके हैं। सूचना प्रोद्योगिकी के क्षेत्र मे चीन का ध्यान उत्पादों पर है जबकि भारतीय साफ्टवेयर उद्योग अनुबंध सेवाओं तथा समाधान के क्षेत्र में अग्रसर है। श्री बाजपेयी की बीजिंग यात्रा से यह बात स्पष्ट है कि भारत एवं चीन दोनों व्यापारिक क्षेत्र मे विशेषकर सूचना प्रौद्योगिकी में एक दूसरे का सहयोग चाहते हैं जैसा कि सन् 2008 में बीजिंग मे आयोजित होने वाले ओलंपिक खेलों के दौरान भारत द्वारा भारतीय एवं चीनी सूचना फर्मों के व्यवसायिक सहयोग का सुझाव रखा गया है। इसके अतिरिक्त बहुआयामी आर्थिक प्रगति के लिए सहयोग के नए क्षेत्रों का पता लगाने के उद्देश्य से अर्थशास्त्रियों एवं अधिकारियों के द्विपक्षीय संयुक्त अध्ययन दल के गठन की भी घोषणा की गई । प्राचीन रेशम मार्ग नाथूला दर्रे को लोगों तथा व्यापारिक उत्पादों के आवागमन के लिए खोलने तथा सिक्किम स्थित चांगू व तिब्बत स्वायत्तशासी क्षेत्र के रेकिनगंग को सीमा व्यापार स्थल बनाने पर सहमति हुई। परन्तु व्यापारिक क्षेत्र में सहयोग के आयामों से तिब्बत के प्रति पुरातन भारतीय नीति में कोई परिवर्तन नहीं आया है। श्री बाजपेयी की चीन यात्रा के दौरान न तो दलाई लामा को भारत छोड़कर जाने का आश्वासन चीन को दिया गया न ही पूर्व प्रचलित नीति का परित्याग किया गया कि तिब्बतियों को भारत भूमि से चीन के विरूद्ध गतिविधियां संचालित नहीं करने दी जायेंगी। यद्यपि सिक्किम के माध्यम से व्यापार संचालित करने पर चीन की सहमति को सिक्किम को भारतीय राज्य के रूप में मान्यता प्रदान करने के रूप में प्रचारित किया गया, तथापि चीन ने इस तथ्य को यह कहकर नकार दिया कि इस तरह के मसले रातों रात हल नहीं किये जाते। चीन द्वारा सरकारी बेवसाइट से सिक्किम को स्वतंत्र देश के रूप में हटाया जाना, जैसा कि भूतपूर्व भारतीय विदेश सचिव श्री जे.एन. दीक्षित का भी विचार है पर्याप्त नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि सिक्किम के मामले में भी चीन सौदेबाजी करना चाहता है। इस संदर्भ मे ध्यातव्य है कि चीन अब तक सिक्किम को स्वतंत्र देश के रूप में, अरूणांचल प्रदेश को चीन के प्रांत के रूप में तथा जम्मू एवं कश्मीर को विवादास्पद क्षेत्र मानता रहा है।

उपरोक्त परिदृश्य के अन्तर्गत यह तथ्य स्पष्ट होता है कि भारत एवं चीन के मध्य व्यापारिक सहयोग तो बढ़ा है परन्तु सामरिक एवं राजनायिक संदर्भ में भारत को चीन के साथ यथार्थ आधृत नीति निर्धारण की आवश्यकता है। इस संदर्भ में ध्यातव्य है कि विश्व में भारत व चीन ही ऐसे पड़ौसी है जिनकी सीमाऐं पारस्परिक सहमति के आधार पर निश्चित नहीं हैं।

अतः भारत को न सिर्फ चीन के साथ औचित्यपूर्ण सीमा निर्धारण पर बल देना चाहिए अपितु इन वार्ताओं में तिब्बती पक्ष को भी शामिल करने पर जोर देना चाहिए। इसके अतिरिक्त चीन को दलाई लामा से वार्ता करने के लिए भी प्रेरित करना चाहिए । जून 2003 को बाजपेयी की चीन यात्रा के दौरान तिब्बत स्वयात्तशासी क्षेत्र को चीन का हिस्सा मान लेने की भारतीय नीति को भारत की असफलता माना जा रहा है तथापि इस नियतार्थ यह भी निकलता है कि अक्साई चिन सरीखे जो इलाके जो तिब्बती स्वायत्तशाही क्षेत्र में नहीं आते उन पर भारत चीन का अधिकार स्वीकार नहीं करता । कुछ भी हो परन्तु भारत की उपरोक्त मध्यम मार्गी नीति में संशोधन की आवश्यकता है भारत को खुले तौर पर तिब्बत की स्वायत्ता का समर्थन करना ही चाहिए यदि भारत अक्साई चिन, तिब्बत, सिक्किम, पाकिस्तान को भूलकर चीन के साथ संबंध निर्धारण प्रयत्न करता है तो ऐसी व्यग्रता भविष्य के लिए हानिकारक सिद्ध होगी यद्यपि इसमें व्यापारिक विवशताऐं हैं क्षेत्रीय राजनीति एंव सामरिक समझ की आवश्यकता है तथापि तिब्बत के मुद्दे को अन्तर्राष्ट्रीय रूप से जीवन्त बनाए रखना, भारत के दीर्घकालीन राष्ट्रीय हित में होगा ।

तिब्बत का संविधान

जबकि यह पूर्णतया स्पष्ट हो चुका है कि तिब्बत में वर्तमान समय में सरकार की जो व्यवस्था कियाशील है वह तिब्बत के लोगों की वर्तमान आवश्यकताओं तथा भविष्यगत विकास के प्रति पर्याप्त रूप से उत्तरदायी नहीं है –

और जबकि –

यह आकांक्षित है कि महात्माबुद्ध द्वारा प्रतिष्ठित "न्याय" "समानता" तथा "लोकतंत्र" के विचार तिब्बत की सरकार को सक्रिय व मजबूत बनाएं ।

और जबकि यह आवश्यक है कि तिब्बत के लोगों को अपने भाग्य निर्माण में प्रभावशाली भूमिका प्राप्त हो,

ऐसी स्थिति में सन् 1961 में श्रीमान दलाई लामा आदेशित करते हैं और इस प्रकार आदिष्ट करते हैं–

प्रथम अध्याय

अनुच्छेद एक, यह संविधान उस दिन से क्रियाशील माना जायेगा जो दिन श्रीयुत् दलाई लामा निर्धारित करेंगे।

अनुच्छेद दो –तिब्बती राज्य की प्रकृति – महात्मा बुद्ध के सिद्धांतों पर आधृत तिब्बत एक लोकतंत्रात्मक राज्य होगा। वर्तमान संविधान में कोई भी परिवर्तन संविधान में दिये गये विशेष प्रावधानों के अलावा नहीं किया जा सकेगा।

अनुच्छेद तीन –सरकार के सिद्धांत– तिब्बत की सरकार का यह कर्तव्य होगा कि वह "मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा" से स्वयं को संपृक्त रखे तथा तिब्बत के लोगों के नैतिक एवं भौतिक कल्याण का संवर्धन करें।

अनुच्छेद चार – संवैधानिक अवैधता का निर्णयन –

(क) ऐसा कोई भी कानून, अध्यादेश या विनियम या अन्य कोई प्रशासनिक आदेश जो संविधान की किसी धारा के विरूद्ध है वह संविधान से अपनी विरूद्धता की सीमा तक अमान्य होगा।

(ख) कोई कानून, अध्यादेश, विनियम या प्रशासकीय आदेश किस सीमा तक संविधान का उल्लंघन कर रहा है इस बात के निर्णय का एक मात्र अधिकार तिब्बत के सर्वोच्च न्यायालय को होगा।

अनुच्छेद पांच – अन्तर्राष्ट्रीय कानून – राज्य की सीमाओं के अन्दर लागू प्रत्येक विधि, अध्यादेश, विनियम, प्रशासकीय आदेश अन्तर्राष्ट्रीय कानून के मान्य सिद्धांतों को प्रतिष्ठित करेंगे तथा विदेशियों का विधिक स्तर ऐसे कानूनों द्वारा विनिर्धारित होगा जो अन्तर्राष्ट्रीय नियमों तथा संधियों के अनुरूप हो।

अनुच्छेद छः – युद्ध एवं आक्रमण – अपनी परंपरा व संस्कृति के अनुरूप तिब्बत युद्ध को आक्रामक नीति एवं बल प्रयोग के यंत्र के रूप में लोगों की स्वतंत्रताओं के विरूद्ध तथा अन्तर्राष्ट्रीय विरोधाभासों के समाधान के साधन के रूप में प्रयुक्त नहीं करेगा और इस प्रकार संयुक्त राष्ट्रसंघ चार्टर के सिद्धांतों से स्वयं को संपृक्त रखेगा।

अनुच्छेद सात – नागरिकता– नेशनल असेम्बली तिब्बती राष्ट्रीयता की प्राप्ति एवं उसकी समाप्ति संबंधी शर्तों तथा तत्संबंधी आवश्यक प्रावधानों का निर्माण करेगी।

अध्याय –दो

मूल अधिकार एवं कर्तव्य

अनुच्छेद आठ – विधि के समक्ष समानता – समस्त तिब्बतीजन विधि के समक्ष समान होंगे तथा इस अध्याय में उल्लिखित उन समस्त अधिकारों व स्वतंत्रताओं का उपयोग बिना किसी भेदभाव (जाति भाषा, धर्म, लिंग, सामाजिक व्युत्पत्ति, संपत्ति, जन्म या अन्य स्तरों के भेदभाव से परे रहकर) के कर सकेंगे।

अनुच्छेद नौ – जीवन, स्वतंत्रता व संपत्ति का अधिकार – विधिविहित प्रक्रिया के अतिरिक्त किसी भी व्यक्ति को जीवन, स्वतंत्रता व संपत्ति के अधिकार से रहित नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद ग्यारह – जीवन का अधिकार – प्रत्येक व्यक्ति को उस स्थिति तक जीवन का अधिकार प्राप्त है जब तक की वह निम्नलिखित शर्तों को पूरा करता हैं।

(अ) गैर कानूनी हिंसा से किसी व्यक्ति की संरक्षा में, (ब) कानूनी गिरफ्तारी को क्रियान्वित करने के संदर्भ में अथवा विधितः निरूद्ध किसी व्यक्ति के बचाव का प्रतिरोध करने के लिए, (स)

किसी दंगे को भड़काने के लिए दंड देने के संदर्भ में । उपरोक्त परिस्थितियों में व्यक्ति के जीवन का अधिकार कानून की परिधि में होगा।

स्वतंत्रता का अधिकार –(1) किसी भी व्यक्ति को गिरफ्तारी के कारणों की पूर्व सूचना दिये बगैर बंदी नहीं बनाया जा सकता न ही बंदी बनाये गये व्यक्ति को अपनी प्रतिरक्षा में अपनी इच्छा से कानूनी परामर्श लेने से तथा अपनी प्रतिरक्षा हेतु आवश्यक समय तथा सुविधाओं को प्राप्त करने से वंचित ही किया जा सकता है।

(2) बंदी बनाये गये व्यक्ति को गिरफ्तारी के 24 घंटे के अन्दर निकटवर्ती मजिस्ट्रेट के सम्मुख पेश करना अनिवार्य होगा। 24 घंटों की इस अवधि में मजिस्ट्रेट के सम्मुख ले जाने की यात्रा में लगा समय सम्मिलित नहीं होगा। इस अवधि के बाद मजिस्ट्रेट की अनुमति लिए बिना व्यक्ति को बंदी बनाकर नहीं रखा जा सकता।

(3) व्यक्ति जो इस धारा का उल्लंघन करके बंदी बनाये गये है उन्हें क्षमा करने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद बारह – न्यायिक प्रक्रियाओं के लिए सुरक्षा कवच –(1) प्रत्येक व्यक्ति को विधि द्वारा स्थापित पक्षपात रहित और स्वतंत्र न्यायिक अभिकरण द्वारा उचित समयावधि के दौरान न्यायपूर्ण सार्वजनिक सुनवाई का अधिकार होगा। यद्यपि निर्णय सार्वजनिक रूप से दिये जायेंगे तथापि जन नैतिकता, जन व्यवस्था या राष्ट्रीय सुरक्षा अथवा निहित पक्षों के व्यक्तिगत जीवन की सुरक्षा या न्यायालय द्वारा निर्धारित उन विशेष परिस्थितियों में जब इस तरह का जनप्रचार न्याय को पूर्वाग्रहित बना सकता हो ऐसी परिस्थितियों में प्रेस तथा जनता मुकदमें की प्रक्रिया से बाहर रखे जायेंगे। (2) प्रत्येक ऐसा व्यक्ति जिसपर अपराध करने का आरोप है विधि द्वारा अपराधी सिद्ध किये जाने से पूर्व तक निर्दोष माना जायेगा। (3) प्रत्येक ऐसा व्यक्ति जो अपराध करने का आरोपी है उसे कुछ सुविधायें प्राप्त होगी – (अ) यदि न्याय के हित में अपेक्षित हो तो एक विधि परामर्शदाता (उस स्थिति में भी जब आरोपी अपने खर्चे पर विधि परामर्श प्राप्त करने में असमर्थ हो)। (ब) एक दुभाषिया (उस परिस्थिति में जबकि आरोपी न्यायालय द्वारा प्रयुक्त भाषा को समझने व बोलने में असमर्थ हो)।

अनुच्छेद तेरह – अपराध सिद्धि के संदर्भ में संरक्षण – (1) किसी भी व्यक्ति को जुर्म करने का अपराधी तब तक नहीं ठहराया जा सकेगा जब तक उसने अपराध के समय प्रचलित किसी कानून का उल्लंघन न किया हो, न ही उसे उस धन राशि से अधिक का जुर्माना देने के लिए बाध्य

किया जायेगा जो अपराध के समय विधितः निर्धारित थी। (2) किसी भी व्यक्ति पर किसी एक अपराध के लिए एक से अधिक बार न तो मुकदमा चलेगा न ही उसे एकाधिक बार दण्ड दिया जायेगा। (3) आरोपित व्यक्ति को स्वयं उसके विरूद्ध गवाही देने के लिए बाध्य नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद चौदह – अमानवीय उपचार का निषेध – किसी भी व्यक्ति को अमानवीय प्रताड़ना तथा निम्नतर स्तर के दण्ड या उपचार का पात्र नहीं बनाया जायेगा।

अनुच्छेद पंद्रह – बेगार के श्रम तथा दासत्व का निषेध – (1) किसी भी व्यक्ति को न तो गुलाम बनाकर रखा जायेगा न ही उसे बेगार या जबरदस्ती श्रम करने के लिए बाध्य किया जायेगा। (2) इस धारा के संदर्भ में जो कार्य बेगार के श्रम के अन्तर्गत नहीं माने गये हैं वे इस प्रकार है – (अ) कानून द्वारा निर्धारित किसी कृत्य को करने में किया गया परिश्रम, (ब) किसी ऐसी सेवा के सम्पादन में लगा श्रम जो आकस्मिक हो तथा जीवन के लिए संकट स्वरूप हो या समुदाय के कल्याण से संबंधित हो। (स) सामरिक महत्व के सेवा संबंधी कृत्य, (द) राष्ट्र के सामान्य नागरिक कर्तव्यों के निर्वहन से संबंधित कार्य या सेवायें।

अनुच्छेद सोलह – बाल श्रम का निषेध – 14 वर्ष के कम आयु के किसी बच्चे को किसी कारखाने या खान या उसके स्वास्थ्य के लिए अहितकर किसी काम पर नहीं लगाया जायेगा।

अनुच्छेद सात – धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार – (1) सभी धर्मावलंबी कानून के सम्मुख समान है। (2)प्रत्येक तिब्बती को विचार, अर्न्तात्मा तथा धर्म विषयक स्वतंत्रता प्राप्त होगी। इस अधिकार में व्यक्ति के व्यक्तिगत रूप से या समुदाय के साथ किसी भी धर्म को मानने, धार्मिक अभ्यास करने, अनुष्ठान तथा पूजा करने की स्वतंत्रतायें सम्मिलित हैं। (3) किसी व्यक्ति के वैयक्तिक रूप से या समुदाय के साथ अपने धर्म या विश्वास के प्रकाशन तथा धार्मिक या उपकारी उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किए गये कार्य केवल जन संनरक्षा, कानून व्यवस्था की सुरक्षा, स्वास्थ्य तथा नैतिक मूल्यों तथा दूसरे व्यक्तियों के समतुल्य अधिकारों एवं स्वतंत्रताओं की संरक्षा के उद्देश्य से ही विधितः प्रतिबंधित किये जा सकेंगे।

अनुच्छेद अष्टदश – अन्य मौलिक स्वतंत्रतायें – प्रत्येक नागरिक को राज्य की सुरक्षा, जनव्यवस्था, स्वास्थ्य तथा नैतिक मूल्यों की दृष्टि से भविष्य में विधि द्वारा प्रतिबंधित किये जाने के योग्य कुछ मौलिक स्वतंत्रताएं भी प्राप्त है। (अ) भाषण तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, (ब) शांतिपूर्वक बिना हथियारों के सभा करने की स्वतंत्रता, (स) समुदाय तथा संघ निर्माण की

स्वतंत्रता, (द) तिब्बती भू-क्षेत्र में स्वतंत्रता पूर्वक भ्रमण की स्वतंत्रता, (च) तिब्बती भू-क्षेत्रों से बाहर की यात्रा के लिए पासपोर्ट रखने का अधिकार, (छ) तिब्बत के किसी भी भाग में रहने तथा बसने का अधिकार, (ज) संपत्ति अर्जित करने, रखने तथा बेचने का अधिकार, (झ) किसी भी व्यवसाय या व्यापार को अपनाने व जारी रखने का अधिकार।

अनुच्छेद 19 – संपत्ति विषयक अधिकार – किसी भी व्यक्ति की कानूनी अधिकारिता या जनहित के अतिरिक्त अन्य किसी भी स्थिति में किसी को संपत्ति वंचित नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद 20 – मतदान का अधिकार – सभी तिब्बती स्त्री पुरूषों को जो कि 18 वर्ष या उससे अधिक आयु प्राप्त कर चुके हैं मतदान का अधिकार होगा। मत व्यक्तिगत एवं गुप्त रूप से दिया जायेगा तथा मतदान करना एक आवश्यक नागरिक कर्तव्य होगा।

अनुच्छेद 21 – मत की अवैधता –

1. यदि कोई व्यक्ति मानसिक रूप से अस्वस्थ्य है और सक्षम न्यायालय द्वारा यह दोष सिद्ध हो जाता है तो वह व्यक्ति मताधिकार से वंचित माना जायेगा।

2. यदि कानून द्वारा कोई व्यक्ति मतदान के अयोग्य ठहरा दिया जाता है तो वह मतदान नहीं कर सकेगा।

अनुच्छेद 22–पदग्रहण करने का अधिकार– कानूनी आवश्यकताओं के अनुसार, समानता के सिद्धान्त के अनुसार समस्त तिब्बतियों को चाहे वे स्त्री हो या पुरूष, चयन या अन्य किसी योग्यता मापक तरीके से सार्वजनिक पद ग्रहण करने का अधिकार है।

अनुच्छेद 23 राष्ट्रीयजनों के नैतिक दायित्व– समस्त तिब्बतियों को अग्रलिखित नैतिक दायित्वों का निर्वहन करना पड़ेगा –

1. तिब्बत राज्य के प्रति भक्ति रखना।
2. संविधान व राज्य के कानूनों का निष्ठापूर्वक पालन करना।
3. कानून के अनुसार राज्य द्वारा लगाये गये समस्त करों का भुगतान करना।
4. राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए संकट या अन्य सार्वजनिक आपत्ति की स्थिति में कानून द्वारा निर्धारित समस्त दायित्वों का निर्वहन करना।

अनुच्छेद 24 अधिकारों को लागू कराना– इस अनुच्छेद द्वारा नागरिकों को प्रदत्त अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं के उल्लंघन की स्थिति में नागरिकों को सर्वोच्च न्यायालय, प्रादेशिक न्यायालयों तथा अन्य न्यायालयों जैस नेशनल एसेम्बली इत्यादि में अपील करने का अधिकार होगा एवं न्यायालयों

को ऐसे आदेश जारी करने का अधिकार होगा जो इन अधिकारों को सुरक्षित रखने में सहायक हों।

अध्याय–तीन

(भूमि विषयक प्रावधान)

अनुच्छेद 25–भू–अधिसम्पत्ति–.

1. समस्त भू–सम्पति राज्य की होगी– जो कि वार्षिक किराये के भुगतान पर (जो समय–समय पर निर्धारित किया जायेगा) निर्माण कार्य, कृषि तथा आवश्यकतानुसार उद्देश्यों के लिये राज्य द्वारा उपलब्ध कराई जायेगी।

2. आर्थिक व सामाजिक न्याय के संवर्द्धन हेतु राज्य भू–सम्पत्ति के केन्द्रीयकरण को रोकेगा।

3. राज्य की अनुमति के बिना कोई भी भू–सम्पत्ति इसके मालिक द्वारा न तो स्थानान्तरित की जा सकेगी न ही उस उद्देश्य को छोड़कर जिसके लिए यह प्राप्त की गई थी अन्य उद्देश्य से उस भू–सम्पत्ति का अन्यत्र उपयोग किया जा सकेगा।

अध्याय–चतुर्थ

(राज्य के नीति निर्देशक तत्व)

अनुच्छेद 26– सामाजिक कल्याण विषयक –

1. राज्य इस बात का प्रयत्न करेगा कि सामुदायिक वित्तीय स्रोतों का स्वामित्व तथा नियंत्रण इस प्रकार विकेन्द्रित हो कि वे सामान्य कल्याण की उपलब्धि में सहायक हो तथा अर्थ प्रबंध की क्रियान्विति इस प्रकार से की जाय कि वह सम्पत्ति के केन्द्रीयकरण तथा सामान्य हानि में प्रतिफलित न हो।

2. करारोपण तथा कराधान का प्रबंध इस प्रकार से करना चाहिये कि भार विकेन्द्रित रहे और प्रत्येक की क्षमता के अनुरूप हो।

3. राज्य को अपनी नीति इस प्रकार निर्धारित करनी चाहिये कि सभी नागरिक चाहे स्त्री हो या पुरूष अपनी जीविका के यथेष्ट साधन जुटा सकें तथा उन्हें समान कार्य के लिए समान वेतन भी प्राप्त हो।

अनुच्छेद 27—शिक्षा व संस्कृति

1. राज्य शिक्षा के विकास का प्रयत्न करेगा ताकि शैक्षिक सुविधायें 6 वर्ष से ऊपर की आयु के सभी बच्चों को उपलब्ध हो तथा 7 वर्ष की अवधि के लिए प्राइमरी शिक्षा मुफ्त दी जाये।

2. राज्य युवाओं पर विशेष ध्यान देगा तथा तकनीकि, व्यवसायिक व उच्च शिक्षा के विकास पर ध्यान देगा। इस प्रकार की शिक्षा सामान्य तौर पर उपलब्ध तथा योग्यता के आधार पर सामान्य जन की पहुंच के भीतर होगी। जो विद्यार्थी इस प्रकार की शिक्षा का भार उठाने में असमर्थ होंगें उनके लिए योग्यता के आधार पर छात्रवृत्तियाँ भी उपलब्ध कराई जायेगी।

3. समस्त शैक्षिक संस्थान राज्य के निरीक्षण तथा नियंत्रण के अधीन होंगे।

4. राज्य राष्ट्रीय संस्कृति के उन्नयन व संरक्षण तथा कला व विज्ञान में अनुसंधान को संबल देने का प्रयास करेगा।

अनुच्छेद 28 – स्वास्थ्य विषयक प्रावधान

1. राज्य अपने नागरिकों के मध्य पर्याप्त स्वास्थ्य व चिकित्सकीय सुविधाओं का विकास करेगा तथा जनसंख्या के उन वर्गों के लिए इन सुविधाओं को निःशुल्क मुहैया करायेगा जो इन सुविधाओं का व्यय चुकाने में असमर्थ है।

2. राज्य बुजुर्ग व्यक्तियों तथा कमजोर लोगों के लिए आवश्यक सुविधाओं तथा उनकी देखरेख के लिए जरूरी संस्थाओं के विकास का प्रयत्न करेगा।

अध्याय – पंचम

कार्यकारिणी सरकार विषयक

अनुच्छेद 29— कार्यकारिणी शक्ति

1. श्रीयुत महामहिम दलाईलामा के 18 वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने पर राज्य की कार्यकारिणी शक्ति उनमें निहित मानी जायेगी। इस शक्ति का प्रयोग या तो वह प्रत्यक्ष रूप से करेंगे या फिर अपने अधीनस्थ अधिकारियों के माध्यम से जैसा संविधान द्वारा उपबन्धित किया जाय।

2. पूर्व उल्लेखित प्रावधानों की सामान्यता के विरूद्ध पूर्वाग्रह के बिना दलाईलामा राज्य प्रमुख की गरिमा से अग्रलिखित कृत्यों का संपादन करेंगे—

अ— विदेशों में तिब्बत के राजदूत भेजना व वापस बुलाना तथा विदेशी राजनायिकों का स्वागत करना, नेशनल असेम्बली अथवा उसकी स्थाई समिति द्वारा पूर्व स्वीकृत अन्तर्राष्ट्रीय संधियों का पुष्ट करना।

ब– अपराधियों को क्षमा प्रदान करना, दण्ड को कम करना या निलंबित करना अथवा दण्ड को परिवर्तित करना।

स– योग्यता की सनदें व उपाधि प्रदान करना।

द– कानून के तुल्य प्रभावी तथा वैध कानूनों व अध्यादेशों की घोषणा करना।

च– नेशनल असेम्बली का सत्र आहूत व स्थगित करना।

छ– स्व–विवेकानुसार जब आवश्यक हो तब नेशनल असेम्बली का उद्बोधन करना तथा संदेश भेजना।

ज– संविधान प्रदत्त मामलों में रेफरेण्डम प्राधिकृत करना।

झ– संविधान की इस धारा में महामहिम श्रीयुत दलाईलामा की राज्य के सर्वोच्च आध्यात्मिक प्रमुख की भूमिका, शक्ति व अधिकारिता को प्रभावित करने या कम करने का विचार नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद 30–मंत्री तथा मंत्री परिषद (Kashag)

1. दलाईलामा समय–समय पर आवश्यकतानुसार संख्या में मंत्रियों को नियुक्त करेंगे। कुल मंत्रियों के मध्य से एक को दलाईलामा प्रधानमंत्री मनोनीत करेंगे। कम से कम मंत्रियों को मंत्री मण्डल का सदस्य मनोनीत किया जायेगा।

2. कोई भी मंत्री नेशनल एसेम्बली का सदस्य नहीं होगा।

3. यदि कोई ऐसा व्यक्ति मंत्री नियुक्त किया जाता है जो कि नेशनल एसेम्बली का सदस्य है तो उसे नेशनल एसेम्बली का पद छोड़ना पड़ेगा।

दलाईलामा मंत्रियों को पदग्रहण से पूर्व कानून द्वारा निर्धारित स्वरूप व प्रक्रिया से पद व गोपनीयता की शपथ दिलवायेंगें।

4. राज्य की कार्यकारिणी सरकार के प्रशासन में मंत्रीमंडल (Kashag) दलाईलामा को सहायता व परामर्श देगी।

5. मंत्रियों के वेतन तथा भत्ते नेशनल एसेम्बली द्वारा समय–समय पर कानून द्वारा निर्धारित किये जायेंगें।

अनुच्छेद 31– मंत्री परिषद की बैठकें

1. दलाईलामा मंत्री परिषद की बैठकों की अध्यक्षता करेंगे। उनकी अनुपस्थिति में या तो प्रधानमंत्री या उपस्थित वरिष्ठतम मंत्री बैठक की अध्यक्षता करेंगें।

2. दलाईलामा किसी मंत्री या मंत्रियों को मंत्रिपरिषद की महत्वपूर्ण बैठकों में आमंत्रित कर सकते हैं ।

अनुच्छेद 32— विधियों की घोषणा— महामहिम दलाईलामा स्वविवेक से या मंत्री परिषद के निर्णय के अनुकूल कानूनों का निर्माण करके सदन में विधियों की घोषणा करेंगें।

अनुच्छेद 33—रेफरेण्डम की व्यवस्था— दलाईलामा स्वविवेक से या मंत्री परिषद के अनुरोध पर किसी भी प्रस्तावित विधि निर्माण पर रेफरेण्डम करवा सकते है और प्रस्तावित विधि निर्वाचकों के बहुमत द्वारा स्वीकृत कर दी जाती है तो दलाईलामा एक निश्चित समयावधि के अन्दर इसकी घोषणा कर देते है।

अनुच्छेद 34— नेशनल एसेम्बली भंग करना— दलाईलामा मंत्री परिषद तथा नेशनल एसेम्बली के अध्यक्ष से परामर्श के बाद नेशनल एसेम्बली को भंग कर सकेंगे। सामान्यतः नेशनल एसेम्बली भंग होने के 40 दिनों के भीतर आम चुनाव करवायें जाने का प्रावधान हैं।

अनुच्छेद 35— सरकार के कार्य व्यापार का संचालन—

1. तिब्बत की सरकार के समस्त कार्यकरण कार्य दलाईलामा के नाम के अन्तर्गत निष्पादित किये जायेंगे।

2. दलाईलामा की पूर्वानुमति लेकर मंत्री परिषद तिब्बती सरकार के कार्य व्यापार के अधिक सुविधाजनक निर्वहन के लिए नियम बना सकेगी, मंत्रियों के मध्य संबंधित कार्य का बटवारा करके इस तरह के प्रस्ताव को दलाईलामा के सम्मुख अनुमति के लिए प्रस्तुत करेगी।

अनुच्छेद 36— काउन्सिल ऑफ रीजेन्सी—

1. अधोलिखित परिस्थिति में कार्यकारिणी शक्तियों के प्रयोग के लिए एक काउन्सिल ऑफ रीजेन्सी होगी जो निम्नलिखित परिस्थितियों में दलाईलामा की शक्तियों का उपयोग करेगी।

अ— उस समय तक जब तक पुनर्जन्मित दलाईलामा इस अवस्था को प्राप्त करें जब वे अपने पूर्ववर्ती लामा से शक्तियों का आहरण करें तब तक कार्यकारिणी शक्तियों का निर्वहन करना।

ब— उस समयावधि तक जब तक की दलाईलामा अपने पूर्ववर्ती से शक्तियाँ प्राप्त नहीं करते।

स— उस स्थिति में जबकि कोई अयोग्यता दलाईलामा को उनकी कार्यकारी शक्तियों के अभ्यास से रोक दे।

द— राज्य से दलाईलामा की अनुपस्थिति की स्थिति में।

च– उस स्थिति में जबकि नेशनल एसेम्बली अपने कुल सदस्यों के 2/3 बहुमत से सर्वोच्च न्यायालय से परामर्श करके आदेश करें कि राज्य के उच्चतम हित में यह उचित है कि महामहिम के कार्यकरण दायित्वों का निर्वहन काउन्सिल ऑफ रीजेन्सी द्वारा किया जाय।

2. काउन्सिल ऑफ रीजेन्सी नेशनल एसेम्बली द्वारा निर्वाचित तीन सदस्यों से निर्मित होगी जिनमें से एक धार्मिक प्रतिनिधि होगा। यह उपबन्धित है कि यदि नेशनल एसेम्बली का कोई सदस्य काउन्सिल ऑफ रीजेन्सी का सदस्य चुना जाता है तो उसे नेशनल एसेम्बली की सदस्यता त्यागनी पड़ेगी।

3. यदि कोई मंत्री काउसिंल ऑफ रीजेन्सी का सदस्य निर्वाचित होता है तो उसे मंत्री परिषद छोड़ना पड़ेगा ।

4. काउन्सिल ऑफ रीजेन्सी का सदस्य निर्वाचित होने पर सदस्य को नेशनल एसेम्बली के सम्मुख कानून द्वारा निर्धारित स्वरूप में पद की शपथ ग्रहण करनी होगी।

5. यदि काउन्सिल ऑफ रीजेन्सी का काई सदस्य मृत्यु या अन्य किसी कारणों से अपने कर्तव्य निर्वहन में असमर्थ रहता है तो नेशनल एसेम्बली नये सदस्य का निर्वाचन करेगी।

6. यदि काउन्सिल ऑफ रीजेन्सी के किसी सदस्य को ऐसे समय हटाया जाता है जब नेशनल एसेम्बली का सत्र न चल रहा हो तो उस स्थिति में एसेम्बली की स्थाई समिति मंत्री परिषद के साथ परामर्श करके उस सदस्य को कर्तव्य निर्वहन से वंचित कर देगी और बाद में नेशनल एसेम्बली को उस सदस्य को पद से हटाने के लिए अनुमोदन भेज दिया जायेगा। नेशनल एसेम्बली यदि उचित समझे तो आरोपित सदस्य को पद से हटा देगी और उसी सत्र में नये सदस्य को निर्वाचित करेगी।

7. यदि नेशनल एसेम्बली का सत्र न चल रहा हो और काउन्सिल ऑफ रीजेन्सी के दो या तीन सदस्य को पद से हटाना हो तो उस स्थिति में नेशनल एसेम्बली की स्थायी समिति मंत्री परिषद के साथ परामर्श करके एक आकस्मिक एसेम्बली आहूत करेगी और नेशनल एसेम्बली से उन सदस्यों को पद से हटाने की सिफारिश करेगी। एसेम्बली जैसा भी उचित समझेगी काउन्सिल के समस्त या कुछ सदस्यों को पद से वंचित करेगी। एसेम्बली उसी सत्र में नये सदस्यों का निर्वाचन करेगी।

8. काउन्सिल ऑफ रीजेन्सी की समयावधि उतनी ही होगी जितना नेशनल एसेम्बली का कार्यकाल होगा।

9. काउन्सिल ऑफ रीजेन्सी, मंत्री परिषद, धार्मिक परिषद तथा नेशनल एसेम्बली की स्थाई समिति के साथ मिलकर दलाईलामा के पुनर्जीवन विषयक अनुसंधान को सम्पन्न करेगी तत्पश्चात् काउन्सिल अपनी खोजों तथा पुनर्जीवन विषयक निश्चयों पर अपने मतों को नेशनल एसेम्बली के सामने एक प्रस्ताव के रूप में स्वीकृति के लिए रखेगी।

10. काउन्सिल ऑफ रीजेन्सी को राज्य किसी भूक्षेत्र के हस्तांतरण का अधिकार नहीं होगा न ही राज्य की स्वाधीनता से संबंधित किसी अन्तर्राष्ट्रीय समझौते में प्रवेश का अधिकार होगा सिवा उन स्थितियों के जबकि संविधान के अनुरूप संपादित रेफरेण्डम के तहत निर्वाचकों की बहु संख्या से इस संदर्भ में पूर्व अनुमति प्राप्त कर ली गई हो या इस संदर्भ में नेशनल एसेम्बली ने कोई कानून बनाया हो।

अनुच्छेद 37– धार्मिक परिषद विषयक

1. दलाईलामा के प्रत्यक्ष अधिकार में राज्य के सभी मठों तथा धार्मिक संस्थाओं के मामलों के प्रशासन के लिए एक धार्मिक परिषद होगी।

2. धार्मिक परिषद में दलाईलामा द्वारा समय–समय पर प्रत्यक्ष रूप से नियुक्त न्यूनतम पांच सदस्य होंगे।

3. धार्मिक परिषद में दलाईलामा की पूर्वानुमति के साथ समस्त धार्मिक मामलों के प्रशासन का दायित्व व शक्ति निहित होगी।

अध्याय–षष्ठ

(विधायन प्राधिकार विषयक)

अनुच्छेद 38– विधायी शक्तियाँ–समस्त विधायी शक्तियाँ दलाईलामा की सहमति के साथ नेशनल एसेम्बली के प्राधिकार में निहित होंगी।

अनुच्छेद 39– नेशनल ऐसेम्बली का निर्माण :– नेशनल ऐसेम्बली में सदस्यता का अनुपात निम्न प्रकार से होगा ।

(अ) कुल सदस्य संख्या का 75 प्रतिशत हिस्सा प्रादेशिक चुनाव क्षेत्रों से जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित प्रतिनिधियों का होगा ।

(ब) कुल सदस्य संख्या का 10 प्रतिशत हिस्सा धार्मिक मठों तथा संस्थाओं द्वारा इस संदर्भ में निर्मित कानून के अनुसार चुना जायेगा ।

(स) कुल सदस्य संख्या का 10 प्रतिशत हिस्सा प्रादेशिक व जिला परिषदों द्वारा इस संदर्भ में निर्मित कानून के अनुसार चुना जायेगा ।

(द) कुल सदस्य संख्या का 5 प्रतिशत हिस्सा दलाई लामा द्वारा मनोनीत ऐसे व्यक्तियों का होगा जिन्होंने कला, विज्ञान तथा साहित्य के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया हो ।

चुनाव हेतु निर्वाचन क्षेत्र का वर्गीकरण :– राज्य को प्रादेशिक चुनाव क्षेत्र में वर्गीकृत किया जायेगा। प्रत्येक चुनाव क्षेत्र मत देने वालों के बराबर अनुपात में बांटा जायेगा । प्रत्येक चुनाव क्षेत्र से खड़े होने वाले उम्मीदवार की संख्या दलाई लामा द्वारा नियुक्त चुनाव आयोग तय करेगा ।

अनुच्छेद 40–नेशनल ऐसेम्बली का कार्यकाल :–

1. प्रत्येक नेशनल ऐसेम्बली यदि वह समय पूर्व भंग नहीं की जाती तो अपनी पहली बैठक की तारीख से पांच वर्ष तक जारी रहेगी । पांच वर्ष बाद सदन स्वतः भंग हो जायेगा ।

2. नेशनल ऐसेम्बली का सत्र न होने की स्थिति में नेशनल ऐसेम्बली की स्थाई समिति कार्यों का निर्वहन करेगी ।

3. नेशनल ऐसेम्बली अपनी स्थाई समिति के सदस्यों की संख्या, अधिकार व कर्तव्यों के विषय में प्रस्ताव तैयार करके दलाई लामा की स्वीकृति के लिए रखेगी ।

अनुच्छेद 41–नेशनल ऐसेम्बली के उम्मीदवारों की योग्यताएं :–

कोई भी व्यक्ति नेशनल ऐसेम्बली के लिए तब तक चुने जाने का अधिकारी नहीं जब तक कि :

1. वह एक तिब्बती राष्ट्र को जिसकी आयु न्यूनतम 25 वर्ष्र हो, (2). ऐसी किसी अयोग्यता से युक्त न हो जो नेशनल ऐसेम्बली द्वारा निर्मित कानून के तहत इंगित की गई हो ।

अनुच्छेद 42– नेशनल ऐसेम्बली के अधिवेशन :–

1. दलाई लामा समय–समय पर नेशनल ऐसेम्बली के नियमित सत्र निर्धारित स्थान पर आहूत करेगे । किसी भी स्थिति में नियमित सत्रों के बीच की समयावधि 6 माह से अधिक नहीं होगी । अर्थात एक सत्र की अंतिम बैठक और अगले सत्र की प्रथम बैठक के बीच 6 माह से अधिक का अन्तराल नहीं होना चाहिए ।

2. इस संविधान के प्रावधानों के अनुसार दलाई लामा नेशनल ऐसेम्बली को स्थगित कर सकते हैं तथा भंग भी कर सकते हैं ।

अनुच्छेद 43– दलाई लामा द्वारा नेशनल ऐसेम्बली को सम्बोधन तथा सन्देश प्रेषण :–(1)आम चुनाव के तुरन्त बाद सम्पन्न प्रथम अधिवेशन के आरम्भ में तथा प्रत्येक वर्ष के प्रथम अधिवेशन के

प्रारम्भ में दलाई लामा नेशनल ऐसेम्ब्ली को सम्बोधित करेंगे तथा इसके आह्वान के उद्देश्यों पर प्रकाश डालेंगे ।

2. दलाई लामा ऐसेम्बली में विचार हेतु रखे गए बिल के संदर्भ में या अन्य परिप्रेक्ष्य में ऐसेम्बली को सन्देश भेज सकते हैं ।

अनुच्छेद 44– विशेष सत्र विषयक :–

1. नेशनल ऐसेम्बली के विशेष सत्र मंत्री परिषद के अनुरोध पर या स्वयं नेशनल ऐसेम्बली के बहुमत की मांग पर दलाई लामा द्वारा आहूत किये जायेगे ।

2. नेशनल ऐसेम्बली के समस्त विशेष सत्र दलाई लामा के सरकारी आदेश से ही आरम्भ व समाप्त होंगे ।

अनुच्छेद 45 – नेशनल ऐसेम्बली के सन्दर्भ में मंत्रियों के अधिकार :–

प्रत्येक मंत्री को नेशनल ऐसेम्बली की प्रक्रियाओं में भाग लेने तथा बोलने का अधिकार होगा, उसे ऐसेम्बली की ऐसी समिति में भी इस प्रकार का अधिकार होगा जिसके लिए वह चुना जाता है परन्तु इन परिस्थितियों में उसे मतदान का अधिकार कभी प्राप्त नहीं होगा ।

अनुच्छेद 46– नेशनल ऐसेम्बली का स्पीकर :–

1. आम चुनाव के बाद सम्पन्न प्रथम अधिवेशन में नेशनल ऐसेम्बली दो सदस्यों को क्रमशः स्पीकर तथा डिप्टी स्पीकर चुनेगी । यदि स्पीकर तथा डिप्टी स्पीकर के पद रिक्त होते हैं तो ऐसी स्थिति में ऐसेम्बली दूसरे सदस्यों को स्पीकर तथा डिप्टी स्पीकर चुनेगी ।

2. स्पीकर तथा डिप्टी स्पीकर उक्त स्थिति में पद त्याग करेगा जबकि वह नेशनल ऐसेम्बली का सदस्य नहीं रहे अथवा जबकि उसे ऐसेम्बली अपने कुल सदस्यों की संख्या के 2/3 बहुमत से प्रस्ताव पारित करके पद्च्युत कर दे ।

3. स्पीकर तथा डिप्टी स्पीकर को उतने वेतन भत्ते प्राप्त होंगे जितने नेशनल ऐसेम्बली विधि द्वारा निर्धारित करें ।

अनुच्छेद 47– ऐसेम्बली के सदस्यों के विशेषाधिकार :–

1. नेशनल ऐसेम्बली के किसी भी सदस्य पर ऐसेम्बली में व्यक्त विचारो तथा नेशनल ऐसेम्बली या किसी अन्य समिति में किये गए मतदान के परिप्रेक्ष्य में किसी न्यायालय में मुकदमा नहीं चलाया जायेगा । नेशनल ऐसेम्बली के अधिकार में किसी रिपोर्ट, पत्र या पत्रिकाओं के प्रकाशन के संदर्भ में किसी सदस्य को व्यक्तिगत तौर पर उत्तरदायी नहीं ठहराया जाता ।

2. जब ऐसेम्बली का सत्र चल रहा हो तो नेशनल ऐसेम्बली की पूर्व अनुमति के बिना न तो किसी सदस्य पर मुकदमा चलाया जा सकता है न ही किसी दीवानी या फौजदारी मामले में उसे बंदी बनाया जा सकता है ।

3. अन्य संदर्भों में नेशनल ऐसेम्बली सदस्यों के विशेषाधिकार ऐसेम्बली द्वारा समय–समय पर कानून द्वारा निर्धारित किये जायेगे ।

अनुच्छेद 48– नेशनल ऐसेम्बली के सदस्यों द्वारा शपथ ग्रहण :–

नेशनल ऐसेम्बली का प्रत्येक सदस्य अपना पद ग्रहण करने से पूर्व स्पीकर या उसके द्वारा नियुक्त अन्य प्राधिकारी के सम्मुख विधि द्वारा निर्धारित स्वरूप में शपथ ग्रहण करेगा ।

अनुच्छेद 49 – नेशनल ऐसेम्बली में मतदान :–

1. नेशनल ऐसेम्बली की किसी भी बैठक में समस्त मुद्दे उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों के बहुमत से निर्धारित व निर्णीत किये जायेंगे । नेशनल ऐसेम्बली के स्पीकर या प्राधिकारी स्पीकर को इस तरह के मतदान का अधिकार नहीं होगा परन्तु किसी विषय पर पक्ष विपक्ष में समान मत होने पर उस अपना निर्णायक मत देने का अधिकार होगा ।

2. नेशनल ऐसेम्बली की बैठक के लिए गण पूर्ति ऐसेम्बली के कुल सदस्यों की संस्था का 1/5 भाग होगी । यदि नेशनल ऐसेम्बली की बैठक के दौरान गण पूर्ति पूरी न हो तो यह स्पीकर या स्थानापन्न प्राधिकारी का दायित्व होगा कि या तो वह ऐसेम्बली का सत्र निलंबित कर दे या गण पूर्ति पूरी होने तक स्थगित कर दे ।

अनुच्छेद 50– पद रिक्ति के संदर्भ में :–

1. यदि नेशनल ऐसेम्बली का कोई सदस्य काउंसिल ऑफ रीजेन्सी का सदस्य चुना जाता है या मंत्री चुन लिया जाता है या अगली धारा में वर्णित अयोग्यताओं के मद्दे नज़र अयोग्य पाया जाता है या अपने हस्त लेख में अपना त्याग पत्र ऐसेम्बली के स्पीकर को देता है ऐसी परिस्थितियों मे से किसी एक के भी होने पर उस सदस्य विशेष का पद रिक्त समझा जायेगा ।

2. यदि नेशनल ऐसेम्बली का कोई सदस्य 60 दिनों की समयावधि तक ऐसेम्बली की अनुमति के बिना सभी बैठकों में अनुपस्थित रहता है तो ऐसेम्बली उसके पद को रिक्त घोंषित कर देगी । ध्यातव्य है कि 60 दिनो की समयावधि की इस गणना में वह समय शामिल नहीं होगा जब कि ऐसेम्बली स्थगित रही हो या लगातार चार दिनों से अधिक समय तक के लिए स्थगित कर दी गई हो ।

अनुच्छेद 51– सदस्यता के लिए अयोग्यताएं :–

एक व्यक्ति अधोलिखित निर्योग्यता परिस्थितियों में नेशनल ऐसेम्बली का सदस्य बनने के अयोग्य होगा । यदि वह व्यक्ति सदस्य चुन लिया जाता है तो उसकी सदस्यता समाप्त समझी जायेगी– (अ) यदि वह तिब्बत की सरकार के अधीन लाभ का पद प्राप्त करता है सिवा उन पदों को छोड़कर जिन्हे नेशनल ऐसेम्बली कानून द्वारा इस उद्देश्य से अयोग्यता सिद्ध न करने वाला घोंषित कर चुकी हो, (ब) यदि वह अस्वस्थ्य मस्तिष्क का स्वामी है और सक्षम न्यायालय द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका हो, (स) यदि वह बंधक या दिवालिया हो, (द) यदि वह तिब्बती राष्ट्र नहीं है अथवा विदेशी राज्य के प्रति संयुक्तता अथवा भक्ति रखता है, (च) यदि वह नेशनल ऐसेम्बली द्वारा निर्मित किसी कानून के तहत अयोग्य पाया जाता है ।

अनुच्छेद 52– सदस्यों की अयोग्यता सम्बन्धी प्रश्नों का निर्णय :–

यदि यह प्रश्न उठता है कि क्या नेशनल ऐसेम्बली का कोई सदस्य पिछली धारा में वर्णित अयोग्यताओं मे से किसी एक का भी, संवाहक है तो यह प्रश्न सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को सम्प्रेरूिषत कर दिया जायेगा। तथा उनका निर्णय अंतिम होगा ।

अनुच्छेद 53– पद की शपथ लेने से पूर्व तथा अयोग्य होने की स्थिति में बैठकों में भाग लेने तथा मतदान करने पर जुर्माना :–

यदि कोई सदस्य पद ग्रहण की शपथ लेने से पूर्व नेशनल ऐसेम्बली में सदस्य के रूप में बैठता है व मतदान करता है अथवा यदि वह जानता है कि वह सदस्यता के अयोग्य है या यदि नेशनल ऐसेम्बली द्वारा निर्मित कानून के प्रावधान के अनुसार उसे ऐसा करने का निषेध किया जाता है तब वह प्रत्येक ऐसे दिन के लिए जब उसने ऐसेम्बली तथा मतदान में हिस्सा लिया, जुर्माने का पात्र होगा ।

अनुच्छेद 54– सदस्यों के वेतन–भत्ते :–

नेशनल ऐसेम्बली के सदस्य नेशनल ऐसेम्बली द्वारा समय–समय पर निर्मित कानून द्वारा निर्धारित वेतन–भत्ते पाने के अधिकारी होगें ।

अनुच्छेद 55– बिलों के प्रस्तुतिकरण व पारित होने की प्रक्रिया :–

किसी टेक्स के आरोपित करने, समाप्त करने परिवर्तन या विनियमतीकरण से संबंधित विधेयक अथवा धन उधार लेने के सम्बन्ध में विनियमतीकरण या तिब्बती सरकार द्वारा किसी गारंटी के संदर्भ में विधेयक केवल मंत्री परिषद के अनुरोध पर ही प्रस्तावित व अग्रिम कार्यवाही हेतु प्रेषित

किये जायेगे । यह भी प्रावधान है कि किसी टैक्स में कभी या उसे समाप्त करने से संबंधित संशोधन के लिए इस प्रकार के अनुरोध आवश्यकता नही होगी ।

2. तिब्बत की सरकार के व्यय से संबंधित विधेयक नेशनल ऐसेम्बली द्वारा मंत्री परिषद के अनुरोध के बिना पास नहीं किये जायेगे ।

3. अंतिम क्लॉज के प्रावधानों के अनुरूप नेशनल ऐसेम्बली का काई भी सदस्य किसी भी बिल को प्रस्तावित कर सकता है अथवा किसी विधेयक में संशोधन विषयक प्रस्ताव प्रस्तावित कर सकता है ।

4. निजी सदस्यों द्वारा रखे गए सभी बिल तथा प्रस्ताव एवं मंत्री परिषद द्वारा प्रस्तावित समस्त बिल, यदि आवश्यक समझा गया तो वे इस उद्देश्य के लिए गठित समितियों के सामने विचार के लिए लाए जायेंगे ।

अनुच्छेद 56– वार्षिक वित्तीय विवरण :–

1. प्रत्येक वित्तीय वर्ष में मंत्री परिषद नेशनल ऐसेम्बली के सम्मुख उस वर्ष के लिए अनुमानित प्राप्तियों तथा व्यय विषयक विवरण प्रस्तुत करेगी ।

2. विवरण में उल्लेखित व्ययों के अनुमान पृथक–पृथक प्रदर्शित होने चाहिए – (अ) अगले क्लॉज ने उल्लेखित राज्य के राजस्व सें होने वाले व्यय के लिए आवश्यक धनराशि, (ब) ऐसे व्यय के लिए धनराशि जो राज्य के राजस्व स्रोतों से प्राप्त करने हेतु प्रस्तावित है ।

3. अग्र लिखित व्यय राज्य के राजस्व स्रोतों से लिए जाने हेतु अपेक्षित हैं– (अ) दलाई लामा के कार्यालय व गरिमा के लिए अपेक्षित व्यय, (ब) नेशनल ऐसेम्बली के स्पीकर तथा डिप्टी स्पीकर के वेतन–भत्ते, (स) सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन–भत्ते तथा पेंशन, (द) ऋण वसूली जिसके लिए सरकार जवाब देह है (ब्याज, फंड तथा छूट विषयक धनराशि)

4. अनुमानों का वह हिस्सा जो राज्य के राजस्व स्रोतों से उपलब्ध किया जाता है, नेशनल ऐसेम्बली के सम्मुख वोट के लिए नहीं रखा जायेगा । परन्तु इस धारा में कहीं भी ऐसा विधान नहीं किया गया है जो नेशनल ऐसेम्बली में इनमें से किसी भी व्यय पर चर्चा होने पर रोक लगाता हो ।

5. अन्य व्ययों से संबंधित अनुमान नेशनल ऐसेम्बली के सम्मुख अनुदान के लिए मांगों के रूप में प्रस्तावित किए जायेगे । ऐसेम्बली को किसी प्रस्ताव पर सहमति देने या किसी मांग को

स्वीकार करने से मना करने या किसी उल्लेखित धनराशि में कमी करने की किसी मांग को स्वीकृत करने का अधिकार होगा ।

11. अनुच्छेद 57– प्रक्रिया के नियम :–

नेशनल ऐसेम्बली को इस संविधान के प्रावधानों तथा प्रक्रियाओं के विनियमन तथा उनके क्रियान्वयन के लिए कानून बनाने का पूरा अधिकार होगा ।

अनुच्छेद 58– चर्चा पर प्रतिबन्ध :–

नेशनल ऐसेम्बली में सुप्रीम कोर्ट के किसी न्यायाधीश द्वारा अपने कर्तव्य निर्वहन में बरती गई अनियमितता तथा आचरण से संबंधित किसी ऐसे प्रस्ताव पर (जो दलाई लामा को उस न्यायाधीश को पद से हटाने के विषय में अनुरोध के रूप में संबोधित होगा) कोई चर्चा नहीं की जायेगी ।

अनुच्छेद 59– दलाई लामा द्वारा अध्यादेश जारी करना :–

1. यदि किसी समय जबकि नेशनल ऐसेम्बली का अधिवेशन न चल रहा हो और ऐसी परिस्थतियां उत्पन्न हो जाएं जब दलाई लामा यह अनुभव करें कि स्थिति पर त्वरित नियंत्रण के लिए ऐसा करना जरूरी है तो वे नेशनल ऐसेम्बली की स्थाई समिति के परामर्श से परिस्थतियों के मद्दे नजर अध्यादेश जारी कर सकते है। इस प्रावधान के तहत जारी अध्यादेश का वही बल तथा प्रभाव होगा जो कि नेशनल ऐसेम्बली के किसी कानून का होता है परन्तु नेशनल ऐसेम्बली के प्रस्ताव पर ऐसे किसी भी अध्यादेश को संशोधित, परिवर्तित या दलाई लामा के आदेश से प्रत्यावर्तित किया जा सकेगा ।

अनुच्छेद 60– विधेयकों पर स्वीकृति :–

नेशनल ऐसेम्बली द्वारा बिल पास कर दिये जाने के बाद यह दलाई लामा के सम्मुख प्रंस्तुत किया जायेगा । दलाई लामा या तो बिल पर अपनी स्वीकृति देंगें या सहमति रोक लेंगे । ऐसा प्रावधान है कि दलाई लामा अपने सम्मुख स्वीकृति के लिए उपस्थित किसी बिल को नेशनल ऐसेम्बली को इस सन्देश के साथ प्रत्यावर्तित कर सकते है कि वह बिल पर पुनर्विचार करें या कुछ विशेष प्रावधान करें विशेषतः ऐसे संशोधनों पर विचार करे जिन्हे वह अपने संदेश के द्वारा सुझाएं ।

अनुच्छेद 61– नेशनल ऐसेम्बली की प्रक्रिया का अ वाद योग्य होना :–

1. नेशनल ऐसेम्बली की प्रक्रियाओं की वैधता को किसी न्यायालय में प्रक्रियागत अनियमितता के आधार पर चुनौती नही दी जा सकेगी ।

2. नेशनल ऐसेम्बली के किसी भी सदस्य को जिसे संविधान द्वारा प्रक्रियाओं के विनियमतीकरण, कार्यवाही संचालित करने या नेशनल ऐसेम्बली में व्यवस्था बनाए रखने के सन्दर्भ में शक्तियां प्राप्त है, इन शक्तियों के उपयोग के परिप्रेक्ष्य में किसी न्यायालय के क्षेत्राधिकार में नहीं लाया जायेगा ।

अध्याय सप्तम

(न्यायालय विषयक प्रावधान)

अनुच्छेद 62– सर्वोच्च न्यायालय की रचना :–

1. निर्णय देने के लिए एक सर्वोच्च न्यायालय होगा जिसमें एक मुख्य न्यायाधीश के अतिरिक्त (नेशनल ऐसेम्बली द्वारा भविष्य में विधितः निर्धारित की जाने वाली जजों की अधिकतम संख्या से पहले) मात्र तीन अन्य न्यायाधीश होंगे ।

2. सर्वोच्च न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश दलाई लामा द्वारा नियुक्त किया जायेगा तथा उनके ही प्रसादपर्यन्त अपने पद पर रहेगा सिवा उस स्थिति के जबकि नेशनल ऐसेम्बली 2/3 बहुमत से किसी न्यायाधीश के प्रस्ताव पारित कर उसे समय पूर्व पदच्युत करने का दलाई लामा से अनुरोध करे और दलाई लामा द्वारा प्रस्ताव पर सहमति दे दी जाए। उल्लेखनीय है कि अन्य जजों की नियुक्ति मे मुख्य न्यायाधीश से परामर्श लेना अनिवार्य होगा ।

3. सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश नियुक्त किये जाने के लिए आवश्यक है कि उम्मीदवार तिब्बत का नागरिक है, किसी एक प्रादेशिक न्यायालय या इसी तरह के दो या अधिक न्यायालयों में लगातार कम से कम 5 वर्ष तक न्यायाधीश रहा हो या कम से कम 10 वर्ष की अवधि तक किसी प्रादेशिक न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय में एक पंजीकृत वकील के रूप में कार्यरत रहा हो । यह भी प्रावधान है कि इस संविधान के क्रियाशील होने की पांच वर्षो की समयावधि के भीतर दलाई लामा इस धारा के तहत की जाने वाली किसी या सभी नियुक्तियों के संदर्भ में कुछ वांछनीयताओं में छूट दे सकते है ।

4. सर्वोच्च न्यायालय के सभी न्यायाधीशों के लिए यह आवश्यक होगा कि वे पद ग्रहण करने से पूर्व नेशनल ऐसेम्बली द्वारा निर्मित कानून द्वारा निर्धारित स्वरूप में दलाई लामा के सम्मुख लिखित रूप से पद की शपथ लें ।

अनुच्छेद 63– न्यायाधीशों के वेतन भत्ते :–

1. सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को नेशनल ऐसेम्बली द्वारा इस सम्बन्ध में निर्मित कानूनों द्वारा निर्धारित वेतन–भत्ते तथा पेंशन प्राप्त होंगी

2. न्यायाधीशों को मिलने वाले वेतन भत्ते तथा अन्य विशेषाधिकारों में उनके कार्यकाल के दौरान कोई ऐसी कटौती या परिवर्तन नहीं किया जायेगा जो उनके लिए हानिकारक हो ।

अनुच्छेद 64– सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र :–

1. सर्वोच्च न्यायालय अपील का उच्चतम न्यायालय तथा राज्य के न्यायिक प्रशासन का अनन्य मुखिया होगा तथा दलाई लामा की पूर्व स्वीकृति से निर्मित नियमों के अनुसार अपने दायित्वों के निर्वहन के लिए आवश्यक शक्तियों का उपयोग करेगा ।

2. दीवानी, फौजदारी या अन्य किसी मामले में प्रादेशिक न्यायालय या किसी न्यायाधिकरण के किसी निर्णय, डिक्री या अन्तिम आदेश के विरूद्ध सर्वोच्च न्यायालय में अपील तभी की जा सकेगी जब यह नेशनल ऐसेम्बली द्वारा इस संदर्भ में निर्मित कानून की शर्तो को पूरा करती हो । प्रावधान यह है कि यदि कानून से संबंधित कोई महत्वपूर्व प्रश्न जैसे संविधान की व्याख्या इत्यादि संदर्भित हो तो ऐसी स्थिति में सर्वोच्च न्यायालय में आधिकारिक रूप से अपील की जा सकेगी ।

अनुच्छेद 65– विशेष अपील विषयक :–

यह अनुच्छेद सर्वोच्च न्यायालय में विशेष अपील से संबंधित है ।

अनुच्छेद 66– न्यायालय के निमय :–

नेशनल ऐसेम्बली द्वारा निर्मित कानूनों के प्रावधानों के अनुरूप सर्वोच्च न्यायालय समय–समय पर दलाई लामा की अनुमति से न्यायालय के व्यवहार तथा प्रक्रिया को सामान्य रूप से विनियमित करने के उद्देश्य से नियमों का निर्माण करेगा ।

अनुच्छेद 67– सर्वोच्च न्यायालय से परामर्श का अधिकार :–

यदि किसी समय दलाई लामा को ऐसा प्रतीत हो कि कानून से संबंधित प्रश्न या सार्वजनिक महत्व का कोई तथ्य उत्पन्न हो गया है या होने वाला है और उस पर सर्वोच्च न्यायालय का मत प्राप्त करना लाभदायक होगा तो वे उस प्रश्न को परामर्श के लिए सर्वोच्च न्यायालय को प्रेषित करेंगे और न्यायालय ऐसी सुनवाइयों के बाद जो उनके विचार में उपयुक्त हो उस मत से दलाई लामा को अवगत करायेगा ।

अध्याय अष्टम

प्रान्तीय सरकार विषयक

अनुच्छेद 68– राज्य के प्रान्त :–

राज्य का सम्पूर्ण क्षेत्र कई प्रान्तों में विभाजित किया जायेगा । प्रत्येक प्रान्त की सीमा दलाई लामा की सहमति से नेशनल ऐसेम्बली द्वारा निर्धारित की जायेगा ।

अनुच्छेद 69– प्रान्तीय गवर्नर :–

1. प्रत्येक राज्य में दलाई लामा एक मुख्य प्रशासनिक अधिकारी (गवर्नर) नियुक्त करेंगे ।
2. प्रत्येक राज्य में एक डिप्टी गवर्नर भी होगा जो कि प्रत्येक राज्य की पृथक रीजनल काउंसिल द्वारा चयनित तथा दलाई लामा द्वारा स्वीकृत होगा ।
3. गवर्नर तथा डिप्टी गवर्नर दलाई लामा द्वारा नेशनल ऐसेम्बली के परामर्श से निर्धारित समयावधि तक अपने पद पर रहेगे ।
4. गवर्नर की अनुपस्थिति, बीमारी या अन्य किसी अयोग्यता की स्थिति में डिप्टी गवर्नर द्वारा गवर्नर के कर्तव्यों व अधिकारों का निर्वहन किया जायेगा ।
5. गवर्नर तथा डिप्टी गवर्नर का वेतन नेशनल ऐसेम्बली द्वारा निर्धारित किया जायेगा उनके कार्यकाल मे उनके वेतन में कमी नही की जा सकती ।

अनुच्छेद 70– रीजनल काउंसिल का निर्माण :–

1. प्रत्येक प्रांत में एक रीजनल काउंसिल होगी जिसकी सदस्य संख्या दलाई लामा द्वारा नेशनल ऐसेम्बली के परामर्श से निर्धारितं की जायेगी ।
2. रीजनल काउंसिल के लिए सदस्य उन्ही मतदाताओं द्वारा निर्वाचित किए जायेगे जो कि नेशनल ऐसेम्बली के लिए चुनावों मे मतदाता हों ।
3. रीजनल काउंसिल के लिए चुनाव का समय गवर्नर मंत्री परिषद के परामर्श से तय करेंगे ।
4. प्रत्येक रीजनल काउंसिल अपनी प्रथम बैठक से तीन साल तक चलेगी उसे भंग नही किया जायेगा ।

अनुच्छेद 71– रीजनल काउंसिल के सत्र :–

प्रत्येक प्रान्त का गवर्नर नोटिफिकेशन के द्वारा रीजनल काउंसिल के लिए सत्रों का निर्धारण करेगा । यह प्रावधान है कि रीजनल काउंसिल के अधिवेशन एक वर्ष में तीन बार इस प्रकार

आयोजित किए जायेंगे कि एक सत्र की अंतिम बैठक व दूसरे सत्र की प्रथम बैठक के बीच चार माह से अधिक का अंतराल न हो ।

अनुच्छेद 72– रीजनल काउंसिल का अध्यक्ष :–

रीजनल काउंसिल की बैठकों की अध्यक्षता गवर्नर या उसकी अनुपस्थिति मे डिप्टी गवर्नर करेगा। इसकी कार्यवाही के संचालन के नियम गवर्नर मंत्री परिषद के साथ परामर्श करके बनायेगा । ये नियम नेशनल ऐसेम्बली द्वारा इस संदर्भ में निर्मित नियमों के अनुरूप होंगें ।

अनुच्छेद 73– रीजनल काउंसिल की शक्तियाँ :–

इस संविधान के प्रावधानों तथा नेशनल ऐसेम्बली द्वारा निर्मित कानूनों के अनुसार रीजनल काउंसिल अधोलिखित विषयों से संबंधित मुद्दों के संदर्भ में विनियम निर्माण कर सकती है ।

(अ) सार्वजनिक स्वास्थ्य और स्वच्छता जिसमें अस्पतालों तथा परोपकारी संस्थाओं की स्थापना, देखभाल तथा प्रबंध भी शामिल होगा ।

(ब) प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा के संबंध में नियम जो नेशनल ऐसेम्बली द्वारा निर्मित नियमों के अनुरूप हों ।

(स) प्रान्त के अन्तर्गत आने वाले स्थानीय कार्य तथा उद्यम ।

(द) सड़कें, पुल तथा अन्य निर्माण कार्य ।

(च) सामाजिक कल्याण तथा सार्वजनिक सहायता ।

(छ) सिंचाई, कृषि, पशुपालन तथा लघु उद्योग धंधे ।

(ज) इस धारा के अंतर्गत निर्मित नियमों को लागू करने के लिए दण्ड के रूप में जुर्माने का निर्धारण ।

(झ) उन सभी विषयों के संबंध में कानून बनाना जिसके लिए नेशनल ऐसेम्बली अपनी शक्तियाँ रीजनल कांउसिल को सौंप दे । रीजनल काउंसिल द्वारा निर्मित नियमों तथा नेशनल ऐसेम्बली द्वारा निर्मित कानूनों में विरोधाभास की स्थिति में नेशनल ऐसेम्बली का कानून मान्य होगा ।

अनुच्छेद 74– रिपोर्ट प्रेषण :–

प्रत्येक वर्ष के अन्त में प्रान्त का गवर्नर Kashag को रीजनल काउंसिल द्वारा किए गए कार्य के संदर्भ में एक विस्तृत रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा । और इस प्रकार की समस्त रिपोर्टें नेशनल ऐसेम्बली के सम्मुख प्रस्तुत की जायेंगी ।

अध्याय नवम्

पुनर्संगठन विषयक

अनुच्छेद 75– सार्वजनिक विभागों का पुनर्संगठन :–

इस संविधान के लागू होने के बाद जितनी शीघ्रता से संभव हो दलाई लामा एक सार्वजनिक सेवा आयोग की नियुक्ति करेंगे जो कि सार्वजनिक सेवा के विभागों में आवश्यकता अनुसार पुनर्संगठन तथा पुनर्समायोजन के लिए सिफारिशें करेगा ।

अनुच्छेद 76– सार्वजनिक (लोक) सेवा आयोग :–

इस संविधान के प्रावधानों के लागू होने के बाद दलाई लामा एक स्थाई सार्वजनिक सेवा आयोग नियुक्त करेंगे । इस आयोग को सार्वजनिक अधिकारियों की नियुक्ति, अनुशासन, सेवा निवृत्ति तथा सेवा निवृत्ति भत्तों के विषय में ऐसे अधिकार व शक्तियाँ प्राप्त होंगी जो दलाई लामा नेशनल ऐसेम्बली से परामर्श करके निर्धारित करेंगे ।

अध्याय दशम्

(संविधान संशोधन विषयक)

अनुच्छेद 77– संवैधानिक संशोधन की प्रक्रिया :–

1. इस संविधान में या इसके किसी भी प्रावधान मे संशोधन या परिवर्तन किसी भी ऐसे एक्ट द्वारा किया जा सकता है जो नेशनल ऐसेम्बली के कुल सदस्यों के 2/3 बहुमत से पारित किया गया हो तथा दलाई लामा द्वारा स्वीकृति प्राप्त हो ।

2. दलाई लामा निर्दिष्ट कर सकते है कि ऐसा कोई भी संशोधन रेफरेण्डम के लिए भेजा जाए तथा इस प्रकार का कोई भी संशोधन तब तक क्रियाशील नहीं होगा जब तक यह नेशनल ऐसेम्बली के चुनावों के लिए मतदान करने वाले व्यक्तियों के 2/3 बहुमत द्वारा पुष्ट नहीं कर दिया जाता ।

3. इस धारा में उल्लेखित कोई भी विचार नेशनल ऐसेम्बली को ऐसी कोई शक्ति या प्राधिकार नहीं देता जो दलाई लामा के राज्य के आध्यात्मिक प्रमुख के रूप में स्तर तथा प्राधिकार को किसी भी प्रकार से प्रभावित करती हो ।

घटनाओं का कालक्रमानुसार संक्षिप्त प्रस्तुतीकरण

१२७ ई० पू०	यारलंग राजतन्त्र की स्थापना के साथ तिब्बती राज्य का आरम्भ ।
७ वीं शताब्दी	शासक सोंग्त्सेन गांपो के अधीन तिब्बत का एकीकरण ।
८२१-८२३	चीन एवं तिब्बत के मध्य संप्रभुता (दोनो राज्यों की) विषयक शांति की औपचारिक संधि ।
१३ वीं शताब्दी	तिब्बत - मंगोल समझौता (मंगोल शासकों के साथ साक्य संप्रदाय का तिब्बत पर अनाक्रमण संबंधी समझौता)
१३५० ई०	यूआन शासकों से तिब्बत के राजनीतिक संबंधों की समाप्ति ।
१३८६-१६४४ ई०	चीनी मिंग शासकों के साथ तिब्बत की संबंधहीनता की स्थिति ।
१६३६ ई०	मांचू शासकों के साथ दलाई लामा पंचंम के "संरक्षक-संरक्षित" संबंधो का आरम्भ ।
१६४२ ई०	पंचम दलाई लामा द्वारा 'ईश्वरीय शासक' के रुप में तिब्बत का शासन आरम्भ । दलाई लामा एहिक एवं आध्यात्मिक सत्ता के सर्वोच्च स्रोत के रुप में मान्य एवं प्रतिष्ठित ।
१६४४ ई०	मान्चू शासकों द्वारा चिंग राजतन्त्र की स्थापना के साथ चीन की विजय ।
१६८१ ई०	तिब्बत - बुशांहर संधि ।
१६८३ ई०	तिब्बत - लद्दाख संधि ।
१७१७ ई०	तिब्बत पर मंगोल आक्रमण ।
१७२० ई०	माँचू शासकों की सहायता से जूँगार मंगोलों की पराजय ।
१७२८ ई०	अम्बान के रुप में ल्हासा में दो माँचू अधिकारियों की नियुक्ति ।

१७५१ ई०	तिब्बतियों को शान्ति - व्यवस्था स्थापित करने में सहयोग देने के लिए तिब्बत में साम्राज्यिक सेनाओं का प्रवेश ।
१७६२ ई०	नेपाली - गोरखा सेनाओं का तिब्बत से पलायन, उनकी पराजय तिब्बत - नेपाल संधि ।
१७६३ ई०	माँचू शासक को दलाई लामा की मंत्रि परिषद् को परामर्श देने का अधिकार ।
१८४१ ई०	तिब्बत - लद्दाख संधि ।
१८४२ ई०	तिब्बत - डोंगरा शांति संधि ।
१८५६ ई०	तिब्बत - नेपाल संधि ।
१८७६ ई०	ब्रिटेन एवं चीन के मध्य चाफू समझौता ।
जुलाई १८८६ ई०	तिब्बत - बर्मा संधि ।
मार्च १८८० ई०	ब्रिटेन एवं चीन के मध्य सिक्किम व तिब्बत पर समझौता ।
१६०३ ई०	ब्रिटेन द्वारा तिब्बत पर आक्रमण ।
७ सितम्वर १६०४ ई०	ल्हासा में हस्ताक्षरित ब्रिटेन एवं तिब्बत के मध्य ल्हासा समझौता ।
नवंबर १६०४ ई०	शिमला रेटीफिकेशन ।
अप्रैल १६०६ ई०	ब्रिटेन एवं चीन के मध्य तिब्बत के परिप्रेक्ष्य में पीकिंग में समझौता।
जुलाई १६०६ ई०	लन्दन रेटीफिकेशन, चीन द्वारा १६०४ के ल्हासा कन्वेंशन को मान्यता ।
अगस्त १६०७ ई०	पर्शिया, तिब्बत तथा अफगनिस्तान के सन्दर्भ में ब्रिटेन तथा रुस के मध्य पीटरबर्ग समझौता ।
१६१० ई०	सिचुआन से साम्राज्यवादी सेना द्वारा तिब्बत पर आक्रमण । दलाई लामा का सरकार सहित ब्रिटिश भारत में पलायन व शरण प्राप्ति ।
१६११ ई०	चीन में क्रांति, तिब्बत में साम्राज्यवादी सेना द्वारा तिब्बतियों पर आक्रमण ।

१९१२ ई०	चीनी सेनाओं का आत्मसमर्पण तथा भारत के रास्ते पुनः चीन वापसी ।
१९१२ ई०	तेरहवें दलाई लामा की तिब्बत वापसी एवं स्वतंत्रता की घोषणा ।
१९१३ ई०	माँचू सेनाओं एवं अधिकारियों की तिब्बत से वापसी एवं माँचू शासकों से तिब्बत के संबंधों की समाप्ति ।
जनवरी १९१३ ई०	तिब्बत - मंगोलिया संधि ।
१९१३ ई०	ब्रिटेन, तिब्बत तथा चीन की त्रिपक्षीय शिमला कांफ्रेंस ।
मार्च १९१४ ई०	भारत-तिब्बत सीमा संधि दिल्ली में हस्ताक्षरित ।
१९१४ ई०	तिब्बत, ब्रिटेन एवं चीन के मध्य शिमला समझौता संपन्न ।
दिसंबर १९३३	तेरहवें दलाई लामा थुपटेन ग्यात्सो की मृत्यु ।
१९३५ ई०	चीन सरकार के एक प्रतिनिधि को ल्हासा में रहने की इजाजत ।
६जुलाई १९३५ई०	चौदहवें दलाई लामा का जन्म ।
१९४० ई०	चौदहवें दलाई लामा पोटाला महल लाए गए । अधिकारिक तौर पर तिब्बत के आध्यात्मिक नेता घोषित ।
१९४३ ई०	तिब्बत सरकार द्वारा विदेशी संबंधों का ब्यूरो स्थापित ।
१९४८ ई०	तिब्बती सरकार के व्यापारिक प्रतिनिधिमंडल द्वारा भारत, अमेरीका, फ्रांस, इटली तथा ब्रिटेन आदि देशों की तिब्बती पासपोर्ट के आधार पर यात्रा ।
७अक्टूबर १९४९-५० ई०	चीन सरकार के प्रतिनिधि का तिब्बत से निष्कासन तथा चीनी सेनाओं का तिब्बत क्षेत्र पर आक्रमण ।
२३ मई १९५१ ई०	सत्रह सूत्रीय समझौता हस्ताक्षरित ।
अप्रेल १९५४ ई०	भारत- बीजिंग पंचशील संधि सम्पन्न, भारत चीन के मध्य व्यापारिक समझौता, भारत द्वारा तिब्बत को चीनी क्षेत्र के रुप में मान्यता ।

२०सितंबर १९५६ई०	नेपाल - चीन के मध्य व्यापारिक समझौता। नेपाल द्वारा तिब्बत को चीन क्षेत्र के रुप में मान्यता।
१९५६ ई०	बुद्ध जयन्ती के अवसर पर दलाई लामा का भारत आगमन।
११मार्च १९५९ई०	दलाई लामा की मंत्रिपरिषद् द्वारा सत्रह सूत्रीय समझौते की घोषणा।
१६मार्च १९५९ई०	दलाई लामा का ल्हासा से पलायन।
१८मार्च १९५९ई०	अन्य द्वारा ल्हासा से पलायन।
२०मार्च १९५९ई०	ल्हासा पर बमबारी।
३१मार्च १९५९ई०	दलाई लामा का तिब्बत से पलायन।
१२अप्रैल १९५९ई०	बोमडिला आगमन।
१८अप्रैल १९५९ई०	बोमडिला से आगे यात्रा का प्रारंभ।
२४अप्रैल १९५९ई०	पं० नेहरु के साथ दलाई लामा की भेंट।
२०जून १९५९ई०	दलाई लामा द्वारा सत्रह सूत्रीय कार्यक्रम की घोषणा।
७सितंबर१९५९ई०	पं० नेहरु एवं इंदिरा जी के साथ दलाई लामा एवं उनके परिवारीजनों की भेंट।
२९अप्रैल१९६०ई०	मसूरी से आगे दलाई लामा की यात्रा प्रारंभ।
३०अप्रैल१९६०ई०	दलाई लामा धर्मशाला (हिमांचल प्रदेश) पहुँचे।
१९६२ई०	भारत पर चीनी आक्रमण।
अगस्त १९७९	प्रथम वस्तुस्थिति मिशन का तिब्बत प्रेषण, डेलीगेशन-डिप्लोमेसी का आरंभ।
जून १९८०ई०	द्वितीय एवं तृतीय प्रतिनिधिमण्डल का प्रेषण।
१९८६-८७ई०	तिब्बत में हिंसा, मानवाधिकार दमन एवं गिरफ्तारियों का काल।
सितंवर १९८७ई०	दलाई लामा का पंच बिन्दु शांति प्रस्ताव।
२७सितंवर१९८७ई०	तिब्बत में चीन विरोधी प्रदर्शन।
१अक्टूबर१९८७ई०	तिब्बत में वृहत स्तर का द्वितीय चीन विरोधी प्रदर्शन।
६अक्टूबर१९८७ई०	उपरोक्त श्रृंखला का तृतीय चीन विरोधी प्रदर्शन।

१६८८ई०	ड्रेपंग मेनेफेस्टो का निर्माण व वितरण ।
५मार्च १६८८ई०	ल्हासा में मोनलम दंगे ।
१५जून १६८८ ई०	दलाई लामा का स्ट्रासबर्ग प्रस्ताव ।
दिसंबर १६८८ई०	प्र० म० राजीव गांधी की चीन यात्रा।
१६८६ई०	दलाई लामा को शांति के लिए नोबेल पुरस्कार ।
मार्च १६८६ ई०	ल्हासा में मार्शल लॉ लागू ।
दिसंबर १६६१ई०	चीनी प्रधान मंत्री ली फंग की भारत यात्रा ।
१०अगस्त १६६३ई०	तिब्बत पर भारतीय नीति विशेषज्ञों का सम्मेलन ।
१६६६ई०	चीनी राष्ट्रपति जियांग जेमिन की भारत यात्रा ।
जून २००३ई०	भारतीय प्रधान मंत्री श्री अटल बिहारी बाजपेई की बीजिंग यात्रा ।

Tibet

LHASA CITY

SCALE 1 : 33 000

To Garu Nunnery
Sera Monastery
Sangyip Prison No 1
Sangyip Prison No 4
Sangyip Prison No 5
Drapchi Prison
Drepung Monastery
Nechung Monastery
Enlarged area
To Gurtsa Prison
People's Hospital
Potala Palace
Hotel Holiday Inn
Public Security Bureau
Ramoche Monastery
Jokhang Temple
Public Security Bureau
Norbulingka
TAR Government Offices
Police Headquarters
University of Tibet
To Ganden Monastery (40 km)
Drib Military Camp
To Shungseb Nunnery and Rato Monastery
Lhasa District Government Offices
Meru Dratsang
Ramoche Monastery
Gyume Dratsang
Public Security Bureau
Tsomonling
Mosque
Lhasa Government Offices
Barkhor
Jokhang Temple
Shide Dratsang
Police Station
Ani Tsangkhung
Police Station
Tengyeling
Deyki Shaslam
Tibetan Hospital
Jokhang Square
Mosque
Renmin Lu
Women's and Children's Hospital
Military Camp

© Atelier Golok, 1994

SINO-INDIAN BORDER DISPUTE
AREA UNDER CHINESE OCCUPATION SINCE 1962
AREA CEDED TO CHINA BY PAKISTAN
China
PoK
Gilgit
Line of Control
Aksai Chin
Muzaffarabad
Srinagar
Leh
Jammu & Kashmir
Poonch
Jammu
Pakistan
HIMACHAL
MCMOHON LINE
China
ARUNACHAL PRADESH
Kameng
Itanagar
BHUTAN
ASSAM
NAGALAND
WESTERN SECTOR
MIDDLE SECTOR
EASTERN SECTOR
CHINA
Pakistan
BARAHOTI
New Delhi
NEPAL
BHUTAN
INDIA
B'DESH
KBK
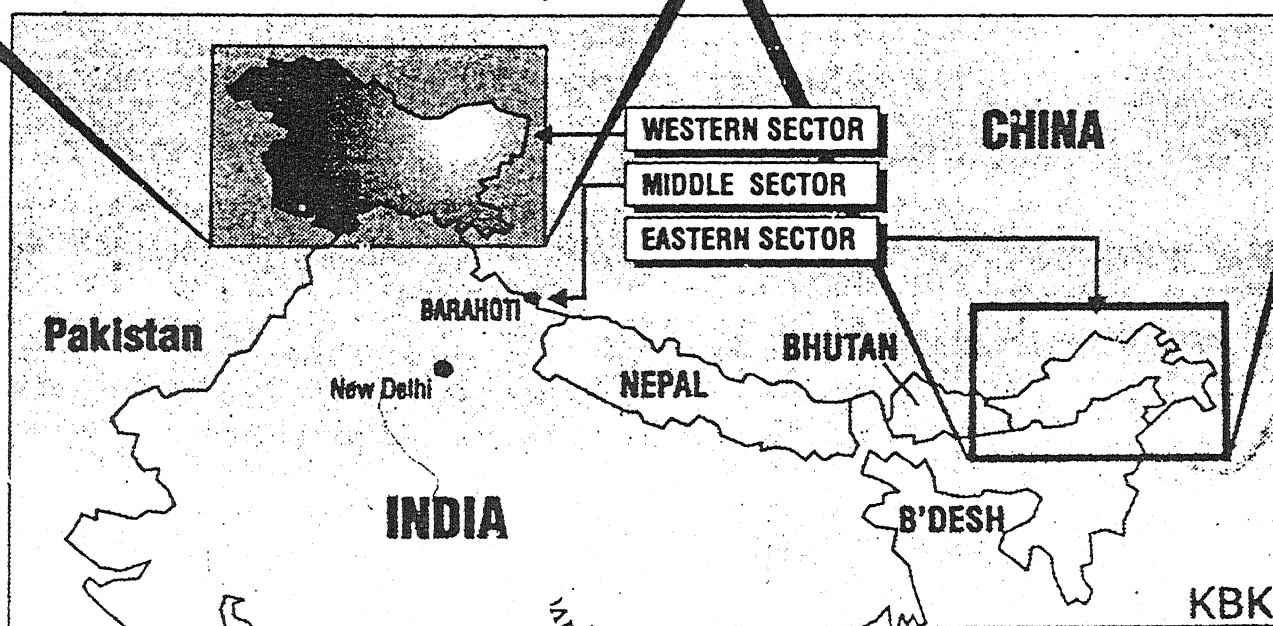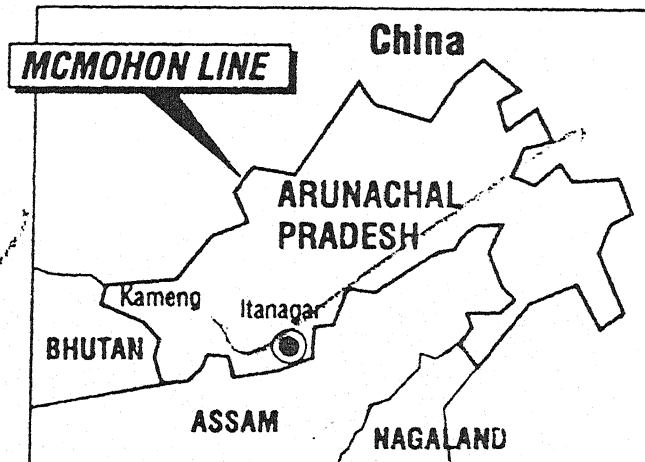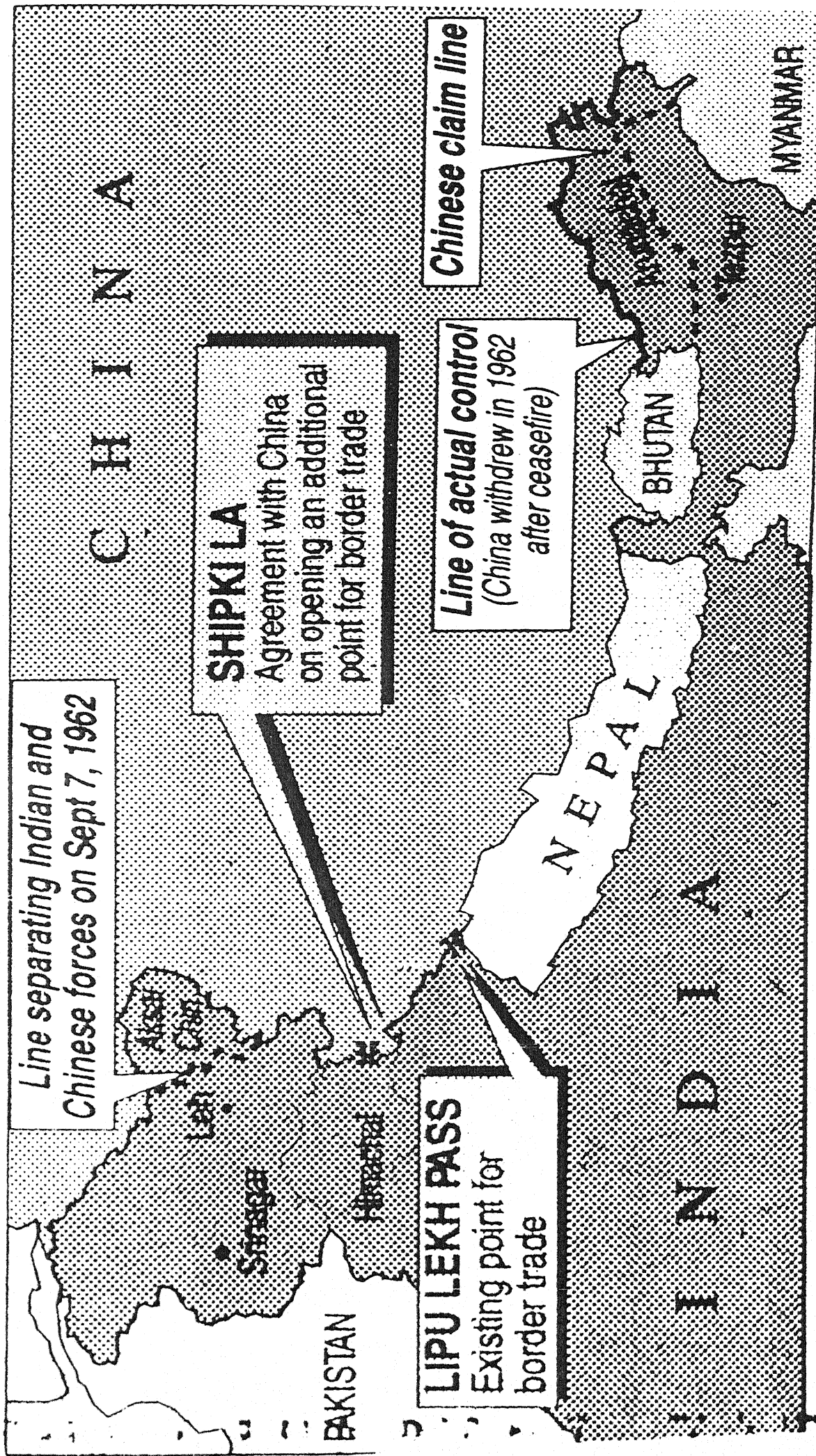
IE Graphics/B.K. SHARMA

BIBLIOGRAPHY

Books : -

1. Avedon, John F, 'An Interview with the Dalai Lama,' Littlebird Publication, New York, 1980.
2. Avedon, John F, 'In Exile from the Land of Snows,' Mechael Joseph Limited, Bedford Square, 1984.
3. Bai Nonfeng & Wang Xiaoqiang, 'The Poverty of Plenty, 'Angela Knox (Translation) Macmillan, London, 1991.
4. Bajpai, U.S., 'India and its Neighborhood, 'Lancer International in association with India International Centre, 1986.
5. Barnett, Robert and Akiner Shirin, 'Ed-Resistance and Reforms in Tibet', Motilal Banarasidas Publishers Pvt. Ltd., New Delhi, 1996.
6. Bell, Sir Charles, 'Tibet-Past and Present', Book Faith India, 1998.
7. Bell, Sir Charles' 'K.C.I.E., C.M.G., Portrait of the Dalai Lama, Collins, London, 1946.
8. Brugger, Bill. (Ed.), 'China-The Impact of Cultural Revolution', Croom-helm, London, 1978.
9. Bullard, Monte, 'China's Political, Military Evolution, Boulder co., west view press, 1995.
10. Chakravorty, P.C., 'India China's Relations, Pharma K.L. Mukhopadhyay, Calcutta, 1961.
11. Chakravorty, P.C., 'India's China Policy', Indian University press, 1962.
12. Chitkara, M.G., 'Tibet-A Reality,' Asish Publication, New Delhi, 1994.
13. Chopra , P.N., 'Social, Cultural and Political History of Tibet', Criterion Publications, New Delhi, 1989.
14. Daliv, J.P., 'Himalayan Blunder, 'Thacker & Company Ltd., Bombay, 1969.

15. 'Dharamsala and Beijing- Inintiatives & Correspondence- 1981-1993', Department of Information and International Relations, Central-Tibetan Administration, Dharamsala.

16. Dutt, V.P., 'China and the World', Prgaeger Publications, New York, 1966.

17. Dutt, V.P., 'India and China'.

18. Fitzgerald, C.P., 'The Chinese View of their Place in World' Oxford University Press, London, 1964.

19. Gellegner Ernest, 'Nations and Nationalism,' Oxford Basil, Backwill, 1983.

20. Gupta, Karunakar, 'Sino-Indian Relations', Minerva, Calcutta, 1987.

21. Gyatso Palden, 'Fire under the Snow', The Harvill Press, London, 1997.

22. Han Suyin, 'Lhasa – the open city : - 'A Journey to Tibet', Jonathan Cope, 1977.

23. Harries and Worden, (Ed.) 'China and the Third World', Croom Helm Ltd., Auburn House Publishing Company, 1986.

24. 'India, Tibet and China-An Agonising Reappraisal', Tibetan Parliamentry & Policy Research Centre', New Delhi, 1996.

25. Jain, Girilal. 'Panchsheel and After', Asia Publishing House, Bombay, 1960.

26. Karunakaran, K.P., (Ed) 'India in World Affairs'.

27. Kumar, Anand, 'Tibet A Source Book', Radiant Publishers, 1995.

28. Lama Dalai, 'Freedom in Exile', Autobiography of His Holiness, the Dalai Lama 14th.

29. Lampton, David. M., 'The Making of Chinese Foreign and Security Policy in the Era of Reforms :- 1978-2000, Stanford University Press, California, 2001.

30. Limye, Madhu, 'The Sino-Indian War', Himmat Jhaveri, Bombey, 1962.

31. Mackerras Colin, 'China-Impact of Revolution,' Longman, Australia Pvt. Ltd., 1976.

32. Macciochi, Maria Antonietta, 'Daily Life in Revolutionary China Review Press, New York, 1972.

33. Maxwell, N, 'India's China War', Jonathan Cope, London, 1970.

34. Mehra, Purshotam, 'The Macmohan Line and After, The Macmohan Compnay of Relia Ltd., 1974.

35. Menon, K.P.S., 'China Past and Present', Bhartiya Vidya Bhawan, Bombay, 1972.

36. Michad Brecher, 'Nehru-A Political Biography', Oxford University Press, 1969.

37. Mullik, B.N., 'Chinese Betrayal', Allied Publishers Pvt. LTd., 1971.

38. Pallis Marco, 'of Peaks and Lamas; London, Cassell, 1946.

39. Pannikar, K.M., 'In two China's, George Allens & Unwin Ltd., 1955.
40. People's Republic & China : Repression in Tbet; 1987-1992, London, Amnesty International, 1992.
41. Prasad, Shashi Bhasan, 'The China Factor in Indo-Nepalese Relation; Vohra Publication, Allahabad.
42. Ram Rahul, 'Major Perspective', Vikas Publishing House Pvt. Ltd., 1993.
43. Rechardson, H.E., 'Tibet and its History', Amen House, London, Oxford University Press, 1962.
44. Roy Denny, 'Chinese Foreign Relations', Macmillan Press Ltd., London, 1998.
45. Shankabpa, Tsepon W.D., 'Tibet-A Political History', New York, Potala Publication, 1984.
46. Sharma, Swarn Lata, 'Tibet- Self Determination in Politics Among Nations', Criterion Publication, New Delhi, 1988.
47. Shaw, Yu-Ming, 'Mainland china', West View Press, Colarado, 1986.
48. Shwartz, Ronald. P., 'Circle of Protest, Political Ritual In the Tibetan Uprising', Motial Banarsi Das Pvt. LTd., 1996.
49. Van Walts Van Praag, M.C., 'Tibet and the right to Self Determination; Information office H.H. the Dalai Lama, 1979.
50. Vertzberger, 'Misinterpretations in Foreign Policy Making, Westview Press, Boulder Colarado, 1989.
51. Van Eekelin, W.F., 'Indian Foreign Policy and the Border Dispute with china, The Hague: Martiness Nighoff, 1964.
52. Winnington, Aloin, 'Tibet-A Record of Jouney', Lawrance & Winshart Ltd., Londoan, 1957.
53. Wolf Gang-Van Erffa, 'Uncompromising Tibet', Tradition- Religion –Politics', English Edition, Paljor Publications, 1996.
54. Wu. A.K., 'China and the Soviet Union', London, Methuen, 1950.

Governmental & Official Documents :-

1. Anglo-Tibetan Trade Regulation, 1914.

2. Convention between Great Britain and Tibet-Signed at Lhasa, Sep 7, 1904 (British and Foreign State Papers, 1904-1905, Vol, XCVIII, D.P. 148-151, Signed also in the Chinese language. Confirmed, Subject to the modification contained in the declaration of November 11, 1904 annexed, by the convention with china of April 27, 1906.
3. Convention between Great Britain, china and Tibet, 1914.
4. Foreign Relation Authorization Act. of U.S.A., 1994-1995.
5. P.M. on Sino-Indian Relations in Parliament, Vol I, March 17, 1959-April 3, 1961, External Publicity Division, Ministry of External Affairs, Govt. of India, New Delhi.
6. P.M. on Sino-Indian Relations Vol I Part II, August 16, 1961-December 1962, External Publicity Division, Ministry of External Affairs, Govt. of India, New Delhi.
7. P.M. on Sino-Indian Relations, Press Conference, Vol II March 6, 1959-March 17, 1961 External Publicity Division, Ministry of External Affairs, Govt. of India, New Delhi.
8. White Paper No. 1, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.
9. White Paper No. 2, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.
10. White Paper No. 3, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.
11. White Paper No. 4, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.
12. White Paper No. 5, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.
13. White Paper No. 6, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.

14. White Paper No. 7, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.
15. White Paper No. 8, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.
16. White Paper No. 9, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.
17. White Paper No. 10, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.
18. White Paper No. 11, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.
19. White Paper No. 12, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.
20. White Paper No. 13, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.
21. White Paper No. 14, Notes, Memorandom and Letters Exchanged between the Govt. of India and China, Ministry of External Affairs, Govt. of India, Published by the Manager of Publication, Delhi.

22. Collected Statements, Interviews and Articles of His Holines & the Dalai Lama, Information office of His Holiness the Dalai Lama, Dharamshala, 1982.

23. Report of International Commission on of Jurist, 'Tibet Human Right and Rule of Law', Avenue de Chatelaine. Switgerland, March, 1998.

News Papers and Magzines

१. अदूरदर्शिता का दंड भोग रहे हैं, शंकर शरण, जनसत्ता, नई दिल्ली १० जुलाई, १९९९ ।
२. अटल ने चुनी नेहरु के गुलाब की महक, दैनिक भास्कर, भोपाल, २३ जून, २००३ ।
३. आई. टी. क्षेत्र में भारत-चीन बड़ी ताकत बन सकते हैं - बाजपेई, जनसत्ता, नई दिल्ली, २७ जून, २००३ ।
४. इतिहास को पीछे छोड़ कर रिश्ते बनाए, दैनिक भास्कर, भोपाल, २१ जून,२००३ ।
५. उत्साह में हकीकत को नजरअन्दाज करना घातक होगा, दैनिक जागरण, नई दिल्ली, १ दिसंबर, १९९९ ।
६. एक चुनौती है तिब्बत, जनसत्ता, नई दिल्ली, २ दिसंबर, १९९९ ।
७. एशिया की जरुरत भारत-चीन सहयोग, स्वतंत्र भारत, कानपुर, १२ नवंबर, १९९४ ।
८. क्या चीन से अनाक्रमण संधि जरुरी थी ? - राज किशोर, दैनिक टि ‸ब्यून, चंडीगढ, १३ दिसंबर, १९९९ ।
९. क्या प्रधानमंत्री निर्वासित तिब्बतियों को जानते हैं ? - मोहन सिंह, राष्ट्रीय सहारा, नई दिल्ली, ३ दिसंबर, १९९९ ।
१०. करमापा की प्रतिष्ठा से पूर्व दलाई लामा से अनुमति जरुरी, दैनिक भस्कर, भोपाल, २४ अप्रैल, २००० ।
११. करमापा को शरण, नवभारत टाइम्स, नई दिल्ली, ६ फरवरी २००१ ।
१२. काठमांडू में भारत-पाक का मिलन, दैनिक भास्कर, भोपाल, १४ जून, २००३ ।
१३. किसी भी देश की दादागीरी का विरोध करता रहेगा चीन, दैनिक जागरण, नई दिल्ली, ३ जूलाई, २००१ ।
१४. कितनी सही है तिब्बत के मामले में भारत की तटस्थता, राष्ट्रीय सहारा, लखनऊ, २५ अगस्त, १९९३ ।
१५. कैनकुन की विफलता वैश्विक हित में - बलबीर पुंज, दैनिक भास्कर, भोपाल, २४ सितम्बर, २००३ ।
१६. चीनी पत्रिका के विशेषांक में भारत को बस २० पंक्तियों में निपटा दिया, दैनिक जागरण, नई दिल्ली, २४ नवंबर, १९९९ ।
१७. चालाक चीन, भावुक भारत, तबाह तिब्बत, जनसत्ता, नई दिल्ली, २७ नवंबर, १९९९ ।
१८. चीन के राष्ट्रपति की भारत यात्रा, हिन्दुस्तान, पटना, २६ नवंबर, १९९९ ।
१९. चीनी राष्ट्रपति लेकर ही गए, देकर कुछ नही, करेन्ट न्यूज, नई दिल्ली, २६ नंवबर, १९९९ ।

२०. चीन के साथ एतिहासिक समझौता, नव भारत टाइम्स, नई दिल्ली, २ दिसंबर, १६६६ ।

२१. चीन की सदाशयता के पीछे का सच -, दैनिक जागरण, नई दिल्ली, ६ दिसंबर, १६६६ ।

२२. चीन-भारत संबंधो की कसौटी, दैनिक जागरण, नई दिल्ली, ७ दिसंबर, १६६६ ।

२३. चीनी नेता पर हमले की चेष्टा में आठ लोग न्यायिक हिरासत में, दैनिक जागरण, नई दिल्ली, १६ जनवरी, २००१ ।

२४. चीन के मुकाबले हमारी रक्षा तैयारी- मोहन सिंह, दैनिक जागरण, नई दिल्ली,१८ जून,२००१ ।

२५. चीन में ओलंपिक मेजबानी रोकने में तिब्बती संगठनो ने लगाई सिर और धड़ की बाजी - दैनिक जागरण, नई दिल्ली, १ जुलाई, २००१ ।

२६. चीन का परमाणु सिद्ध अधिकार और हम, राय सिंह, ११ जून, १६६२ ।

२७. तिब्बत हड़पने से बनी थी चीनी हमले की भूमिका, जनसत्ता, नई दिल्ली, २० अक्टूबर , १६६२ ।

२८. तिब्बत में परमाणु कचरा भारत के लिए खतरा, स्वतंत्र भारत, नई दिल्ली, १३ फरवरी, १६६३,

२६. तिब्बतियों को रखना आध्यात्मिक दायित्व, हिन्दुस्तान, नई दिल्ली, ३० नवंबर, १६६६ ।

३०. तिब्बत में क्यों, नवभारत टाइम्स, नई दिल्ली, २१ अप्रैल, १६६३ ।

३१. तिब्बत के बारे में पुराने फेसलों की समीक्षा हो, जनसत्ता, नई दिल्ली, ८ जून, १६६३ ।

३२. तिब्बत के साथ विश्वासघात, आर. के. करंजिया, ब्लिट्ज, मुंबई, २५ मार्च, १६६५ ।

३३. तिब्बत के भविष्य को लेकर आशान्वित है दलाई लामा, दैनिक जागरण, ५ अप्रैल ।

३४. तिब्बत में अस्थिरता के लिए दलाई लामा दोषी : चीन, दैनिक जागरण, नई दिल्ली, १८ मई, २००१ ।

३५. तिब्बत के विवादास्पद मुद्दे पर चीन व दलाई लामा समर्थको के बीच फिल्मी जंग, 'आज', ११ मार्च, १६६८ ।

३६. तिब्बत समस्या का समाधान - रामसुजान अमर ।

३७. ताइवान के विलय को कोई रोक नही सकता : चीन, दैनिक जागरण, २६ अप्रैल, २००१ ।

३८. ताइवान के लघु उद्योग संगठन के साथ सी. आई. आई. का करार, जागरण ब्यूरा, १५ जनवरी, २००२ ।

३६. दलाई लामा पर रोक अनुचित, जे. वी. जी. टाइम्स, नई दिल्ली, १७ दिसंबर, १६६६ ।

४०. दलाई लामा की आज से शुरु ताईबान यात्रा पर चीन को एतराज, दैनिक जागरण, ३१ मार्च, २००१ ।

४१. दलाई लामा ने कुंभ में दिया विश्व शांति का संदेश, अमरनाथ झा ।

४२. दलाई लामा तिब्बत की प्रभुसत्ता स्वयं देखने के इच्छुक ।

४३. दलाई लामा से ननों के खिलाफ बने नियमों को खत्म करने की अपील, दैनिक जागरण, नई दिल्ली, ३१ मार्च, २००१ ।

४४. दलाई लामा ने राष्ट्रपति बुश से मुलाकात की, दैनिक जागरण, कानपुर, २३ मई, १९९५ ।

४५. दक्षिण-पूर्व एशिया पर चीन की छाया, स्वतंत्र भारत, कानपूर, ६ जनवरी, १९९५ ।

४६. फायरिंग के बाद ताज होटल छावनी में तब्दील, दैनिक जागरण, नई दिल्ली, १५ जनवरी, २००१ ।

४७. बहुत दूर नहीं है सिक्किम के मामले में सफलता : अटल, दैनिक भास्कर, भोपाल, २८ जून, २००३ ।

४८. बाजपेई की यात्रा के दौरान उठ सकता है सीमा विवाद का मुद्दा, जनसत्ता, भोपाल, २३ जून, २००३ ।

४९. भारत चीन रिश्तों पर राय अलग-अलग, जनसत्ता, नई दिल्ली, १४ दिसंबर, १९९९ ।

५०. भारत की चीन के प्रति विदेश नीति ठीक नहीं- जेठमलानी, जनसत्ता, नई दिल्ली, ११ अगस्त, १९९९ ।

५१. भारत-चीन संबंध पर अतीत की छाया का असर, करेण्टन्यूज, नई दिल्ली,१२ दिसंबर, १९९९।

५२. भारत-चीनः यह अनसुलझा विवाद क्या है ? दैनिक भास्कर, इन्दौर, ७ जून, १९९७ ।

५३. भारत-चीन शीघ्र सीमा विवाद हल करेंगे, दैनिक जागरण, नई दिल्ली, १६ जनवरी, २००१ ।

५४. भारत-चीन मित्रता की शर्ते - रक्षत पुरी ।

५५. भारत-चीन बन सकते हैं आई. टी. की बड़ी ताकत, दैनिक भास्कर, भोपाल,२७ जून,२००३ ।

५६. भारत अपनी धरती का इस्तेमाल नहीं होने दे : चीन, दैनिक जागरण, नई दिल्ली, ७ फरवरी, २००१ ।

५७. भारत और चीन पश्चिमी खतरे को पहचाने, जवाहर लाल कौल, २४ सितम्बर, १९९१ ।

५८. भारत और चीन का निकट संपर्क बनाए रखना जरुरी, - बाजपेई, जनसत्ता, नई दिल्ली, २३ जून, २००३ ।

५९. भारत मे तिब्बतियों को चीन विरोधी गतिविधियाँ नही करने दी जाएंगी - जनसत्ता, नई दिल्ली, २५ जून, २००३ ।

६०. भारत-चीन के बीच कुछ गाँठे सुलझी, जनसत्ता, नई दिल्ली, २४ जून, २००३ ।

६१. राव की चीन यात्रा कितनी महत्वपूर्ण- बृजेशराकेश, अमर उजाला, कानपुर, ६सितंबर, १९९३ ।

६२. सिक्किम को ले कर कोई संदेह नही, जनसत्ता, नई दिल्ली, २८ जून २००३ ।

६३. संबंधो को सुधारने चीन पहुँचे बाजपेई, जनसत्ता, नई दिल्ली, २३ जून, २००३ ।

६४. सहयोग की असीमित संभावनाएं, अमर उजाला, कानपुर, ६ सितम्बर, १९९३ ।

६५. स्वतन्त्र तिब्बत की माँग छोड़ें तो दलाई लामा की वापसी संभव: चीन, दैनिक जागरण, नई दिल्ली, ४ अप्रैल, २००० ।

६६. स्वतन्त्र देश में शरणार्थी मौत भी बेहतर - रिन्पोचे सामडांग, जनसत्ता ।

---

67. Avoidance is no Policy / Amrita Abraham, Indian Express, 28 November, 1996.

68. Another Step Forward, The Hindustan Times, 2 November, 1992.

69. Asian Giants Meet, By D. Sen, on Jiang Zemins's visit, 29 November, 1996.

70. Big Brother Comes Calling.

71. Border remains Fuzzy, Decan Herald, Banglore, 8 December, 1996.

72. Cautiously Optimistic, By K. Natwar Singh, Decan Herald, Banglore, 8 December, 1996.

73. China is the Progenitor of Third World-war, By Avinash Shirodkar, Daily News, Shillong, 10 May 1997.

74. China Wing Pak Spies to Test Ground in N-E ? By Man Mohan, The Hindustan Times, New Delhi, 7 May, 1997.

75. Concern over chinese Intrusion, The Hindustan Times, New Delhi, 14 March, 1997.

76. China Syndrome, Times of India, New Delhi, 7 August, 1997.

77. China's diplomacy of 'equidistance' – by Batuk Vora.

78. China wants to dominate neighbours, 24 November, 1995.

79. China Changes Stance- By T. Karki Hussain, 28 February, 1994.

80. Dalai Lama Cools Passions, Treads Middle Path of Kashmir, Hindustan Times, New Delhi, 7 August, 2001.

81. Deng Xiaoping's role in 'Liberating' Tibet, -By Shankar Sharan, The Hindustna Times, New Delhi, 4 March, 1997.

82. Diplomatic Dinosaurs Left Behind in a Changingworld, By M. D. Nalapat, The Times of India, New Delhi, 4 March, 1995.

83. Diplomacy over MC Mohan Line, By Shankar Sharma, The Hindustan Times, New Delhi, 1 June, 1997.

84. Dialogue of the deaf, Indian Express, New Delhi, 29 Novemeber, 1996.

85. Displaying his Finest China, By Sunanda. K. Dutta. Ray, The Telegraph, Calcutta, 7 December, 1996.

86. Enter the Dragon China will til the Balance of Power, By K. Subrahmanyam, 17 August, 1995.

87. Erect great walls, By Anand. K. Sahay, The Hindustan Times, New Delhi, 23 June, 2000.

88. From its earlier tying down of India, China enters a phase of Pramatic diplomacy, By Saba Nagvi Bhaumik, Outlook, 7 July, 2003.

89. Friends with the Dragon, By C.V. Rangnathan, outlook, 30 June, 2003.

90. Getting real on Tibet, The Indian Express, New Delhi, 3 December, 1997.

91. Hole in the Roof, By Sheela Reddy, outlook, 7 July, 2003.

92. Impact of Dalai Lama's Taiwan Visit, By P. Stobdan, The Hindustan Times, 8 April, 1997.

93. India-China relations-I, By- Sujit Dutta, The Hindu, New Delhi, 27 Novemeber, 1996.

94. India-china Relations-II, By Sajit Dutta, The Hindu, New Delhi, 28 November, 1996.

95. India and China : Calm Surface, Troubled Waters-By Brahma Chellaney, The Asian Age, New Delhi, 29 November, 1996.

96. Indian's Concern over Chinese intrusions- By Manash Ghosh, The Statesman, New Delhi, 4 August, 1997.

97. India-China-Inch Towards Friendship, By A.S. Abraham, 1 september, 1995.

98. India's China Policy- By Shankar Sharan, 15 May, 1996.

99. India-China Economic Ties- By Arvind Bhandari, 17 December, 1996.

100. Indo-China Agreements, The Asian Age, New Delhi, 30 November, 1996.

101. Is the Karmapa- a Security risk ? By Bisheshwar Mishra, The Times of India.

102. Jiang Zemin Comes calling, Talking Turkey to the Dragon, By K. Subramanyam, The Times of India, New Delhi, 21 November, 1996.

103. Must we fall prey to the Dragon's Machinations : By- Brahm Chellaney, The Pioneer, New Delhi, 4 December, 1996.

104. No Room for Optimism, By- A.P. Venkateswaram,Decan Herald, Bangalore, 8 December, 1996.

105. Narashimha Rao's Chinese over tune , 15 September, 1993.

106. Readjusting borders with Russia, By P. Stobdan, 7 May 1996.

107. Read This in Mandarin, By V. Sudarshan, outlook, 30 June, 2003.

108. Securing the Future with China, By Rahul Bedi, Indian Express, New Delhi, 28 November, 1996.

109. Shanghaied on the high seas, By – Amitabh Mattoo, The Telegraph, Culcutta, 2 December, 1996.

110. Sino-Indian Border Dispute – I , By K. Sundarji, The Hindu, 6 August, 1996.

111. Sino-Indian Border Dispute-II, By K. Sundarji, The Hindu, New Delhi, 7 August, 1996.

112. Sino-Indian Detente 'a Lesson for Pak' – Islambad, 14 November, 1996.

113. South Asia Can replace China in time- By Renuka Puri, The Indian Express, New Delhi, 5 April, 1998.

114. The conflict of 1962- , By S.K. Bhutani, Indian Express, New Delhi, 21 October, 1995.

115. The Dalai Lama's Mistake, Hindustan Times, New Delhi, 7 August, 2001.

116. The Dragon's Chicanery behind the Smile, The Pioneer, New Delhi, 23 October, 1996.

117. The Ghost of 1962, By J.N. Dixit, outlook, New Delhi, 18 December, 1996.

118. The Sweet'n Sour Chimney Broth, By Arindoam Mukherjee, outlook, New Dlhi, 30 June, 2003.

119. When The Dragon Smiles, By Gen Ashok Mehta, The Pioneer, New Delhi, 28 November, 1996.

120. Why does play the European Card ? With Respect, Yout'd humbly ..., By Rakshat Puri, The Hindustan Times, New Delhi, 8 March, 1997.

121. Working for a Viable Dialogue with China, By Himmat singh Gill, The Tribune, Chandigarh, 14 March, 1997.